बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 192

ई-कचरे की पहेली

इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं के निर्माताओं ने इलेक्ट्रिक और इलेक्ट्रॉनिक कचरे के पुनर्चक्रण (रीसाइक्लिंग) और निपटान के लिए न्यूनतम मूल्य निर्धारित करने वाले केंद्र सरकार के नवीनतम मसौदा दिशानिर्देशों के खिलाफ जो शिकायतें की हैं वे एक ऐसे क्षेत्र में अव्यावहारिक ढंग से नियम थोपे जाने की ओर संकेत करती हैं जिसे तत्काल अनौपचारिक क्षेत्र से संगठित क्षेत्र में बदलने की जरूरत है।

उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिकी के निर्माताओं का आरोप है कि मसौदा दिशानिर्देश में पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के समक्ष उनके प्रतिनिधित्व की अनदेखी कर दी गई है।

नियमों के कारण उस लागत में भारी इजाफा हुआ है जो उत्पादकों को रीसाइकल करने वालों को ई-कचरे को रीसाइकल करने की अच्छी खासी कीमत चुकानी पड़ती है। उदाहरण के लिए धातुओं को रीसाइकल करने की कीमत बढ़कर 80 रुपये प्रति किलो हो गई है जबकि उत्पादक अनुबंध के मुताबिक रीसाइकल करने वालों को प्रति किलो छह से 25 रुपये तक का भुगतान करते हैं।

उत्पादकों को इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय का समर्थन हासिल है और उसने अपना नजरिया हाल ही में सभी पक्षों की एक बैठक में प्रस्तुत किया। ये मसौदा नियम बताते हैं कि सरकार 2011 से ही ई-कचरे से जुड़ी प्रमुख दिक्कतों को निपटा पाने में नाकाम रही है। उसी साल ई-कचरा प्रबंधन के नियम बनाए गए थे।

भारत दक्षिण एशिया में दुनिया के सबसे अधिक ई-कचरा उत्पन्न करने वाले देशों में शामिल है और यह मोबाइल फोन, लैपटॉप, डेस्कटॉप और अन्य उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक्स उपकरणों से हर वर्ष 16 लाख टन कचरा उत्पन्न करता है। इसमें से करीब 67 फीसदी कचरा ऐसा होता है जिसमें लेड, कैडमियम, मर्करी, आर्सेनिक, एस्बेस्टॉस सहित तमाम नुकसानदायक तत्त्व शामिल होते हैं जो इस कचरे के साथ जमीन में मिल जाते हैं और न केवल आम लोगों बल्कि वनस्पतियों के लिए भी स्वास्थ्य तथा पर्यावरण संबंधी खतरे उत्पन्न करते हैं। इस मसले का दूसरा पहलू यह है कि ई-कचरे को रीसाइकल करने का 90 फीसदी काम असंगठित क्षेत्र के लोगों द्वारा किया जाता है जो असुरक्षित हालात में अंजाम दिए जाते हैं और बच्चों से भी यह काम कराया जाता है। वर्ष 2016 में पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने इस समस्या को हल करने के लिए अधिक ढांचागत ई-कचरा प्रबंधन नियम प्रस्तुत किए जिन्होंने इस नियमों के दायरे में आने वाले उत्पादों की संख्या भी बढ़ाई और इनका निपटान करने वालों, विनिर्माताओं और रीसाइकल करने वालों की भूमिकाएं और कर्तव्य भी तय किए। उन्होंने विस्तारित उत्पादक जवाबदेही (ईपीआर) तय की जिसके तहत उत्पादकों को कहा गया कि वे ईपीआर के बदले अपने पूरी तरह उपयोग किए जा चुके उत्पाद वापस लें।

हालांकि इन नियमों के कारण संग्रहीत होने वाले ई-कचरे और उसके निपटान में काफी तेजी आई लेकिन उल्लंघन के लिए किसी दंडात्मक व्यवस्था के अभाव में यह आंकड़ा फिर भी कमजोर ही बना रहा। इन कमजोरियों को दूर करने की कोशिश में ई-कचरा प्रबंधन नियम 2022 ने इस कानून के तहत आने वाले उत्पादों के दायरे को विस्तृत किया और हर विनिर्माता और रीसाइकलर के लिए यह जरूरी किया कि वह केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा तैयार ऑनलाइन पोर्टल पर पंजीयन कराए। नियमों के मुताबिक ऐसे इलेक्ट्रॉनिक कलपुर्जों के निर्माण को सीमित किया गया जिनमें लेड और मर्करी जैसे जहरीले पदार्थ अधिकतम तय सीमा से अधिक थे। ऐसे कई कानून हैं जो पर्यावरण संरक्षण पर केंद्रित हैं लेकिन उनका प्रवर्तन मुश्किल रहा है। इसके अलावा असंगठित क्षेत्र जिस कीमत पर काम करता हैवह भी संगठित क्षेत्र के कारोबारियों को इस बाजार में प्रवेश करने से हतोत्साहित करती है। कुछ अनुमानों के अनुसार देश में ई-कचरे का उत्पादन सालाना 30 फीसदी की दर से बढ़ रहा है जबकि कुछ अन्य अनुमानों के मुताबिक समुचित रिसाइक्लिंग सुविधाएं विकसित करने के लिए जरूरी फंड के 20 फीसदी से भी कम का आवंटन किया जा रहा है। ई-कचरे के निपटान और रीसाइक्लिंग को अधिक व्यवहार्य बनाने के सार्थक उपाय आने के बाद भी इस कारोबार की प्रकृति बदलती नहीं दिखती। यह देखते हुए कि इस क्षेत्र में 10 लाख से अधिक लोग काम करते हैं, सरकार को केवल कॉरपोरेट मुनाफे से इतर आजीविका के प्रश्न को भी ध्यान में रखना चाहिए।

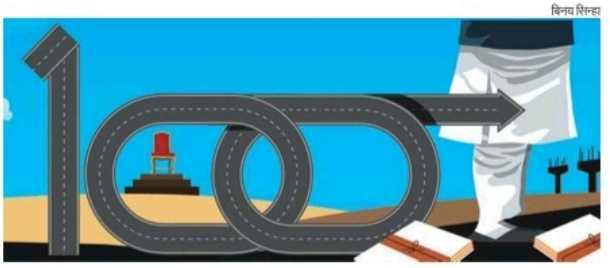

विनय सिन्हा

तीसरी मोदी सरकार के सौ दिन से निकले संकेत

2019 और 2024 में 100 दिन के शासन की उपलब्धियों के बीच के अंतर से यह समझा जा सकता है कि उन बातों में फर्क आया है, जिन पर शासन के दौरान सरकार का ध्यान रहता है। बता रहे हैं ए के भट्टाचार्य

गत 9 जून को सत्ता में वापसी करने वाली मोदी सरकार के तीसरे कार्यकाल के 100 दिन पिछले सप्ताह पूरे हो गए। इस बार 100 दिन के कामकाज का जश्न पिछली मोदी सरकार के 100 दिन के कार्यकाल के जश्न से कितना अलग था? जाहिर है इन आयोजनों में पहले 100 दिन की बड़ी उपलब्धियों की सूची तैयार की गई। अगर उनकी तुलना की जाए तो हमें पता चलेगा कि किस तरह शुरुआती दिनों में नीति निर्माण की प्रकृति और शासन का ध्यान मोदी के दूसरे और तीसरे कार्यकाल में पूरी तरह बदल गया है।

मोदी सरकार ने 2019 में जिन उपलब्धियों की सूची पेश की थी उनमें सबसे ऊपर थी 5 अगस्त को संविधान के अनुच्छेद 370 को निष्प्रभावी करने की घोषणा, जिसके बाद सभी भारतीय कानून जम्मू - कश्मीर में लागू हो गए और इस प्रकार राज्य का विशेष दर्जा समाप्त हो गया। छह अगस्त को उसे दो केंद्रशासित प्रदेशों में बदल दिया गया। इसके साथ ही भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ने आम चुनाव के बाद अपना एक अहम वादा पूरा किया।

जुलाई 2019 के अंत तक मोदी सरकार ने मुस्लिम महिला (विवाह अधिकार संरक्षण) विधेयक को मंजूरी दे दी। इसे आम भाषा में तीन तलाक विधेयक कहा जाता है, जिसने एक बार में मौखिक तलाक देने को अवैध और आपराधिक घोषित कर दिया। इससे पहले सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसे तलाक की प्रक्रिया को गैर कानूनी करार दिया था। इस सिलसिले में कानून बनाने के मोदी सरकार के निर्णय का कई लोगों ने विरोध किया, लेकिन यह भाजपा के चुनावी वादों में शामिल था और उसकी सरकार ने अपने दूसरे कार्यकाल के पहले 100 दिनों में ही इसे पूरा कर दिया।

2019 की उपलब्धियों में तीन अन्य विधायी बदलाव भी नजर आते हैं। एक अगस्त को ऋणशोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता (आईबीसी) में संशोधन पारित किए गए ताकि दिवालिया मामलों के निपटान की समय सीमा से जुड़े प्रावधान सख्त किए जा सकें, किसी भी समाधान योजना में लेनदारों का न्यूनतम भुगतान तय किया जा सके और यह तय किया जा सके कि वित्तीय ऋण समूह के प्रतिनिधियों मसलन घर खरीदारों को निपटान प्रक्रिया में किस प्रकार मतदान करना चाहिए।

ये आईबीसी में अहम संशोधन थे, जिन्होंने कंपनियों और व्यक्तियों दोनों के लिए पहली बार ऋण शोधन की समय सीमा तय की। सरकार ने दो अन्य विधायी सुधारों को अंजाम देने का श्रेय लिया - अनियमित जमा योजनाओं पर रोक लगाना और सार्वजनिक जगहों से अवैध कब्जा करने वालों को हटाने की प्रक्रियाओं का निर्धारण करना। इनमें सरकारी मकान भी शामिल हैं। अन्य उपलब्धियों में भगोड़ों और अफसरशाही में भ्रष्टाचार के लिए सरकार के कदम निर्धारित करना भी शामिल था। करीब एक दर्जन कर अधिकारियों को नौकरी छोड़नी पड़ी और भ्रष्टाचार में आरोपित 30 से अधिक कर अधिकारियों को बर्खास्त कर दिया गया। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण द्वारा 5 जुलाई को पेश पहले बजट का भी उल्लेख हुआ मगर केवल सरसरी तौर पर क्योंकि सूची में मुख्य रूप से बुनियादी ढांचे और सामाजिक क्षेत्र में बड़े पैमाने पर निवेश का उल्लेख था। इसके अलावा कारोबारी सुगमता में सुधार के उपाय भी बताए गए थे।

इसके विपरीत मोदी सरकार के तीसरे कार्यकाल के पहले 100 दिनों की जिन उपलब्धियों के बारे में गत सप्ताह बताया गया, वे निर्मला सीतारमण के 2024-25 के बजट की पहलों पर केंद्रित हैं। इनके बारे में कहा गया कि वे अगले पांच सालों के दौरान बुनियादी ढांचे को राजकोष से अच्छी मदद दिलाएंगी और अन्य प्राथमिकताओं तथा खजाने की मजबूती के साथ संतुलन रखेंगी।

अन्य उपलब्धियों की सूची में तीन लाख करोड़ रुपये मूल्य की बुनियादी ढांचा परियोजनाओं की शुरुआत को शामिल किया गया है, जिनमें महाराष्ट्र के वधावन में गहरे समुद्र का बंदरगाह निर्माण, हवाई अड्डों का उन्नयन और मेट्रो परियोजनाओं का विकास शामिल हैं। इसके अलावा विदेशी कंपनियों के लिए निगमित कर दरों में कमी, नवाचार को बढ़ावा देने के लिए ऐंजल टैक्स की समाप्ति, अंतरिक्ष क्षेत्र के स्टार्टअप के लिए 1,000 करोड़ रुपये के वेंचर कैपिटल फंड, टेक स्टार्टअप तंत्र को गति देने के लिए आरंभ पंचवर्षीय योजना और बायोमैन्युफैक्चरिंग को गति देने के लिए बायोई3 नीति की शुरुआत का भी उल्लेख किया गया।

कुछ अन्य उपलब्धियों का भी श्रेय लिया गया। इनमें महिलाओं के स्वामित्व वाले छोटे उपक्रमों के लिए अधिक ऋण की गारंटी, 14 तकनीकी केंद्रों की स्थापना, नई 78 लाख लोगों को किसी भी बैंक से पेंशन निकालने की सुविधा देने वाली केंद्रीकृत पेंशन योजना, निर्यातकों के लिए नई योजनाएं और राज्यों के दुग्ध सहकारी संघों को राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड की मदद से मजबूत करना शामिल है।

मोदी के तीसरे कार्यकाल में तीन नए कानूनों को लागू करने का भी श्रेय लिया गया, हालांकि इन्हें पिछली सरकार ने दिसंबर 2023 में पारित किया था। इसमें एक देश एक चुनाव को भी स्थान दिया गया, जबकि उसे 100 दिन पूरे होने के बाद कैबिनेट ने मंजूर किया था और इसके सामने संविधान संशोधन की चुनौती थी। इसके अतिरिक्त शीघ्र होने वाली जनगणना का भी श्रेय लिया गया। परंतु कैबिनेट द्वारा 24 अगस्त को मंजूर एकीकृत पेंशन योजना का जश्न शायद ही मनाया गया।

मोदी सरकार के दूसरे और तीसरे कार्यकाल के 100 दिनों की उपलब्धियों के बीच भारी अंतर है। 2024 के बजट के अलावा मोदी सरकार ने अपने तीसरे कार्यकाल में कोई अहम सुधार नहीं किया। वक्फ संशोधन विधेयक को संयुक्त संसदीय समिति के पास भेजना पड़ा। प्रसारण सेवा विधेयक का मसौदा वापस ले लिया गया, जबकि दूसरे कार्यकाल में सरकार ने राजनीतिक और आर्थिक अहमियत रखने वाले कई सुधार किए थे।

दोनों सरकारों के विधायी इरादों में अंतर की वजह है संसद में भाजपा की कमजोर स्थिति। यही वजह है कि तीसरे कार्यकाल में मोदी सरकार गठबंधन के दबाव में है। दूसरे कार्यकाल की तुलना में इस बार मोदी सरकार का ध्यान राजनीतिक लक्ष्यों के बजाय योजनाओं और परियोजनाओं पर अधिक है।

याद रहे, चुनाव के पहले भाजपा का इरादा ऐसा नहीं था। पार्टी को पूर्ण बहुमत से सत्ता में वापसी का भरोसा था और चुनाव के पहले ही भाजपा के नेताओं ने सभी प्रमुख मंत्रालयों को 100 दिन की कार्य योजना तैयार करने को कह दिया था। परंतु लोक सभा में बहुमत न मिलने के कारण उत्साह हवा हो गया। अब या तो वह कदम वापस ले रही है या आगामी जनगणना में जाति सर्वेक्षण को शामिल करने पर अपने रुख की समीक्षा कर रही है। यह सब इसलिए हो रहा है क्योंकि वह गठबंधन के दबाव में है।

आगे के लिए यह मानना उचित होगा कि मोदी सरकार अपने तीसरे कार्यकाल में ऐसी परियोजनाओं और योजनाओं पर अधिक ध्यान केंद्रित करेगी, जिनके लिए किसी विधायी बदलाव की जरूरत नहीं है या जिन्हें गठबंधन के साझेदारों का समर्थन हासिल हो। मोदी सरकार ने तीसरे कार्यकाल के 100 दिनों का जश्न जिस प्रकार मनाया वह इसका एक संकेत है।

पंजाब: कमजोर प्रशासन व मान की महत्त्वाकांक्षा

सियासी हलचल

आदिति फडणीस

इस वर्ष मार्च में अरविंद केजरीवाल को शराब लाइसेंस देने के मामले में भ्रष्टाचार करने और धनशोधन के संदेह में गिरफ्तार किया गया था। लोक सभा चुनाव करीब थे। केजरीवाल भारत में पद पर रहते हुए गिरफ्तार होने वाले पहले मुख्यमंत्री बने। दिल्ली में विशाल प्रदर्शन जुलूस का नेतृत्व कर रहे राज्य सरकार के मंत्रियों आतिशी (अब दिल्ली की मुख्यमंत्री) और सौरभ भारद्वाज को अन्य प्रदर्शनकारियों के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। आईटीओ पर घट रहे नाटकीय दृश्यों में सबने देखा कि आतिशी को पुलिस ने घसीटकर एक बस में डाला, जो प्रदर्शनकारियों को निकटवर्ती पुलिस थाने ले जा रही थी।

सुरक्षा के लिए एहतियात बरतते हुए पुलिस ने आम आदमी पार्टी (आप) मुख्यालय की ओर जा रहे सभी रास्ते बंद कर दिए। भाजपा मुख्यालय की ओर जाने वाले मार्गों पर वाटर कैनन (प्रदर्शनकारियों पर पानी की बौछार करने के लिए) और अर्द्धसैनिक बलों को तैनात कर दिया गया। आईटीओ मेट्रो स्टेशन भी बंद कर दिया गया। यह सब दिल्ली में हो रहा था।

उधर पंजाब के अमृतसर में सब कुछ सामान्य था। न तो वहां कोई वाटर कैनन थी, न प्रदर्शन हो रहे थे। आप अंदाजा भी नहीं लगा सकते थे कि पंजाब में जिस पार्टी की सरकार है, उसके संस्थापक प्रमुख को जेल में डाल दिया गया है। पंजाब के किसी और इलाके में भी गिरफ्तारी की गूंज सुनने को नहीं मिल रही थी। इससे चर्चा शुरू हो गई कि पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान और आप प्रमुख केजरीवाल के बीच सब कुछ ठीक नहीं है।

यह चर्चा इस सप्ताह दोबारा छिड़ गई, जब पंजाब सरकार ने 30 महीनों के अपने कार्यकाल में चौथी बार मंत्रिमंडल में फेरबदल किया। केजरीवाल की रिहाई के कुछ ही दिन के भीतर हुए इस फेरबदल ने चर्चा को जन्म दिया कि मान नहीं बल्कि पार्टी प्रमुख ही फैसले ले रहे हैं।

आम आदमी पार्टी ने मार्च 2022 में पंजाब में सरकार बनाई थी और उसने कई वादे भी किए थे। इनमें मुफ्त बिजली, रोजगार, भ्रष्टाचार मुक्त सरकार, विश्वस्तरीय विद्यालय, स्वास्थ्य सुविधाएं, हर वयस्क महिला को प्रति माह 1,000 रुपये की राशि, वृद्धावस्था पेंशन को बढ़ाकर 2,500 रुपये मासिक करना, पुरानी पेंशन योजना को बहाल करना और पंजाब से नशे को खत्म करना जैसे वादे शामिल थे।

इनमें से कुछ ही वादे पूरे हुए। उदाहरण के लिए पुरानी पेंशन योजना की वापसी का निर्णय अब तक लागू नहीं हो सका है और पेंशनभोगियों के संगठनों ने 2 अक्टूबर को राज्यव्यापी आंदोलन की चेतावनी दी है, जिसमें हरियाणा भी शामिल है। हरियाणा में 5 अक्टूबर को चुनाव होने वाले हैं और आप को वहां जीत की उम्मीद है।

एक वादा जो पूरा नहीं किया गया, वह है भ्रष्टाचार से मुक्त सरकार। मंत्रिमंडल में हालिया फेरबदल के बाद खनन विभाग को चौथा मंत्री मिला। इससे पहले तीन मंत्रियों को पद से हटाया जा चुका है। पंजाब सरकार को खनन से सालाना तकरीबन 20,000 करोड़ रुपये की कमाई होनी चाहिए थी और आम आदमी पार्टी ने अपने चुनाव घोषणापत्र में इसका वादा भी किया था। मगर स्थानीय मीडिया और विपक्षी दलों का आरोप है कि राजस्व बढ़ने के बजाय अवैध खनन माफिया और सरकार के बीच गठजोड़ के कारण राजस्व का भारी नुकसान हुआ है और सालाना केवल 300 करोड़ रुपये ही मिल सके हैं।

प्रदेश की आम आदमी पार्टी की सरकार की आलोचना विपक्षी कांग्रेस और शिरोमणि अकाली दल भी कर रहे हैं। मगर सरकार को भीतर भी विरोध का सामना करना पड़ रहा है। पुलिसकर्मी से विधायक बने अमृतसर उत्तर के विधायक कुंवर विजय प्रताप ने विधान सभा में अपनी ही सरकार की आलोचना की। उन्होंने 2015 में गुरु ग्रंथ साहब के साथ बेअदबी के मामलों से निपटने के सरकार के तरीके की आलोचना ही नहीं की बल्कि अमृतसर में गंदे पानी के प्रबंधन तथा जलापूर्ति जैसे मसलों पर भी सरकार को आड़े हाथ लिया। उन्होंने विधान सभा में आरोप लगाया कि राज्य में एक जूनियर इंजीनियर मुख्यमंत्री से अधिक ताकतवर है। उनका इशारा सरकार के उन आदेशों की तरफ था जिनकी स्थानीय प्रशासन ने अनदेखी की।

अलबत्ता पार्टी ने जुलाई में जिस तरह जालंधर पश्चिम विधान सभा उपचुनाव में जीत हासिल की उससे पता चलता है कि पंजाब के मतदाता अब भी आम आदमी पार्टी को पसंद कर रहे हैं। उस सीट से आप के विधायक शीतल अंगुराल लोक सभा चुनाव के पहले भाजपा में शामिल हो गए थे। भाजपा ने उपचुनाव में उन्हें उम्मीदवार बनाया, लेकिन यह बड़ी चूक साबित हुई। मुख्यमंत्री भगवंत मान ने जालंधर में बाकायदा किराये पर घर लिया और आम आदमी पार्टी के उम्मीदवार मोहित भगत की जीत को अपनी प्रतिष्ठा का विषय बनाते हुए जीत सुनिश्चित भी की। अंगुराल 35,000 से अधिक मतों से चुनाव हार गए, जो विधान सभा चुनाव के लिहाज से बहुत बड़ा अंतर है।

एक तरह से भाग्य ने पलटी मारी थी। लोक सभा चुनाव में मान और आप ने 13 लोक सभा सीटों पर जीत हासिल करने का दावा किया था, लेकिन उन्हें केवल तीन सीटें मिलीं। 2022 के विधान सभा चुनाव में पार्टी को 42 फीसदी मत मिले थे। लोक सभा चुनाव में यह मत प्रतिशत घटकर 26 फीसदी रह गया। लोक सभा चुनाव में भाजपा के मत प्रतिशत में इजाफे से संकेत मिलता है कि दूसरे राजनीतिक दल हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठे हैं।

अब पड़ोसी राज्य हरियाणा में विधान सभा चुनाव के लिए प्रचार अभियान जोर पकड़ रहा है, मान पहले से अधिक नजर आ रहे हैं और दिखा रहे हैं कि मतदाताओं के बीच उनका कितना आकर्षण है। परंतु पंजाब सरकार का प्रदर्शन कमतर रहा है। अगर इसके साथ पार्टी प्रमुख अरविंद केजरीवाल के प्रति मान की निजी महत्त्वाकांक्षाओं को शामिल कर दिया जाए तो शायद कुछ दुरुस्त करने की जरूरत लगती है। भगवंत मान को और कुछ करने से पहले पंजाब में शासन बेहतर करना चाहिए।

आपका पक्ष

श्रीलंका की नई सरकार क्या देश को उबार सकेगी?

श्रीलंका मुद्रास्फीति, जीवनयापन की बढ़ती लागत, गरीबी जैसे कई संकटों से जूझ रहा है। ऐसे में एनपीपी के मार्क्सवादी झुकाव वाले नेता अनुरा कुमारा दिसानायके के नेतृत्व में शासन परिवर्तन की प्रबल संभावना थी। दिसानायके की जनता विमुक्ति पेरामुना (जेवीपी) ने 1971 और 1987-89 में लोकप्रियता हासिल की जब वह सरकार के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह में शामिल थी। जेवीपी ने हाल के दशकों में मुख्यधारा की राजनीति में तेजी से प्रवेश किया है। इसने 2022 में सरकार को अस्थिर करने में विशिष्ट भूमिका निभाई जिससे प्रतिष्ठित पद पर रानिल विक्रमसिंघे की नियुक्ति हुई। एक प्रमुख मार्क्सवादी नेता के रूप में दिसानायके का उदय 2022 के संकट का परिणाम है जिसने इसके वित्तीय अधिरचना को गंभीर रूप से खतरे में डाल दिया, जिससे विदेशी मुद्रा की कमी, आसमान छूती मुद्रास्फीति और व्यापक सार्वजनिक विरोध हुआ। इन प्रतिकूल आर्थिक परिस्थितियों ने लंबे समय से प्रचलित पारंपरिक परिवार आधारित वंशवादी शासन में लोगों के विश्वास को कम कर दिया, जिससे गैर-वंशवादी बदलाव को हवा मिली। एक बड़ी चुनौती आईएमएफ के 2.9 अरब डॉलर के बेलआउट पैकेज के नियमों और शर्तों पर फिर से बातचीत करना है। क्या वह देश की एक चौथाई आबादी को गरीबी से बाहर निकाल पाएंगे, उसका कर्ज चुका पाएंगे, निवेशकों का भरोसा दोबारा हासिल कर पाएंगे? क्या वह जनता की उम्मीदों पर खरे उतरते हैं, जिनके असंतोष और गुस्से ने 2022 के संकट को जन्म दिया था और जिसके कारण तत्कालीन राष्ट्रपति गोटाभाया राजपक्षे को अपमानजनक रूप से बाहर होना पड़ा। उन्हें चीनी दबाव के आगे न झुककर आर्थिक और भूराजनीतिक रूप से संतुलित दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है और साथ ही अपने सदाबहार मित्र भारत के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने की जरूरत है।

विजय सिंह अधिकारी, नैनीताल

श्रीलंका के राष्ट्रपति अनुरा कुमारा दिसानायके ने सोमवार को प्रधानमंत्री हरिणी अमरसूर्या को पद की शपथ दिलाई

अदालत का बच्चों के हित में बड़ा फैसला

चाइल्ड पोर्नोग्राफी को लेकर न्यायालय ने बड़ा फैसला दिया है। अब इसे डाउनलोड करना, देखना और यहां तक कि इसे रखना भी अपराध माना गया जाएगा। दूसरों को फॉरवर्ड करने वाले भी बराबर के अपराधी होंगे। इसके तहत अपराधी पर पॉक्सो और आईटी ऐक्ट के मुताबिक कार्रवाई होगी। देश में अश्लील फिल्में देखने वालों लोगों का एक बड़ा वर्ग है। इसकी मूल वजह पश्चिम की असभ्य संस्कृति है। बचपन के संस्कार ही बच्चे का चरित्र और उसका भविष्य तय करते हैं। बचपन में जो जैसा सीखता है, बड़ा होकर वह वैसा ही बनता है। आज ज्यादातर युवा दिशाहीन, शरीर विज्ञान के ज्ञान से वंचित है। यही वजह है कि वे चाइल्ड पोर्न के आदी होने लगे हैं। इससे अपराधों को बढ़ावा मिलता है। चाइल्ड पोर्नोग्राफी पर पूर्ण प्रतिबंध लगाकर न्यायालय ने उचित आदेश दिया है। अब सरकार की जवाबदारी बनती है कि वह इसे सख्ती से लागू करे और जहां से इस तरह की अश्लील सामग्रियां डाउनलोड होती है, उस लिंक या ऐप को प्रबंधित करें।

अमृतलाल मारू, इंदौर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस जयशंकर ने गुरुवार को संयुक्त राष्ट्र महासभा के 79वें सत्र में भाग लिया। उन्होंने सत्र से इतर संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंतोनियो गुतारेस और संयुक्त राष्ट्र महासभा (यूएनजीए) के नए अध्यक्ष फिलेमोन यांग से अलग-अलग मुलाकात भी की। उन्होंने 'विविधता में एकता', 'शांति' एवं 'मानव कल्याण' के यांग के दृष्टिकोण का समर्थन करते हुए पश्चिम एशिया और यूक्रेन में संघर्ष जैसे वैश्विक मुद्दों पर चर्चा की।

चिंतन

यूएन में कश्मीर पर तुर्किये के बदले रुख भारत की जीत

भारत ने एक बार फिर से संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार के अपने एजेंडे को आगे बढ़ाया है। इन दिनों विदेशमंत्री एस जयशंकर राष्ट्र महासभा के 79वें सत्र में भाग लेने के लिए अमेरिका में हैं। इस दौरान वे संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंतोनियो गुतारेस और संयुक्त राष्ट्र महासभा (यूएनजीए) के नए अध्यक्ष फिलेमोन यांग से मिले। जयशंकर ने पश्चिम एशिया व यूक्रेन संघर्ष का जिक्र किया और 15 सदस्यीय यूएन सुरक्षा परिषद (पांच स्थाई व दस अस्थाई सदस्य) में तत्काल सुधार की जरूरत पर बल दिया। एक दिन पहले ही फ्रांस ने यूएन सुरक्षा परिषद में भारत की स्थाई सदस्यता की दावेदारी का फिर से समर्थन किया है। पांच स्थाई सदस्य में से चार फ्रांस, अमेरिका, रूस व ब्रिटेन ने भारत का समर्थन किया है, भारत की दावेदारी को लेकर चीन का अड़ियल रुख रहा है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थाई सदस्यता की दावेदारी पेश करने वाले ग्रुप-4 में भारत, जापान, जर्मनी व ब्राजील है। चूंकि वैश्विक भूराजनीतिक, सामरिक और व्यापारिक व्यवस्था 1945 से 2024 तक आते आते काफी बदल चुकी है, इसलिए संयुक्त राष्ट्र में भी संरचनात्मक बदलाव जरूरी है, अन्यथा यूएन अपनी प्रासंगिकता खो रहा है। संयुक्त राष्ट्र को अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण, समावेशी, पारदर्शी, कुशल, प्रभावी, लोकतांत्रिक एवं जवाबदेह बनाने की तत्काल आवश्यकता है। 'ग्लोबल साउथ' समेत विश्व में भारत का प्रभाव कैसे बढ़ रहा है, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि तुर्किये के राष्ट्रपति रजब तैयब एर्दोआन ने साल 2019 में अनुच्छेद 370 निरस्त किए जाने के बाद से पहली बार इस साल संयुक्त राष्ट्र महासभा (यूएनजीए) में अपने संबोधन में कश्मीर का जिक्र नहीं किया। इससे पाकिस्तान व चीन को झटका लगा है। जम्मू-कश्मीर को मिला विशेष दर्जा 2019 में वापस लिए जाने के बाद एर्दोआन ने हर साल यहां यूएनजीए सत्र में कश्मीर का उल्लेख किया था। तुर्किये के इस बदले रुख को भारत के वैश्विक प्रभाव व तेजी से बदल रहे भूराजनीतिक समीकरण के रूप में देखा जा सकता है। पाकिस्तान को छोड़ कर यूएनजीए के 193 सदस्यों में से किसी ने कश्मीर का जिक्र नहीं किया। दरअसल, तुर्किये ब्रिक्स में शामिल होना चाहता है, भारत ब्राजील, चीन, रूस के साथ संस्थापक सदस्य है, बाद में दक्षिण अफ्रीका शामिल हुआ था। तुर्किये अपनी अर्थव्यवस्था के विकास पर ध्यान दे रहा है, वह गंभीर मंदी की चपेट में है, इसलिए वह इससे निकलने के लिए ब्रिक्स में आना चाहता है, पर भारत को नाराज रखकर वह इसमें एंट्री नहीं कर सकता है। कश्मीर के चलते ही भारत व तुर्किये के संबंध खराब रहे हैं। दूसरी वजह भी है, राष्ट्रपति एर्दोआन पॉलिटिकल इस्लाम से दूरी बना रहे हैं, वे अपनी छवि प्रोग्रेसिव लीडर की बनाना चाहते हैं। सऊदी अरब, यूएई और मिस्र पॉलिटिकल इस्लाम का समर्थन नहीं करते हैं। अर्दोआन इन तीनों देशों से संबंध बढ़ा रहे हैं। ऐसे में उन्हें अपना रुख बदलना ही होगा। इसलिए अब एर्दोआन पॉलिटिकल इस्लाम के नजरिए से क्षेत्रीय समस्याओं को नहीं देख रहे हैं। इसी साल जनवरी में ब्रिक्स में मिस्र, इथीयोपिया, ईरान और यूएई शामिल हुए थे. अगले महीने 22 से 24 अक्टूबर तक रूस में ब्रिक्स की सालाना समिट है और उम्मीद की जा रही है कि सभी सदस्य देश इसमें हिस्सा लेंगे। इस दौरान,तुर्किये भी ब्रिक्स का हिस्सा बनने की कोशिश करेगा। यूएन में कश्मीर पर पाक से अलाप मिलाने वाले तुर्किये के रुख में बदलाव एर्दोआन की मजबूरी के साथ भारत की कूटनीतिक जीत मानी जा सकती है।

सारा संसार

पंचमुखी अंजलि मंदिर तमिलनाडु के तिरुवल्लुर में स्थित भगवान हनुमान को समर्पित मंदिर है। इस मंदिर में भगवान हनुमान के पांच मुखों की प्रतिमा स्थापित है। हनुमान जी की पांच मुखों वाली 40 फीट ऊंची प्रतिमा हरे रंग के ग्रेनाइट पत्थरों से बनी हुई है।

जयंती

शुभांगी उपाध्याय

भगत सिंह से प्रेरणा लें युवा

संपदि यस्य न हर्षो विपदि विषादो रणे न भीरुत्वम। तं भुवन त्रयतिलकं जनयति जननी सुतं विरलम।। अर्थात जिसको सुख सम्पत्ति में प्रसन्नता न हो, संकट विपत्ति में दुःख न हो, युद्ध में भय अथवा कायरता न हो, तीनों लोकों में महान ऐसे किसी पुत्र को माता कभी-कभी ही जन्म देती है। भारत माता का ऐसा ही सपूत था सरदार भगत सिंह। 28 सितंबर 1907, पंजाब के जिला लायलपुर, बंगा गांव (वर्तमान पाकिस्तान) में एक राष्ट्रभक्त सिख परिवार में उत्कृष्ट देशभक्त भगत सिंह के रूप में वीर बालक का जन्म हुआ, जिन्होंने न केवल भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई अपितु मातृभूमि के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर 23 मार्च 1931 को मात्र 23 वर्ष 6 माह की अल्पायु में ही शहीद हो गए। भगत सिंह के इस महान बलिदान ने देश के जन मानस में आजादी की ऐसी तड़प पैदा कर दी, कि देश का हर व्यक्ति आजादी की लड़ाई के लिए स्वेच्छा से आगे आने लगा। 'इंकलाब जिंदाबाद' रूपी ऊर्जावान उद्घोष के जनक ने अपने एक पत्र में क्रांति के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट किया था, 'क्रांति का अर्थ अनिवार्य रूप से स्वतंत्र आंदोलन नहीं होता है, विद्रोह को क्रांति नहीं कहा जा सकता यद्यपि यह हो सकता है कि विद्रोह का अंतिम परिणाम क्रांति हो।' यदि सरदार भगत सिंह चाहते तो कभी भी अंग्रेजों के हाथ न आते, परन्तु आजादी के मतवाले ने पूर्व नियोजित योजना के प्रतिकूल, राष्ट्रहित में स्वयं को उत्सर्ग करना ही श्रेयस्कर समझा। उन्होंने अंग्रेजों के अमानुषिक अत्याचार सहे, किन्तु न धन का लोभ, न परिवार का मोह ही उन्हें कभी अपने लक्ष्य से डिगा पाया। आज का युवा वर्ग जो छोटी से छोटी समस्याओं में भी हताश हो जाता है, मनोविकार से घिर जाता, जिसे थोड़े से संघर्ष से डिप्रेशन होने लगता है, उस युवा वर्ग को भगत सिंह के जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए। उन्होंने अपने एक पत्र में लिखा था, "जो नौजवान दुनिया में तरक्की करना चाहते हैं, उन्हें वर्तमान युग में महान और उच्च विचारों का अध्ययन करना चाहिए(भगत सिंह के संपूर्ण दस्तावेज, अराजकतावाद-1)। यह जेल के इतिहास की एक अभूतपूर्व घटना है। यद्यपि अनशन पर गांधीजी की सत्ता स्वीकारी जाती है तथापि भगत सिंह ने भी जेल में निरंतर 63 दिनों तक अनशन किया था। उन्हें असेंबली बम कांड में आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। जेल में उन्हें बहुत खराब भोजन दिया जाता था। भगत सिंह के अलावा भी अनगिनत देशभक्तों ने अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए प्राणों की आहुति दी। उन पूज्य हुतात्माओं के बलिदान का ही परिणाम है कि हम स्वतंत्र संवैधानिक राष्ट्र में श्वास ले पा रहे हैं, परन्तु आज के आधुनिक दौर में उनके महत्वपूर्ण बलिदानों का मोल समझ पाने में असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं। आधुनिक समाज परिवर्तनशील है। परिवर्तन की इस बेला में आज प्राचीन विचारों की महती आवश्यकता है ताकि भारत का पुनरुत्थान हो सके। अंत में इस महान युवा क्रांतिकारी का संदेश आज के युवाओं के नाम, 'किसी ने सच ही कहा है, सुधार वृद्ध नहीं कर सकते। वे तो बहुत ही बुद्धिमान और समझदार होते हैं,वे हमारा उचित मार्गदर्शन कर सकते हैं। सुधार तो होते हैं युवाओं के परिश्रम, साहस, बलिदान और निष्ठा से, जिनको भयभीत होना आता ही नहीं और जो विचार कम और अनुभव अधिक करते हैं।'

((लेखिका कलकत्ता विश्वविद्यालय में शोधार्थी हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

विश्लेषण

प्रभात कुमार रॉय

द्वंद्वात्मक भारत-अमेरिका संबंध

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने हाल ही में तीन दिन की अमेरिका की यात्रा की। संयुक्त राष्ट्र के अधिवेशन को संबोधित करते हुए नरेंद्र मोदी ने कहा कि युद्धों से तनावपूर्ण दौर में वैश्विक शांति और सुरक्षा की खातिर हम सबको एक हो जाना चाहिए। भारत और अमेरिका के मध्य कूटनीतिक संबंध के द्वंद्वात्मक पहलू हैं। मोदी की कूटनीतिक यात्रा से केवल दो दिन पूर्व ही अमेरिकन प्रशासन ने भारत विरोधी रुख का परिचय दे दिया। अमेरिका ने स्वयं आतंकवाद का शिकार होने के बावजूद बिन लादेन, अल जवाहिरी जैसे जिहादी सरगनाओं को पाला पोसा और अब वह पन्नू जैसे आतंकियों को शरण देकर वैश्विक आतंकवाद का परिपोषण कर रहा है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 21 से 23 सितंबर तक अमेरिका की यात्रा की। इस तीन दिवसीय यात्रा में मोदी ने अमेरिका के विलमिंगटन में क्वॉड शिखर वार्ता में शिरकत की। संयुक्त राष्ट्र के अधिवेशन को संबोधित किया। अमेरिका में रहने वाले प्रवासी भारतीयों के साथ मुलाकात की। संयुक्त राष्ट्र के अधिवेशन को संबोधित करते हुए नरेंद्र मोदी ने कहा कि युद्धों से तनावपूर्ण दौर में वैश्विक शांति और सुरक्षा की खातिर हम सबको एक हो जाना चाहिए। मोदी ने आतंकवाद को वैश्विक शांति और सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा करार दिया। खतरनाक साइबर चुनौतियों की तरफ भी संयुक्त राष्ट्र का ध्यान आकर्षित कराया। उन्होंने कहा कि हम जो वैश्विक कार्रवाई करते हैं, उसके तहत राष्ट्रीय अखंडता और राष्ट्रीय संप्रभुता अक्षुण्ण बनाए रखी जानी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि भारत के लिए वन अर्थ, वन फैमिली और वन फ्यूचर एक समर्पण का सिद्धांत है और दुनिया की समृद्धि और शांति के लिए मन, वाणी और कर्म से भारत निरंतर काम करता रहेगा।

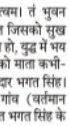

भारत और अमेरिका के मध्य कूटनीतिक संबंध के द्वंद्वात्मक पहलू हैं। ऐतिहासिक तौर पर नजर डालें तो आजादी हासिल होने के वक्त से ही भारत और अमेरिका के मध्य में गहन कूटनीतिक अंतर्विरोधों का सिलसिला चलता रहा है। कश्मीर विवाद पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अमेरिका की कयादत में पश्चिमी देशों ने कश्मीर में सैन्य दखलअंदाजी का तीन दफा प्रस्ताव पेश किया था। इन प्रस्तावों को तत्कालीन सोवियत यूनियन ने तीन बार वीटो किया था। कोल्ड वॉर का दौर शुरू हो चुका था और भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई, जिसके कारण अमेरिका कदापि भारत के प्रति गहन मित्रता का भाव नहीं रख सका। पंडित नेहरू के समाजवादी रुझान के कारण भारत की बहुत गहरी दोस्ती सोवियत यूनियन के साथ हो गई। अमेरिका सदैव भारत के प्रति सशंकित बना रहा। भारत और पाकिस्तान के मध्य कश्मीर विवाद में उसने सदैव पाकिस्तान का पक्ष लिया। यहां तक कि अमेरिका के नेतृत्व में पाकिस्तान को सेंटो सैन्य संगठन का सदस्य भी बनाया गया। बांग्लादेश युद्ध में अमेरिका ने खुलकर पाकिस्तान का साथ दिया और अपने सातवें नेवल फ्लीट को हिंद महासागर में भेजा। भारत को खंडित करने की साजिशों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से अमेरिका पाकिस्तान के साथ खड़ा रहा। पंजाब के खालिस्तान आतंकवाद से लेकर कश्मीर के जेहादी आतंकवाद तक अमेरिका ने पाकिस्तान का साथ दिया। यहां तक कि कश्मीर के जिहादी आतंकवाद को अमेरिकन कूटनीतिज्ञों ने जंगे आजादी करार दिया। न्यूयॉर्क ट्रेड सेंटर पर 9/11 को अंजाम दिए गए नृशंस जेहादी आक्रमण ने अमेरिका के कूटनीतिक रुख को एकदम बदल कर रख दिया। 21वीं शताब्दी की शुरुआत में भारत और अमेरिका के मध्य कूटनीतिक दोस्ती की निर्णायक शुरूआत हुई। 21 सितंबर से प्रारंभ हुई प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की कूटनीतिक यात्रा से केवल दो दिन पूर्व ही अमेरिकन प्रशासन ने भारत विरोधी रुख का परिचय दे दिया। भारत द्वारा झेले गए खालिस्तानी आतंकवाद के नृशंस दौर को विस्मृत करके 19 सितंबर

को अमेरिका के शीर्ष अधिकारियों ने खालिस्तानी सरगनाओं से बाकायदा मुलाकात की। खालिस्तानी सरगना गुरपतवंत सिंह पन्नू की हत्या की साजिश रचने का इल्जाम भारत पर लगाया जा रहा है। अमेरिकन प्रशासन चाहता है कि भारत इस मामले की जांच पड़ताल में उसकी मदद करें। अमेरिकी प्रशासन भारत के इस साजिश में शामिल होने की जांच कर रहा है। गुरपतवंत पन्नू ने अपनी हत्या की साजिश को लेकर न्यूयॉर्क की अदालत में एक याचिका दायर की है। इस याचिका का संज्ञान लेकर हाल में न्यूयॉर्क की अदालत ने भारत के अनेक शीर्ष अधिकारियों को समन भी जारी किया है। इस अदालती समन में भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल, निखिल गुप्ता, रॉ के पूर्व चीफ सामंत गोयल जैसे अनेक शीर्ष भारतीय अधिकारियों के नाम शामिल हैं। अदालत ने इस मामले में 21 दिनों का वक्त प्रदान किया है। भारत के विदेश सचिव विक्रम मिस्री ने कहा कि यह मामला हमारे संज्ञान में लाया गया है और हमने एक्शन भी ले लिया है और एक जांच कमेटी भारत द्वारा बनाई गई है। यक्ष प्रश्न है कि क्या न्यूयॉर्क अदालत के समन के कारण अजीत डोभाल नरेंद्र मोदी के साथ इस दफा अमेरिका की यात्रा पर नहीं गए? कहीं भारत सरकार को अंदेशा तो नहीं था कि डोभाल को अमेरिका में गिरफ्तार कर लिया जाएगा? अमेरिका के खालिस्तानी सरगनाओं को शरण और समर्थन देने से और उसके भारत विरोधी रुख के कारण क्या यह आशंका वास्तविक सिद्ध हो सकती थी? उल्लेखनीय है कि अमेरिका की अदालतों द्वारा इस तरह के समन पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह, सोनिया गांधी और कमलनाथ को भी भेजे गए थे। 2002 के गुजरात दंगों के मामलों में ऐसे अमेरिकी अदालती समन मोदी के नाम पर भी भेजे गए थे। अमेरिकी अदालतों की ये समस्त कारवाइयां वस्तुतः अमेरिकी प्रशासन के भारत विरोधी नजरिए को प्रतिबिंबित करती रही हैं। अमेरिकन हुकूमत इन दिनों भारत के प्रति काफी नाराज है, क्योंकि अमेरिका द्वारा रूस पर लगाए गए आर्थिक प्रतिबंधों का पालन करने से भारत ने स्पष्ट इनकार कर दिया। अमेरिका के आर्थिक प्रतिबंधों का खुला उल्लंघन करते हुए भारत बड़ी मात्रा में रूस से तेल खरीद रहा है तथा आधुनिकतम हथियार खरीद रहा है। भारत की संतुलित गुटनिरपेक्ष नीतियां कभी भी अमेरिका को रास नहीं आई। अंतरराष्ट्रीय कूटनीति के जानकार यह सवाल करते हैं कि भारत विरोधी इन कार्रवाइयों से आखिर अमेरिका क्या हासिल करना चाहता है। खालिस्तानी आतंकवादी भारत की संप्रभुता और अखंडता के विरुद्ध सक्रिय रूप से साजिश कर रहे हैं। आखिरकार बर्बर खालिस्तानी आतंकवादियों का हौसला अमेरिका क्यों बढ़ा रहा है? अगर व्हाइट हाउस अपनी स्थिति स्पष्ट नहीं करता तो फिर यह भारत के लिए बहुत बड़ा कूटनीतिक झटका है। वस्तुत अमेरिकी प्रशासन भारत के विरुद्ध सिख आतंकवादियों के कार्ड इस्तेमाल करके कूटनीतिक फायदा उठाना चाहता है। अमेरिका का कूटनीतिक इतिहास रहा है वह अपने तत्काल फायदे के लिए खूंखार जिहादियों को और बर्बर खालिस्तानी आतंकवादियों को भारत के विरुद्ध समर्थन और परिपोषण प्रदान करता रहा है। इतिहास साक्षी है कि भारत ने 13 वर्षों के निरंतर संग्राम के बाद खालिस्तानी आतंकवादियों को पंजाब की धरती से मिटा दिया था। अब ये खालिस्तानी सरगना विदेशी धरती से भारत को खंडित करने के लिए साजिशों में लिप्त रहे हैं। वैश्विक आतंकवाद के विरुद्ध निरंतर उद्घोषणा करने वाले अमेरिका के लिए बड़ा शर्मनाक कारनामा है कि उसके प्रशासन ने स्वयं आतंकवाद का शिकार होने के बावजूद ओसामा बिन लादेन, अल जवाहिरी और अल बगदादी जैसे जिहादी सरगनाओं को पाला पोसा और परवान चढ़ाया और अब वह गुरपतवंत सिंह पन्नू जैसे खालिस्तानी वैश्विक आतंकवादियों को शरण देकर वैश्विक आतंकवाद का परिपोषण कर रहा है।

(लेखक कूटनीति के जानकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया edit@haribhoomi.com पर दे सकते हैं।

सात्विक दानः करेंगे दान तो बनेंगे समृद्ध और खुशहाल!

संकलित

दर्शन

एक विवेकशील प्राणी होने के नाते मनुष्य से त्याग की अपेक्षा स्वाभाविक है। वास्तव में मानव का पूर्ण विकास ही त्याग द्वारा संभव है। जो दूसरे के लिए जितना अधिक त्याग कर सकता है, वह उतना ही महान समझा जाता है।राजा हरिश्चंद्र को हम आज भी उनके त्याग के लिए ही तो स्मरण करते हैं। महर्षि दधीचि ने तो एक विराट लक्ष्य के लिए अपनी देह का ही त्याग कर दिया था। वास्तव में हमारे समृद्ध इतिहास में कई विभूतियां तो केवल अपनी त्याग भावना के लिए ही विख्यात हुई हैं। त्याग की भावना का विकास करने के लिए सभी धर्मों में दान की महिमा बताई गई है। कहा जाता है धन का दान करने से धन शुद्ध होता है। आवश्यक नहीं है कि मात्र धनी व्यक्ति ही दान करने में सक्षम हैं, क्योंकि उनके पास किसी वस्तु का अभाव नहीं है। दान की भावना जाग्रत होने पर आप पाएंगे कि आपके पास भी एक अक्षय भंडार है। मात्र धनदान या अन्नदान ही दान नहीं है। हो सकता है कोई व्यक्ति धनहीन हो, परंतु उसके पास एक स्वस्थ एवं निरोग शरीर हो। क्या ऐसे लोगों के लिए श्रमदान विकल्प नहीं है? उनके आसपास कितने अशक्त लोग मिल जाएंगे, जिनकी वे अपनी शारीरिक ऊर्जा से सेवा कर सकते हैं। किसी के कार्य में हाथ बंटा लेना भी श्रमदान है। विद्यादान या ज्ञानदान को तो उत्तम में सर्वोत्तम माना गया है। किसी निर्धन बच्चे को निःशुल्क पढ़ा देना भी तो दान ही है। आप किसी भी प्रकार से अभावग्रस्त की सहायता कर सकते हैं, शरीर, मन, बुद्धि, धन और भाव सब उपकरण हैं।

बहरूपियों से हमेशा सतर्क एवं सावधान रहें

संकलित

प्रेरणा

एक कबूतर और एक कबूतरी एक पेड़ की डाल पर बैठे थे। उन्हें बहुत दूर से एक आदमी आता दिखाई दिया। कबूतरी के मन में कुछ शंका हुई और उसने कबूतर से कहा कि चलो जल्दी उड़ चले नहीं तो ये आदमी हमें मार डालेगा। कबूतरने लंबी सांस लेते हुए आराम के साथ कबूतरी से कहाः भला उसे ध्यान से देखो तो सही, उसके कपड़े देखो, चेहरे से भोलापन टपक रहा है, ये हमें क्या मारेगा, बिलकुल सज्जन पुरुष लग रहा है। कबूतर की बात सुनकर कबूतरी चुप हो गई। जब वह आदमी उनके पास आया तो अचानक उसने अपने वस्त्र के अंदर से तीर कमान निकाला और झट से कबूतर को मार दिया। और बेचारे उस कबूतरके वहीं प्राण पखेरू उड़ गए। असहाय कबूतरी ने किसी तरह भाग कर अपनी जान बचाई और बिलखने लगी। उसके बाद वह कबूतरी रोती हुई अपनी फरियाद लेकर राजा के पास गई और राजा को उसने पूरी घटना बताई। तुरंत शिकारी को पकड़ कर दरबार में लाया गया। शिकारी ने डर के कारण अपना जुर्म स्वीकार कर लिया। उसके बाद राजा ने कबूतरी को ही उस शिकारी को सजा देने का अधिकार दे दिया। कबूतरी ने बहुत दुःखी मन से कहा किः मेरे विचार से इस क्रूर शिकारी को बस इतनी ही सजा दी जानी चाहिए कि अगर वो शिकारी है तो उसे हर समय शिकारी वाले कपड़े पहनना चाहिए। ये अच्छे व्यक्ति वाले कपड़े उतार दे क्योंकि अच्छे व्यक्ति वेल कपड़े पहन कर धोखे से घिनौने कर्म करने वाले सबसे बड़े नीच होते हैं।

अंतर्मन

आज की पाती

पर्यटन को और बढ़ावा देने की जरूरत

संयुक्त राष्ट्र विश्व पर्यटन संगठन ने पर्यटन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से पर्यटन दिवस मनाने की घोषणा सन 1980 में की थी। पहला विश्व पर्यटन दिवस 27 सितंबर, सन 1980 को मनाया गया था। इस वर्ष के पर्यटन दिवस का थीम है- पर्यटन और शांति। जहां शांति होती है, वहीं ज्यादातर देश-विदेशों के पर्यटक आते हैं। हिमाचल प्रदेश तो पर्यटन के नजरिये से विश्व भर में मशहूर है। यह देवभूमि भी है। यहां वर्ष भर पर्यटकों को तांता लगा रहता है। शिमला, डलहौजी, कुल्लू-मनाली या फिर हो धर्मशाला-मैक्लोडगंज, प्रदेश के पर्यटन के मुख्य केंद्र हैं। ऐसे ही बहुत से क्षेत्र उत्तराखंड, जम्मू कश्मीर, गोवा आदि हैं। देश के बहुत से दूसरे राज्यों में भी देश-विदेश के पर्यटक देश की प्राकृतिक शोभा का लुफ्त उठाने के लिए पर्यटक स्थलों पर आते रहते हैं। - प्रदीप पटेल, अंबिकापुर

करंट अफेयर

मेरा 'भारत को बाहर करने' का एजेंडा नहीं रहा : मुइज्जू

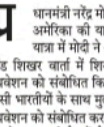

मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू ने 'भारत को बाहर करने'' (इंडिया आउट) के किसी भी एजेंडे से इनकार करते हुए कहा कि उनके राष्ट्र में विदेशी सेना की उपस्थिति द्वीपीय देश के लिए एक 'गंभीर समस्या' थी।संयुक्त राष्ट्र महासभा के 79वें सत्र में शामिल होने के लिए अमेरिका पहुंचे मुइज्जू ने बृहस्पतिवार को प्रिंसटन विश्वविद्यालय के कार्यक्रम 'डीन्स लीडरशिप सीरीज' में एक सवाल के जवाब में यह टिप्पणी की। मालदीव के समाचार पोर्टल 'अधाधू डॉट कॉम' ने उनके हवाले से कहा, 'हम किसी भी समय, किसी भी देश के खिलाफ कभी नहीं रहे। यह भारत को बाहर करना (इंडिया आउट) नहीं है। मालदीव के लोगों को अपने देश में विदेशी सेना की उपस्थिति से एक गंभीर समस्या का सामना करना पड़ रहा था।' मुइज्जू ने कहा, 'मालदीव के लोग नहीं चाहते कि एक भी विदेशी सैनिक देश में रहे।' भारत और मालदीव के बीच संबंध पिछले साल नवंबर से ही तनावपूर्ण हो गए थे, जब चीन के प्रति झुकाव रखने वाले मुइज्जू ने मालदीव के राष्ट्रपति का पदभार संभाला था। मुइज्जू ने भारत से कहा था कि वह देश द्वारा उपहार में दिए गए तीन विमानन प्लेटफॉर्म का संचालन कर रहे लगभग 90 भारतीय सैन्य कर्मियों को वापस बुला ले।

ऑफ बीट

वजन प्रबंधन: फाइबर शरीर का प्राकृतिक मार्गदर्शक

फाइबर स्वस्थ वजन प्रबंधन की कुंजी हो सकता है - और जब आप इसे संपूर्ण खाद्य पदार्थों के रूप में खाते हैं तो प्रकृति इसे कार्ब्स के साथ पूरी तरह से संतुलित अनुपात में रखती है। असंसाधित फल, सब्जियाँ, साबुत अनाज, फलियाँ, मेवे और बीज की बात करें। शोध से पता चलता है कि कार्बोहाइड्रेट को कुल कार्बोहाइड्रेट और फाइबर के प्रकृति-संतुलित अनुपात में पैक किया जाता है। वास्तव में, कुछ प्रकार के फाइबर प्रभावित करते हैं कि आपका शरीर कार्बोहाइड्रेट को पूरी तरह से कैसे अवशोषित करता है और आपकी कोशिकाओं को बताता है कि अवशोषित होने के बाद उन्हें कैसे संसाधित करना है। फाइबर आपकी आंत में शर्करा के अवशोषण को धीमा कर देता है। यह मौलिक जीव विज्ञान को भी व्यवस्थित करता है, जिसमें हाल ही में वेगोवी और ओजेम्पिक जैसी ब्लॉकबस्टर वजन घटाने वाली दवाएं काम में आती हैं, लेकिन प्राकृतिक तरीके से। आपका माइक्रोबायोम फाइबर को संकेतों में परिवर्तित करता है जो आंत हार्मोन को उत्तेजित करता है जो इन दवाओं के प्राकृतिक रूप हैं। ये बदले में नियंत्रित करते हैं कि आपका पेट कितनी तेजी से खाली होता है, आपके रक्त शर्करा के स्तर को कितनी मजबूती से नियंत्रित किया जाता है और यहां तक कि आपको कितनी भूख लगती है।

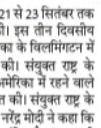

ट्रेंड

कार्यबल मजबूत करेगी सरकार

कार्यबल को सशक्त बनाना, नौकरी के नए अवसर पैदा करना! श्रम बल भागीदारी दर में उल्लेखनीय उछाल देखा गया है, जो 2017-18 में 49.8% से बढ़कर 2023-24 में 60.1% हो गया है। मोदी की सरकार हमारे कार्यबल को मजबूत करेगी।

-मनसुख मांडविया, केंद्रीय मंत्री

नौकरियां छीन ली

जम्मू-कश्मीर के एक युवा स्टार्टअप मालिक की आंखों में निराशा भारत के अधिकांश उद्यमियों और छोटे-व्यवसाय मालिकों के संघर्ष को दर्शाती है। 'मोदी जी के एकाधिकार मॉडल' ने नौकरियां छीन ली है, एमएसएमई को तबाह कर दिया।

-राहुल गांधी, नेता प्रतिपक्ष

बेशर्मी की सारी हदें पार

बेशर्मी की सारी हदे पार कर दी। केजरीवाल जी, जिस गुंडे ने मुझे आपके निवास पर आपकी मौजूदगी में मारा, जब तक वो जेल में था, आपने वकीलों की फौज उसे बचाने के लिए खड़ी की, आज जब वो शर्तिया बेल पर बाहर है, कह रहे है कि वो फर्जी केस में जेल में डाला गया है।

-स्वाति मालीवाल, डीसीडब्ल्यू अध्यक्ष

तेल का बाजार सबसे बड़ा

क्या आप जानते है कि तेल का बाजार दस सबसे बड़ी धातुओं के कुल बाजार से भी बड़ा है? दरअसल, यह सोने से 10 गुना बड़ा है। यह आकर्षक चार्ट तेल के निरंतर महत्व को दर्शाता है, भले ही दुनिया ऊर्जा परिवर्तन के दौर में है।

-अनिल अग्रवाल, उद्योगपति

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-42422221 पर या सीधे मेल से aapkepatra.haribhoomi@gmail.com ... सकते हैं।

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स। कानपुर (कानपुर व लखनऊ में एक साथ प्रसारित)। शनिवार, 28 सितंबर 2024

ज़िम्मेदारी समझें

पोस्टर-बैनर-पर्चे हटने के बाद आएंगे नतीजे

दिल्ली विश्वविद्यालय छात्रसंघ चुनावों को लेकर दिल्ली हाईकोर्ट ने जो सख्त रुख दिखाया है, उसका सभी संबंधित पक्षों को स्वागत करना चाहिए। हाईकोर्ट की यह पहल भले डीयू की ओर केंद्रित हो, लेकिन इससे निकला संदेश देश भर के तमाम विश्विद्यालयों के छात्र संघ चुनावों के लिए है।

बात जिम्मेदारी की | पहली नजर में जरूर मामला सार्वजनिक इमारतों की साफ-सफाई और सार्वजनिक संपत्ति की सुरक्षा का लगता है, लेकिन वास्तव में यहां मुद्दा छात्र राजनीति को जवाबदेह बनाने का है। हाईकोर्ट ने मतदान के कार्यक्रम के साथ छेड़छाड़ नहीं की, लेकिन मतगणना पर रोक लगाते हुए कहा कि जब तक वह इस बात से संतुष्ट नहीं हो जाता कि चुनाव के दौरान पोस्टरों, बैनरों और पर्चों वगैरह के जरिए फैलाई गई गंदगी पूरी तरह साफ की जा चुकी है, तब तक नतीजे घोषित नहीं किए जाएंगे।

DUSU । हाईकोर्ट का दखल

खर्च की वसूली | महत्वपूर्ण यह भी है कि इस साफ-सफाई में होने वाला खर्च शुरू में भले ही MCD देगा, मगर उसकी भरपाई बाद में डीयू को करनी होगी। कोर्ट ने यह भी कहा कि डीयू प्रशासन चाहे तो प्रत्याशियों से वह खर्च वसूल सकता है। यानी आखिरकार सफाई का बोझ उन्हीं पर आएगा, जो इस गंदगी के लिए जिम्मेदार होंगे।

छात्रसंघ चुनाव में धनबल | यह पूरा मसला दरअसल छात्र राजनीति में बढ़ते बाहुबल और धनबल के जोर से जुड़ा है। दिल्ली में ही डीयू और जेएनयू के छात्रसंघ चुनावों के रूप में दो बिल्कुल अलग-अलग मॉडल उपलब्ध हैं। जहां जेएनयू में तर्क-वितर्क और बहस-मुबाहिसे के माहौल में चुनाव संपन्न होते हैं, वहीं डीयू में गाड़ियों के बड़े-बड़े काफिलों के साथ पूरे तामझाम के बीच चुनाव प्रचार होता है।

डीयू मॉडल का फैलाव | अफसोस की बात है कि जेएनयू मॉडल मुख्यतया वहीं तक सीमित रहा जबकि डीयू मॉडल का प्रभाव देश के तमाम विश्वविद्यालयों में छात्र संघ चुनावों के दौरान दिख जाता है। ध्यान रहे, सुप्रीम कोर्ट द्वारा 2005 में गठित लिंगदोह समिति ने यूनिवर्सिटी चुनावों में प्रति प्रत्याशी खर्च की अधिकतम सीमा 5000 रुपये तय की थी। यह तभी हो सकता है जब विश्विद्यालयों में चुनाव छात्र अपने बूते लड़ें, राजनीतिक दलों का वैचारिक प्रभाव भले हो, उन्हें अपने संसाधनों के जरिए इन चुनावों को प्रभावित करने की इजाजत न दी जाए।

अमल में सावधानी | डीयू चुनावों में हाईकोर्ट का ताजा दखल एक अच्छी शुरुआत साबित हो सकता है। इसे अन्य विश्वविद्यालों में भी लागू करने की कोशिश होनी चाहिए। लेकिन ध्यान रहे, इसका मकसद छात्र राजनीति को ज्यादा स्वच्छ, सहज और लोकतांत्रिक बनाना है, स्टूडेंट कम्युनिटी की लोकतांत्रिक अभिव्यक्ति को विश्वविद्यालय प्रशासन के अनुशासन की भेंट चढ़ाना नहीं।

खुले मन से

महामारी, युद्ध से ज्यादा लोग तो हादसों में मर रहे

सुधीर मिश्र

जावेद अख्तर का शेर है-

डर हम को भी लगता है रस्ते के सन्नाटे से
लेकिन एक सफर पर ऐ दिल अब जाना तो होगा

सन्नाटे में ही नहीं, भीड़ में भी डर लगता है। यहां एक्सप्रेस-वे तो बन गए पर सवाल है कि लोगों को चलना कहां आता है? उत्तर प्रदेश की सड़कों पर रोजाना होने वाली मौतों व हताहतों का आंकड़ा देखिए, किसी महामारी या दुनिया में चल रहे किसी भी युद्ध से ज्यादा ही होगा। हम यूक्रेन, रूस, बेरूत, फलस्तीन, इस्राइल और सीरिया में आए दिन युद्ध से होने वाली मौतों के आंकड़े देखकर चौंकते रहते हैं, लेकिन इस बात का अंदाज ही नहीं है कि बिना बमों के हमले के भी हमारे लोग बेवक्त मर रहे हैं, ये संख्या युद्ध में मरने वालों से ज्यादा ही है। लखनऊ के शहीद पथ और लखनऊ-आगरा एक्सप्रेस-वे पर आए दिन मौतें हो रही हैं। शहीद पथ पर तो हादसों की संख्या ज्यादा ही है। यहां पर मेन रोड से जुड़ने वाले कट व साइड लेन्स पर लोग पूरी रंगबाजी से रॉन्ग साइड चलते हैं। इनमें पुलिस, प्रशासन और वीवीआईपी गाड़ियां सबसे ज्यादा शामिल होती हैं। लोग थोड़ी सी दूरी बचाने के लिए कहीं भी रॉन्ग साइड चल देते हैं। गोमतीनगर में मिठाई वाले चौराहे के ऊपर उत्तर प्रदेश के महान इंजिनियरों ने एक ऐसा विचित्र फ्लाई ओवर बनाया है कि जिस पर चढ़ने व उतरने के लिए लोगों को रॉन्ग साइड आना पड़ता है। अक्सर एकदम पतली सड़क पर दो बड़ी गाड़ियां आमने-सामने हो जाती हैं।

तरीका यह है कि यहां ट्रैफिक पुलिस खड़ी हो। लोगों को रॉन्ग साइड चलने से रोके। जो नहीं मानते, उनका चालान करे और उनके ड्राइविंग लाइसेंस जब्त कर ले। पर नहीं, लखनऊ में पुलिस वाले और ट्रैफिक के लोगों की टॉप प्रियॉरिटी वीवीआईपी मूवमेंट है। गलत तरीके और गलत दिशा में चलने वालों के हौसले इसीलिए बुलंद हैं, क्योंकि उन्हें कानून का कोई डर नहीं। लोग मोबाइल पर बातें करते हुए और यहां तक रील्स देखते हुए गाड़ी चला रहे हैं। अपने इस मनोरंजन के चक्कर में उनकी गाड़ी कई बार इतनी धीमी हो जाती है कि पीछे जाम लग जाता है। लोग झुंझलाते हैं और अपनी गाड़ियों के भीतर चीखते-चिल्लाते हैं। इतने खराब ट्रैफिक के कारण सिर्फ सड़क दुर्घटनाएं ही नहीं हो रही हैं बल्कि लोग मानसिक तनाव, हाई ब्लड प्रेशर और हार्ट अटैक का भी शिकार हो रहे हैं। यूपी के ट्रैफिक के बारे में इसीलिए कहा जाता है कि अगर कोई यहां आधा घंटे तक बिना अपशब्दों व चीख-चिल्लाहट के गाड़ी चला रहा है तो उसे भी संत की उपाधि दी जानी चाहिए। अफसोस की बात है कि इतनी बड़ी संख्या में लोग सड़कों पर मारे जा रहे हैं, पर ट्रैफिक न तो सत्ता वालों के लिए मुद्दा है और न विपक्ष के लिए। आवारा पशुओं का मामला अगर उठाया भी जाता है तो सिर्फ सियासी कारणों से। वरना बात तो यह होनी चाहिए कि क्या अब नई गाड़ियों के रजिस्ट्रेशन पर कंट्रोल नहीं होना चाहिए? क्या ड्राइविंग लाइसेंस जारी करने की प्रक्रिया में कोई बदलाव नहीं होना चाहिए? क्या ट्रैफिक पुलिस को मौजूदा हालात के हिसाब से और ज्यादा प्रफेशनल और ऐक्शन लेने वाला नहीं होना चाहिए? एनकाउंटर में अपराधियों के मारे जाने तक पर सवाल उठ जाते हैं पर सड़क पर दम तोड़ रहे निर्दोष लोगों के लिए कोई आवाज नहीं, कोई आंदोलन नहीं। बहरहाल ऐसे हादसों में बेवक्त दुनिया छोड़कर गए लोगों के परिवारों के दर्द पर मुजफ्फर रज्मी का यह शेर और बात खत्म कि-

ये जब्र भी देखा है तारीख की नजरों ने
लम्हों ने ख़ता की थी सदियों ने सज़ा पाई

ऑफ़ दि ट्रैक

एक अनोखा सेब

दिलीप लाल

क्लाइमेट चेंज ने खेती पर बुरा असर डाला है। चिंता उभर रही है कि आने वाले बरसों में दुनिया की बढ़ती आबादी का पेट भरा कैसे जाएगा। इसका जवाब Tutti दे सकता है। पिछले साल बर्लिन के एक व्यापार मेले में इसे पहली बार सबके सामने लाया गया था। इसके गुलाबी रंग और रसीले स्वाद ने सभी को आकर्षित किया, लेकिन इसकी सबसे बड़ी खासियत है अधिक तापमान को भी सहन कर लेना। Tutti सेब की एक प्रजाति है, जो 40 डिग्री सेल्सियस तापमान को भी सहन कर सकती है। इसे जीन एडिटिंग के जरिये तैयार किया गया है। आमतौर पर तापमान में एक डिग्री का हेरफेर भी फसलों को नुकसान पहुंचाता है, लेकिन Tutti की सफलता ने जलवायु परिवर्तन से निपटने की एक नई राह दिखा दी है। इस प्रॉजेक्ट पर स्पेन और न्यूजीलैंड के रिसर्चर्स ने मिलकर काम किया है। अब इस प्रजाति को अमेरिका, चिली और चीन में भी उगाया जा रहा है। साथ ही, इसी तरह अन्य फल और सब्जियों पर भी काम चल रहा है। बार्सिलोना एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक आलू की नई प्रजातियों पर भी काम कर रहे हैं। ऑस्ट्रेलियन नैशनल यूनिवर्सिटी में प्लांट साइंटिस्ट ओवन एटकिन बताते हैं कि गर्मी बढ़ने पर पौधों की जमीन और पानी से पोषण ग्रहण करने की क्षमता प्रभावित होती है, उनमें मौजूद जरूरी प्रोटीन नष्ट होने लगता है। हमारे सामने इस नुकसान को बचाने की चुनौती है और एक सेब ने दिया दिया है कि हम सफल हो सकते हैं।

क्या रिटायरमेंट की उम्र को लेकर BJP और संघ में चल रही रस्साकशी

75 साल पर क्यों मचा है बवाल

पूनम पाण्डे

चुनाव के सीजन में राजनीतिक दलों के नेता एक-दूसरे पर हमले भी तेज कर देते हैं। अगले साल दिल्ली में विधानसभा चुनाव होने हैं तो इसकी भी अपनी रस्साकशी चल रही है। दिल्ली के पूर्व सीएम और आम आदमी पार्टी नेता अरविंद केजरीवाल लगातार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को लेकर सवाल पूछ रहे हैं। वह पूछ रहे हैं कि क्या पीएम मोदी 75 साल में रिटायर होंगे? प्रधानमंत्री मोदी अगले साल 17 सितंबर को 75 साल के हो जाएंगे।

75 साल का नियम | लोकसभा चुनाव के वक्त जब अरविंद केजरीवाल ने यह सवाल पूछा था तो केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने 11 मई को प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा था, '75 साल में रिटायरमेंट का BJP के संविधान में कोई जिक्र नहीं है। मोदी जी यह टर्म पूरा करेंगे। मोदी जी ही आगे देश का नेतृत्व करते रहेंगे। BJP में कोई कन्फ्यूजन नहीं है।'

मार्गदर्शक मंडल | सवाल यह है कि जब BJP के संविधान में इसका कोई जिक्र नहीं है तो यह बात बार-बार क्यों आती है कि 75 साल का होने के बाद मोदी मार्गदर्शक मंडल में चले जाएंगे? दरअसल, जब अमित शाह BJP के राष्ट्रीय अध्यक्ष थे तब 26 अगस्त 2014 को पार्टी की ओर से एक प्रेस रिलीज जारी की गई थी। उसमें कहा गया था कि 'BJP अध्यक्ष अमित शाह ने पार्टी की गतिविधियों के मार्गदर्शन के लिए वरिष्ठ नेताओं की मार्गदर्शक मंडल में नियुक्ति की है'। इस लिस्ट में अटल बिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी के नाम थे। साथ ही, इस लिस्ट में नरेंद्र मोदी और राजनाथ सिंह के नाम भी थे।

रिटायरमेंट की चर्चा | मार्गदर्शक मंडल को रिटायरमेंट जैसा मानने की शुरुआत तब हुई, जब अमित शाह के अध्यक्ष रहते BJP का नया संसदीय बोर्ड बना तो उसमें अटल बिहारी, लालकृष्ण आडवाणी और मुरली मनोहर जोशी का नाम नहीं था। पार्टी का सबसे ताकतवर निकाय संसदीय बोर्ड ही है। तब पहली बार मध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान और पार्टी के तत्कालीन महासचिव जेपी नड्डा को इसमें जगह दी गई थी।

क्यों बन गया मुद्दा
- कई बुजुर्ग नेता सक्रिय राजनीति से बाहर
- विपक्षी दलों ने खड़ा किया है सवाल
- संघ नेतृत्व का रुख नहीं हो रहा स्पष्ट

राजनीति में उम्र | हर चुनाव में इस बात की चर्चा होती है कि BJP 75 साल से ज्यादा उम्र के नेताओं को टिकट नहीं देगी और वहां 75 साल में रिटायर हो जाते हैं। इन चर्चाओं का BJP ने कभी कोई खंडन नहीं किया। पिछले साल कर्नाटक विधानसभा चुनाव के दौरान पूर्व सीएम बीएस येदियुरप्पा को लेकर जब एक न्यूज चैनल के प्रोग्राम में शाह से पूछा गया तो उन्होंने जवाब दिया कि 'कांग्रेस में रिटायरमेंट का कॉन्सेप्ट ही नहीं है। कांग्रेस की व्याख्या है कि राजनीति में सक्रियता का मतलब है चुनाव लड़ना और सत्ता प्राप्त करना। मेरी पार्टी में ऐसा नहीं है।'

पार्टी संविधान में बदलाव | यह बात सही हो सकती है कि BJP के संविधान में अभी रिटायरमेंट की उम्र जैसा कोई प्रावधान नहीं है। लेकिन BJP के संविधान में बदलाव पहले भी किया गया है। नितिन गडकरी 2010 से 2013 तक BJP के राष्ट्रीय अध्यक्ष रहे। जब उनका कार्यकाल खत्म हो रहा था तब उससे पहले सितंबर 2012 में ही पार्टी ने संविधान में संशोधन किया ताकि गडकरी लगातार दूसरे टर्म में भी अध्यक्ष बन सकें। इससे पहले यह नियम था कि कोई लगातार दो टर्म अध्यक्ष नहीं बन सकता। हालांकि भ्रष्टाचार के आरोपों की वजह से गडकरी ने पद स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। बदले हुए नियम के तहत ही अमित शाह 2014 से 2020 तक राष्ट्रीय अध्यक्ष रहे।

संघ का मत | संघ की तरफ से कोई निर्देश तो कभी नहीं दिए गए, लेकिन संघ से जुड़े लोगों के मुताबिक भारतीय जनसंघ के नेता रहे नानाजी देखमुख कहते थे कि राजनेताओं को जिंदगी भर सत्ता में रहने के बजाय एक उम्र के बाद सामाजिक जीवन में काम करना चाहिए और अपने लंबे अनुभव का लाभ सरकारी योजनाओं को लोगों तक पहुंचाने में देना चाहिए। नानाजी ने खुद इसकी मिसाल भी पेश की। नानाजी ने भारत सरकार में कैबिनेट पद स्वीकार करने से इनकार करके सक्रिय राजनीति से संन्यास ले लिया और फिर 1978 में गोंडा ग्रामोदय प्रॉजेक्ट का उद्घाटन किया। नानाजी तब 62 साल के थे। दीनदयाल शोध संस्थान के तहत फिर कई जिलों में इस तरह के प्रॉजेक्ट शुरू हुए।

नियम नहीं, नैतिकता | नानाजी ने राजनीति में बड़ा पद छोड़कर समाज में काम करने का उदाहरण पेश किया और इसीलिए दीनदयाल शोध संस्थान ने उन्हें राष्ट्र ऋषि कहा। केसी सुदर्शन जब सरसंघचालक थे तब भी कई बैठकों में इस पर बात हुई थी कि क्या 60 साल में सक्रिय राजनीति से संन्यास ले लिया जाना चाहिए। हालांकि इसको कोई नियम नहीं बल्कि नैतिक उपदेश माना गया।

AI की लड़ाई

AI के क्षेत्र में हालिया बरसों में जो तरक्की दिखी है, OpenAI उसका पर्याय बनकर उभरी है। एक समय इसे भविष्य की दुनिया गढ़ने वाला बताया जा रहा था। क्या हुआ जो गलत वजहों से सुर्खियों में घिरी कंपनी?

लक्ष्य से भटकाव
OpenAI की स्थापना नॉन-प्रॉफिट ऑर्गेनाइजेशन के रूप में हुई थी। संस्थापकों में थे सैम अल्टमैन, ईलॉन मस्क, इम्फोसिस और दूसरे लोग। लक्ष्य था AI से जुड़ी रिसर्च। लेकिन, आरोप लग रहे कि कंपनी लक्ष्य से भटक रही है।

पैसों पर पेच
मस्क ने OpenAI में माइक्रोसॉफ्ट के इन्वेस्टमेंट का विरोध किया था। दूसरे संस्थापक भी इसके खिलाफ थे। पिछले साल बोर्ड डायरेक्टर्स के साथ अल्टमैन का विवाद इसी वजह से हुआ था।

AI image

5 पॉइंट

मुनाफे की होड़
कंपनी की चीफ टेक्नॉलजी ऑफिसर मीरा मुराती का इस्तीफा कंपनी के लिए हालिया बड़ा झटका है। इसे भी अल्टमैन के उस प्रयास से जोड़ा जा रहा, जिसके तहत वह कंपनी का कॉरपोरेट स्वरूप बदलकर उसे प्रॉफिट ऑर्गेनाइजेशन में बदलने जा रहे हैं। Apple और Nvidia जैसी बड़ी फर्म पैसा लगा सकती हैं।

बदलाव क्यों
AI की दुनिया बेहद महंगी है और तेजी से बदल भी रही। लैंग्वेज मॉडल से टेक्नॉलजी जल्द ही विजन लैंग्वेज एक्शन मॉडल पर आ गई। ऐसे में रिसर्च के लिए बड़ी मात्रा में पैसा चाहिए। जब दूसरी कंपनियां इस सेक्टर में आएंगी, तो वे बदले में मुनाफा भी चाहेंगी।

आगे की चुनौतियां
कंपनी स्ट्रक्चर बदलने के बाद निवेशकों की राय अहम होगी। हालांकि ऐसी कंपनियों में अस्थिर मैनेजमेंट बड़ी समस्या होता है। अल्टमैन के साथ विश्वास से जुड़ा संकट खड़ा हो सकता है।

प्रस्तुति : शैलेंद्र पांडेय

बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन? सही है

खेती, जंगल और शहरों से निकलने वाले जैविक कूड़े यानी बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन बनाने की तैयारी वैज्ञानिक शुरू कर चुके हैं। उनका मानना है कि भविष्य में ऊर्जा के स्थायित्व और क्लाइमेट चेंज पर नियंत्रण में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका इसी की होगी। नोबेल सम्मान से सम्मानित अमेरिका के प्रो. जॉन बी गुडनफ की देखरेख में शोध करने वाले IIT, BHU के वैज्ञानिक डॉ. प्रीतम सिंह का दावा है कि भविष्य ग्रीन हाइड्रोजन का ही है। सरकार को इससे जुड़े इनोवेशन, बेसिक रिसर्च और रिसर्च एंड डिवेलपमेंट पर ठीक से ध्यान देना होगा। प्रस्तुत हैं उनसे हुई सुधीर मिश्र की बातचीत के मुख्य अंश :

सप्ताह का इंटरव्यू

डॉ. प्रीतम सिंह

> भारत में अलग-अलग मौसमों में तरह-तरह की फसलें होती हैं। गेहूं को ही लें तो एक किलो गेहूं निकालने में तीन किलो भूसा निकलता है। तकरीबन हर फसल से इस तरह के अपशिष्ट निकलते हैं जिनका इस्तेमाल ग्रीन हाइड्रोजन बनाने में किया जा सकता है। देश की ऊर्जा से जुड़ी जरूरतों को पूरा करने के लिए यह बायोमास पर्याप्त ही नहीं बल्कि ज्यादा है

■ ग्रीन हाइड्रोजन क्या है और इसे बायोमास से कैसे पैदा किया जा सकता है?

अगर हाइड्रोजन का उत्पादन ऊर्जा के ऐसे स्रोत से हो रहा है, जिसमें कार्बन उत्सर्जन नहीं होता तो उसे हम ग्रीन हाइड्रोजन कहते हैं। जैसे सोलर या विंड एनर्जी से बनी बिजली के इस्तेमाल से बनने वाली हाइड्रोजन। पानी के अलावा बायोमास से भी हाइड्रोजन बनाई जाती है। इसमें टैड तकनीक का इस्तेमाल होता है। इसमें बेहद ऊंचे तापमान पर ऑक्सिजन की गैर-मौजूदगी में बायोमास का विखंडन होता है। इससे हाइड्रोजन, मीथेन, कोयला, टार, जलवाष्प और कार्बन मोनोऑक्साइड बनती है। टैड रिएक्टर के भीतर कैटलिस्ट या उत्प्रेरक जलवाष्प और कार्बन मोनोऑक्साइड के रिएक्शन से अतिरिक्त हाइड्रोजन व कार्बन डाइऑक्साइड पैदा होती है। इसमें निकलने वाला कोयला भी धुंआ रहित होता है।

■ किस तरह का बायोमास ग्रीन हाइड्रोजन बनाने के लिए बेहतर होता है और क्यों ?

किसी भी तरह का बायोमास ग्रीन हाइड्रोजन बनाने के लिए उपयुक्त है। चाहे वह खेती, जंगल और फसलों से निकले अपशिष्ट हों या फिर एनिमल वेस्ट। हालांकि जो ऊंचे पहाड़ों पर लगने वाले देवदार जैसे पेड़ों से निकले फलों के अवशेष होते हैं, उन्हें हम बेहतर मानते हैं क्योंकि ऊंचाई पर होने के कारण उनमें हाइड्रोजन तत्व ज्यादा होता है।

■ हाइड्रोजन बनाने के पारंपरिक तरीकों की ग्रीन हाइड्रोजन बनाने के इस तरीके से किस तरह तुलना की जा सकती है?

हाइड्रोजन बनाने के ज्यादातर तरीकों में कार्बन उत्सर्जन होता है। इस तरह से बनी हाइड्रोजन को हम ग्रे और ब्लू हाइड्रोजन कहते हैं। ग्रे हाइड्रोजन को तैयार करने में जीवाश्म ईंधन का उपयोग किया जाता है। इसमें बहुत ज्यादा मात्रा में कार्बन गैस निकलती है। हालांकि खर्च कम होता है। एक किलो हाइड्रोजन करीब तीन अमेरिकी डॉलर में बन जाती है। ब्लू हाइड्रोजन ग्रे की तुलना में ज्यादा साफ-सुथरी होती है और इसमें कम कार्बन उत्सर्जन होता है। इसमें ग्रे हाइड्रोजन बनाने के प्रॉसेस को और ज्यादा रिफाइन कर लेते हैं। ग्रीन हाइड्रोजन बनाने के दो तरीके हैं। पहला, पानी के इलेक्ट्रोलिसिस से। इस पद्धति से कीमत करीब 12 डॉलर प्रति किलो आती है। बायोमास से बनाई जा रही ग्रीन हाइड्रोजन की कीमत फिलहाल तीन से पांच डॉलर के करीब आ रही है।

■ बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन बनाने का क्या फायदा है?

बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन बनाने के कई फायदे हैं। इससे हाइड्रोजन तो निकलती ही है, साथ ही खाद, राख, टार, कोयला और फूड ग्रेड की कार्बन डाइऑक्साइड भी मिलती है। फूड ग्रेड कार्बन का इस्तेमाल खाने-पीने की चीजों और उनके रखरखाव में किया जाता है। इसके अलावा इलेक्ट्रोलाइजर में पानी से हाइड्रोजन बनाने के मुकाबले बायोमास से हाइड्रोजन बनाना सस्ता भी है। पानी से एक किलो हाइड्रोजन बनाने में 55 किलोवाट बिजली लगती है, जबकि बायोमास से इतनी हाइड्रोजन 29 किलोवाट में बन जाती है।

■ बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन बनाने में फिलहाल क्या दिक्कतें हैं?

सबसे ज्यादा दिक्कत भरोसे को लेकर है। हमारी तकनीक जिसे टैड कहते हैं, वह कामयाब है। फिर भी इंडस्ट्री को उस पर संदेह हो रहा क्योंकि पिछले 60 साल से जो डायजेस्टर आधारित तकनीक काम कर रही है, वह बहुत प्रभावी नहीं है। इन तरीकों से बायोमास से बायोफ्यूल बनाया तो जा रहा है लेकिन काफी कम। इसी वजह से लोग नई तकनीकों पर भरोसा नहीं कर पा रहे हैं। जबकि हकीकत यह है कि हमारी टैड प्रणाली हर तरह के जैविक अपशिष्ट को बायोफ्यूल में तब्दील कर सकती है और काफी कम बिजली के खर्च में।

■ भारत की ऊर्जा से जुड़ी समस्याओं को खत्म करने में बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन बनाना कितना प्रभावी हो सकता है?

भारत कृषि प्रधान देश है। यहां अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग मौसमों में तरह-तरह की फसलें होती हैं। अब इनमें से गेहूं को ही ले लें। एक किलो गेहूं निकालने में तीन किलो भूसा निकलता है। इस तरह तकरीबन हर फसल से इस तरह के अपशिष्ट निकलते हैं जिनका इस्तेमाल ग्रीन हाइड्रोजन बनाने में किया जा सकता है। हमारे देश की डेढ़ अरब आबादी की ऊर्जा से जुड़ी जरूरतों को पूरा करने के लिए यह बायोमास पर्याप्त ही नहीं बल्कि ज्यादा है। हमारी तकनीक से जब बड़े पैमाने पर ग्रीन हाइड्रोजन बनने लगेगी तो भारत को ईंधन का आयात करने की जरूरत नहीं रहेगी।

बायोमास से ग्रीन हाइड्रोजन बनाने में किस तरह की नीति और नियमों की जरूरत है?

जहां तक पॉलिसी की बात है, उस मामले में भारत अच्छा कर रहा है। बस नीतियों के कार्यान्वयन पर ध्यान देने की जरूरत है। सरकार की ओर से इस क्षेत्र में काम करने वाले सही लोगों की पहचान करके उनका उत्साह बढ़ाना चाहिए।

■ क्या अभी बायोमास से हाइड्रोजन बनाने का कोई प्रॉजेक्ट कामयाबी से काम कर रहा है?

फिलहाल न तो बायोमास से और न ही इलेक्ट्रोलिसिस के जरिए ग्रीन हाइड्रोजन बनाने के किसी प्रॉजेक्ट को कामयाब कहा जा सकता है। देश और दुनिया में जहां भी ये प्रॉजेक्ट चल रहे हैं, वह अपनी पुरानी तकनीक के कारण लक्ष्यों को पूरा करते नजर नहीं आते। अभी इनमें काफी ज्यादा कार्बन मोनोऑक्साइड निकलती है और बिजली भी काफी ज्यादा इस्तेमाल होती है।

बालू से 'युद्ध' करता सांड़!

सवेरे से बारिश हो रही थी। जैसे ही रुकी, घर से बाहर निकली। एक किताब से फोटो कॉपी करानी थी। पैर फिसलने के खतरे से बचते-बचाते, सायबर कैफे की तरफ चल पड़ी। उस गली के मुहाने पर पहुंची, जहां सायबर कैफे है, तो वहां का गेट बंद दिखा। पलटने ही वाली थी कि किनारे पर छोटा सा खुला गेट दिखा जो, जाहिर है, पैदल चलने वालों की सुविधा के लिए रखा गया होगा। अंदर आई, तो समझ में आया कि गेट क्यों बंद था। कोने का एक मकान बन रहा है, जिसमें प्रयोग होने वाली बालू का ढेर सड़क पर लगा था। सड़क बंद हो गई थी और वाहनों का आना-जाना मुश्किल था। खैर, सायबर कैफे वाले के पास पहुंचकर उसे काम बताया और इंतजार करने लगी। अचानक मैंने देखा कि सायबर कैफे वाला लड़का खूब मुस्कुरा रहा है और सड़क की तरफ देख रहा है। पीछे मुड़कर देखा, तो हैरान रह गई। एक लंबा-चौड़ा सफेद सांड सड़क पर पड़ी बालू से युद्ध कर रहा था। वह अपने पैने नुकीले सींगों को बार-बार बालू के ढेर पर जोर से मारता, बालू दूर तक उड़ती, फिर मारता। उसकी आंखों और नथुनों में भी बालू जा रही होगी, मगर जैसे उसे उसकी परवाह नहीं थी। मंदिर के सामने बैठे फूल बेचने वाले ने पहले हो-हो करके उसे भगाने की कोशिश की, मगर सांड़ कहां माने। तब वही फूल वाला मंदिर के अंदर से गिलास में भरकर पानी लाया और सांड़ के ऊपर पानी के छींटे मारने लगा। पानी से घबराकर सांड़ ने बालू में सींग मारना छोड़ दिया और उसी रास्ते पर आगे बढ़ गया, जिससे मैं आई थी। डर लगा कि यह भारी-भरकम सांड़, क्या उस छोटे गेट से बाहर निकल सकेगा या वहीं खड़ा रहेगा। अगर ऐसा हुआ, तो वापस कैसे जाऊंगी! वैसे भी गोवंश में अब ऐसे दिन आने वाले हैं, जब बछड़े पैदा ही नहीं हुआ करेंगे। वैज्ञानिकों ने ऐसी व्यवस्था की है कि सिर्फ बछिया ही जन्म लें क्योंकि बछड़े जो बड़े होकर बैल बनते थे, ट्रैक्टर के होते उनकी उपयोगिता खत्म हो चुकी है। मनुष्य का लालच तो देखें कि अब वह इस प्रजाति को खत्म करने पर तुला है। जो प्रजातियां धरती से नष्ट हो चुकी हैं, उन्हें विज्ञान जीवित करना चाहता है और जो हैं उनकी कोई कीमत नहीं। इसलिए हो सकता है कि सांड़ ने जो करतब दिखाए, वे फिर कभी देखने को न मिलें। यही सोचते लौटने लगी। चलने से पहले उस दरवाजे की तरफ देखा कि कहीं वहां सांड़ तो नहीं खड़ा है। लेकिन वह दूर सड़क पर कूड़े में से कुछ ढूंढता दिखा। मैं घर की तरफ आगे बढ़ने लगी तो देखा, सांड़ धीमी गति से चला आ रहा है। कहीं पीछे से आकर सींग मार दे, तो क्या होगा। उससे बचने के लिए मैं तो तेज गति से भाग भी नहीं सकती। संयोग से तभी एक ई-रिक्शा आया। उसे रोककर बैठ गई और उसके चलते ही पीछे मुड़कर देखा। सांड़ धीमी गति से चला रहा था। लेकिन मेरे सामने अब भी यह प्रश्न बना हुआ था कि आखिर उसने बालू के ढेर पर इतने सींग क्यों मारे थे। घर लौटकर पति को इस घटना के बारे में बताया तो वह बोले-सांड़ और बैलों को रेत-मिट्टी से खेलने की आदत होती है। ओह, तो क्या मैंने सांड़ को अपना प्रिय खेल खेलते देखा था?

ख़ुद अपनी आंख से

क्षमा शर्मा

चलते-चलते...

चीन के तारिम बेसिन के शियाओहे कब्रिस्तान में लगभग 20 साल पहले वैज्ञानिकों को कई ममी मिली थीं और इन सभी पर एक रहस्यमय सफेद पदार्थ पड़ा हुआ था। लंबी रिसर्च और DNA जांच के बाद पता चला है कि वह पदार्थ दरअसल kefir cheese था, गाय और बकरी के दूध से तैयार। इसे दुनिया का सबसे पुराना चीज माना जा रहा है।

रीडर्स मेल

▸ आपदा से बचाव की ट्रेनिंग जरूरी

लखनऊ में पिछले दिनों इमारत गिरने व आग लगने जैसी घटनाओं में खासा बढ़ोतरी हुई है। हमारे देश में ऐसे हादसे और प्राकृतिक आपदाओं की संख्या किसी और देश की अपेक्षा कहीं ज्यादा है। ऐसे में सरकार को आमजन को ऐसे हादसों से निपटने के लिए ट्रेनिंग देने की जरूरत है। इस दिशा में पिछले कुछ सालों पहले केंद्र के स्तर पर NDRF और राज्य स्तर SDRF का गठन किया गया है। इसके बावजूद इस दिशा में बहुत काम की जरूरत है। हमारे देश में बाढ़, भूकंप और आग लगने की घटनाओं में हरसाल लाखों लोगों की जान जाती है। ऐसे में यह जरूरी हो जाता है कि स्कूल स्तर पर इस आपदाओं में खुद की रक्षा करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाए और ये प्रशिक्षण अनिवार्य हो, जिससे इस तरह के हादसों में हमें ज्यादा से ज्यादा लोग वॉलंटियर्स के रूप में मिल सकें। जिम्मेदारों को इस बारे में गंभीरता से विचार करना चाहिए।

विशाल चौबे, गोमतीनगर, लखनऊ

▸ संभल कर करें इस्तेमाल

स्मार्टफोन ने हमारे जीवन में बहुत बदलाव किए हैं। ये बदलाव सकारात्मक भी हैं और नकारात्मक भी। स्मार्टफोन के कारण स्क्रीनटाइम बहुत ज्यादा बढ़ गया है। लोग परिवार के लोगों के साथ समय बिताने की अपेक्षा फोन पर ज्यादा समय बिता रहे हैं। ऐसे में समाज पर दुष्प्रभाव पड़ रहा है। लोग एक ही छत के नीचे रहकर भी अपने पारिवारिक सदस्य से संवाद नहीं कर रहे हैं। छात्र अपने लिए उपयोगी कंटेंट की जगह अनावश्यक चीजों पर ज्यादा ध्यान केंद्रित कर रहा है। यह समस्या किसी देश की नहीं है बल्कि वैश्विक स्तर पर इस तरह की समस्या से दो-चार होना पड़ रहा है। स्थिति इतनी भयावह हो गई कि दो साल का बच्चा भी बिना मोबाइल देखे खाना नहीं खाता है। ऐसे में अभिभावकों की बड़ी जिम्मेदारी बनती है कि वे इस मुद्दे को लेकर सतर्क रहें। खुद के साथ यह भी ध्यान रखें कि बच्चे मोबाइल पर कितना समय बिता रहे हैं। समय रहते इस पर ध्यान नहीं दिया गया तो यह समस्या बड़ी हो सकती है।

नीतेश कुमार, सिद्धार्थनगर

[illegible]

6 | संपादकीय
जनसत्ता | 28 सितंबर, 2024

कल्पमेधा

जो कुछ भी हम करते हैं, हम केवल उसी के लिए उत्तरदायी नहीं होते, बल्कि जो कुछ हम नहीं करते हैं, उसके लिए भी उत्तरदायी होते हैं।

– मौलियर

पहचान का सवाल

कुछ राजनेता सार्वजनिक बयान देते वक्त शायद ध्यान नहीं रख पाते कि किसी मसले पर उनकी सरकार और पार्टी का क्या रुख है। इसलिए अक्सर वे विवाद के घेरे में आ जाते हैं। हिमाचल प्रदेश के लोक कल्याण मंत्री विक्रमादित्य सिंह का सड़क किनारे कारोबार करने वालों के लिए पहचान प्रदर्शित करने की अनिवार्यता संबंधी बयान भी कुछ ऐसा ही था। उन्होंने सोशल मीडिया पर लिखा कि हिमाचल में भी उत्तर प्रदेश की तर्ज पर सड़क पर कारोबार करने वालों के लिए दुकान के सामने अपना नाम और पहचान लिखना अनिवार्य किया जाएगा। इस बयान पर हिमाचल प्रदेश सरकार सतर्क हुई और उसने अपने मंत्री के बयान का खंडन करते हुए कहा कि सरकार ने ऐसा कोई फैसला नहीं किया है। इस बयान पर विक्रमादित्य सिंह को केंद्रीय नेताओं की नसीहत भी सुननी पड़ी। हालांकि उन्होंने अपने बयान के बारे में सफाई दे दी है, मगर इससे कांग्रेस को असहज होना पड़ा है। कांवड़ यात्रा के समय जब उत्तर प्रदेश सरकार ने आदेश जारी किया था कि यात्रा मार्ग के सभी दुकानदारों को दुकान के सामने अपना नाम लिखना होगा, तब कांग्रेस ने उसका पुरजोर विरोध किया था। आखिरकार सर्वोच्च न्यायालय की फटकार के बाद उत्तर प्रदेश सरकार को वह आदेश वापस लेना पड़ा था।

विक्रमादित्य सिंह ने उस प्रकरण से कोई सबक लेना शायद जरूरी नहीं समझा। इसके अलावा उन्होंने वक्त की नजाकत भी नहीं समझी। उनका बयान ऐसे समय में आया, जब हिमाचल प्रदेश के शिमला और मंडी समेत कई जगहों पर मस्जिदों के लिए कथित रूप से अवैध रूप से जमीन कब्जा करने का मुद्दा गरमाया हुआ है। इसी संदर्भ में मांग उठी थी कि बाहर से आने वाले मजदूरों और सड़क किनारे कारोबार करने वालों का पंजीकरण होना चाहिए। इसे लेकर राज्य सरकार ने एक समिति भी गठित की है, जिसके सदस्य विक्रमादित्य सिंह भी हैं। निश्चय ही उनका उत्तर प्रदेश जैसा नियम लागू करने का विचार रहा होगा, जिसे उन्होंने सरकार और समिति के सामने रखने के बजाय सार्वजनिक मंच पर साझा कर दिया। यों भी एक परिपक्व नेता से अपेक्षा की जाती है कि जब तक वह किसी मसले पर अंतिम निर्णय न ले ले और सरकार उसे स्वीकार न कर ले, तब तक उस पर बयानबाजी से बचने का प्रयास करे।

दरअसल, सड़क किनारे या बाजारों में दुकान चलाने वालों के पंजीकरण, पहचान प्रदर्शित करने आदि को लेकर कुछ संवैधानिक प्रावधान हैं। जीवन के अधिकार के तहत किसी भी व्यक्ति को देश के किसी भी हिस्से में अपने भरण-पोषण के लिए रोजगार करने का अधिकार है। इसके लिए पहचान प्रदर्शित करने की अनिवार्यता नहीं है। इसलिए यह एक कानूनी मसला भी है। मगर कुछ राज्य सरकारें सुरक्षा कारणों से या फिर खानपान में स्वच्छता आदि के मद्देनजर कुछ प्रावधान करने पर विचार कर रही हैं। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी कावड़ियों के खानपान में शुद्धता रखने का ही तर्क दिया था। यह ठीक है कि कई मामलों में प्रवासियों को अपनी पहचान जाहिर करनी पड़ती है, जैसे वाहन चालकों को, पर ऐसे प्रावधान से अगर किसी के धार्मिक पहचान के आधार पर सामाजिक अलगाव झेलने पर मजबूर होने की आशंका हो, सावधानी से निर्णय की जरूरत होती है। अभी हिमाचल प्रदेश में जिस तरह का वातावरण है, उसमें ऐसे किसी भी आदेश से सड़क किनारे कारोबार करने वालों के सामने कठिनाइयां पैदा हो सकती हैं।

खतरे में बचपन

राजधानी दिल्ली में एक नाबालिग किशोर के साथ हुई बर्बरता यही दर्शाती है कि कम उम्र के बच्चों के लिए खतरा और बढ़ता जा रहा है। दिल्ली के जहांगीरपुरी इलाके में रहने वाले चार लोगों ने बंदूक की नोक पर सत्रह वर्ष के एक बच्चे को न केवल बुरी तरह मारा-पीटा, घसीटा, जूते चाटने पर मजबूर किया, बल्कि उसे परेशान और अपमानित करने के लिए उसका यौन उत्पीड़न भी किया और इस सबका वीडियो बनाकर सोशल मीडिया पर डाल दिया। अंदाजा लगाया जा सकता है कि किशोर से ऐसा बर्ताव करने वाले आरोपी किस कदर घृणा और विकृति से भरे हुए होंगे। आरोपियों के भीतर न केवल कानून का खौफ नहीं था, बल्कि वे इस बात को लेकर भी बेफिक्र थे कि जब कानून के हाथ उन तक पहुंचेंगे तब उन्हें क्या सजा मिल सकती है। सही है कि आपराधिक घटनाएं पहले भी होती रही हैं। मगर आपराधिक मानस वालों के और ज्यादा विकृत होते जाने की क्या वजहें हो सकती हैं और अपराधियों के निशाने पर अब कम उम्र के बच्चे ज्यादा क्यों आने लगे हैं।

दरअसल, पिछले कुछ समय से अपराधों की बदलती प्रकृति और उसमें निशाने पर बच्चों का आना गंभीर चिंता की बात है। आए दिन ऐसी वारदात सामने आ रही हैं, जिसमें या तो किसी बच्चे की हत्या कर दी गई या फिर उसे बुरी तरह प्रताड़ित किया गया। जो लोग पहले से ही अपराध की दुनिया में होते हैं, उनके लिए कमजोर होने के नाते बच्चे आसान शिकार होते हैं, वहीं आसपास बदलते माहौल, अपराध और अश्लील सामग्री तक बेलगाम पहुंच की वजह से कई बार सहज जीवन जीते कुछ लोग भी विकृति का शिकार होकर बच्चों को निशाना बनाते हैं। हाल ही में हाथरस में एक स्कूल के संचालक ने महज अपने स्कूल की तरक्की के लिए अंधविश्वास में आकर एक बच्चे की बलि देनी चाही और बच्चे के शोर मचा देने पर उसकी गला दबा कर हत्या कर दी। यानी चौतरफा बनती परिस्थितियों में बच्चों के जीवन के सामने खतरा बढ़ रहा है। अगर समय रहते नीतिगत और जमीनी स्तर पर ठोस पहलकदमी नहीं हुई, तो भविष्य के समाज और उसमें बच्चों की स्थिति की बस कल्पना भर की जा सकती है।

निजीकरण बनाम कल्याणकारी राज्य

इन दिनों एक अजीब द्वंद्व या छलावा भी दिखता है, जब कल्याणकारी राज्य की जिम्मेदारी के साथ-साथ सरकारों द्वारा अपने चुनावी वादों को पूरा करने के लिए सामाजिक कल्याण को आर्थिक नीतियों में ज्यादा तरजीह दी जा रही है।

परमजीत सिंह वोहरा

निजी क्षेत्र का अनावश्यक पक्ष लेना अब बंद करना होगा। अब ऐसे आर्थिक सुधारों की नींव रखने का समय आ गया है, जिसमें 'कल्याणकारी राज्य' के लिए निजी क्षेत्र को भी बराबर का जिम्मेदार बनाया जाए। इस समय स्थितियां बड़ी विपरीत हैं। हम आर्थिक तरक्की के भ्रम में दिन-ब-दिन खुद को हांक रहे हैं। दूसरी तरफ, इस बात की स्वीकृति भी दे रहे हैं कि देश के गरीब आदमी की आय बढ़ाने के लिए एक लंबा सफर तय करना अभी बाकी है। गरीबी दूर करने के लिए आर्थिक असमानता एक मुख्य बाधा है। इन दिनों एक अजीब द्वंद्व या छलावा भी दिखता है, जब कल्याणकारी राज्य की जिम्मेदारी के साथ-साथ सरकारों द्वारा अपने चुनावी वादों को पूरा करने के लिए सामाजिक कल्याण को आर्थिक नीतियों में ज्यादा तरजीह दी जा रही है। इससे आर्थिक विकास पर बहुत विपरीत असर पड़ रहा है। राजनीतिक दलों के चुनावी घोषणापत्रों में वह सब कुछ शामिल हो रहा है, जो लोकलुभावन अधिक है, सर्वहित के लिए कम कल्याणकारी है। इससे राज्यों पर आर्थिक दबाव लगातार बढ़ रहा है।

नब्बे के दशक में उदारीकरण से निजी क्षेत्र को आगे बढ़ने का मौका मिला, पर अब समय आ गया है कि कल्याणकारी राज्य और सामाजिक कल्याण दोनों का मिश्रण गरीबी दूर करने के लिए एक मुख्य उद्देश्य के तौर पर आर्थिक नीतियों में जगह ले और उसके संचालन की जिम्मेदारी सरकारों के साथ-साथ निजी क्षेत्र भी उठाए। भारत में कभी आर्थिक नीतियों में निजी क्षेत्र को एकाधिकार नहीं दिया गया। आजादी के बाद से आर्थिक नीतियां सरकारी संरक्षण में ही रहीं। हालांकि आर्थिक विकास के आंकड़े इस बात की गवाही देते हैं कि सरकारी संरक्षण में बनी, पलीं और बढ़ीं आर्थिक नीतियां, जिन्हें लोकहितकारी राज्य बनाने की सोच से देश के आर्थिक विकास को एक सुस्त वृद्धि ही मिली। इसी कारण हम विकसित मुल्कों की तुलना में पिछड़ते गए।

इन दिनों अमेरिका में आर्थिक नीतियों का विरोध हो रहा है। वहां इस बात की मांग उठ रही है कि अर्थव्यवस्था का रुख अब पूंजीवाद से समाजवाद की तरफ मुड़ना चाहिए। इसके बाद से यह चर्चा विश्व की सभी बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में भी शुरू हो गई है कि बदलाव का रुख उन्हें भी अपनाना होगा या उसमें अभी देरी है। भारत में भी पिछले कुछ अरसे से यह सुनने को मिलता है कि देश में पूंजीपतियों की संख्या बढ़ रही है, जबकि गरीबी कम नहीं हो रही। यह कोई हैरत की बात नहीं, बल्कि पूंजीवादी आर्थिक नीतियों के चलते पैदा हुई आर्थिक विषमता का परिणाम है। समाज में पूंजीवाद का विरोध इसलिए भी जायज लगता है कि करीब सभी जगह सरकारें आर्थिक विकास की बागडोर पूरी तरह निजी क्षेत्र के हवाले कर देती हैं और कई दफा उनकी गलतियों के बावजूद उन्हें संरक्षित भी करती हैं। अमेरिका में तो यह सब बहुत आम हो गया है। 2005-06 में निजी क्षेत्र की गलत नीतियों के चलते ही अमेरिका में मंदी का सामना करना पड़ा। मगर यह सोचना भी आवश्यक

है कि क्या समाजवाद के माध्यम से आर्थिक विकास को वह तेजी दी जा सकती है, जो पूंजीवाद की नीतियों से मिलती है?

आर्थिक नीतियों के सरकारी संरक्षण के दौरान भारत में 1960 से 1990 के तीन दशकों में प्रति व्यक्ति औसत आय में वृद्धि मात्र 1.6

> **अगर पूंजीवादी आर्थिक नीतियों से आर्थिक विकास तेजी से बढ़ता है, तो फिर इसका आमजन में विरोध क्यों हैं? इसके पीछे कुछ संभावित कारणों में से एक, सरकारों द्वारा निजी क्षेत्र को बहुत हद तक संरक्षित करना है। अमेरिका के संदर्भ में इसे कई दफा दिवालिया होने वाली कंपनियों को बचाने से समझा जा सकता है, तो वहीं भारत के संदर्भ में इसे व्यक्तियों की वित्तीय आय पर लगने वाला कर तुलनात्मक रूप से कंपनियों के मुनाफे पर लगने वाले कर से बहुत अधिक है। इसकी पुष्टि आर्थिक आंकड़ों से हो जाती है।**

फीसद थी। 1990 के बाद से अब तक यह 3.6 फीसद रही। वहीं वर्ष 2005 से वर्ष 2010 तक का समय आर्थिक सुधारों के कारण काफी तेजी से बढ़ने का था। इसलिए वृद्धि दर 4.3 फीसद थी और 2010 के बाद से प्रति व्यक्ति विकास दर ने अपने अधिकतम स्तर 4.9 फीसद को छुआ। गौरतलब है कि 1991 के बाद भारतीय आर्थिक नीतियों में उदारीकरण को सम्मिलित कर लिया गया था और फिर सरकारी नियंत्रण लगातार कम होता चला गया। वर्ष 1975 तक भारत, चीन और वियतनाम में प्रति व्यक्ति आय लगभग बराबर थी, पर वर्ष 2000 के बाद से चीन और वियतनाम में प्रति व्यक्ति आय 35 से 50 फीसद के बराबर बढ़ी। आज चीन में प्रति व्यक्ति आय भारत से ढाई गुना अधिक है। इसका कारण भारत में आर्थिक नीतियों में उदारीकरण को काफी देर से शामिल किया जाना रहा है और परिणामस्वरूप प्रति व्यक्ति आय भी एक समय के बाद ही बढ़ी।

अगर पूंजीवादी आर्थिक नीतियों से आर्थिक विकास तेजी से बढ़ता है, तो फिर इसका आमजन में विरोध क्यों हैं? इसके पीछे कुछ संभावित कारणों में से एक, सरकारों द्वारा निजी क्षेत्र को बहुत हद तक संरक्षित करना है। अमेरिका के संदर्भ में इसे कई दफा दिवालिया होने वाली कंपनियों को बचाने से समझा जा सकता है, तो वहीं भारत के संदर्भ में इसे व्यक्तियों की वित्तीय आय पर लगने वाला कर तुलनात्मक रूप से कंपनियों के मुनाफे पर लगने वाले कर से बहुत अधिक है। इसकी पुष्टि आर्थिक आंकड़ों से हो जाती है। वर्ष 2023-24 में भारतीय कंपनियों से मिलने वाले कर की राशि 9.3 लाख करोड़ थी, जो भारतीय अर्थव्यवस्था के जीडीपी का 3.11 फीसद था। वहीं व्यक्तिगत आयकर का संग्रह 10.22 लाख करोड़ के आसपास था, जो जीडीपी का 3.45 फीसद था। क्या इसका अर्थ है कि भारतीय कंपनियां कम मुनाफा कमा रही हैं, इसलिए वे कम कर का भुगतान कर रही है? यह एक गलत अवधारणा है।

एक ताजा आंकड़े के मुताबिक तकरीबन पैंतीस हजार भारतीय कंपनियों का कर से पूर्व का मुनाफा पिछले पांच वर्षों में करीबन 144 फीसद बढ़ा है। इसके अलावा स्टाक मार्केट में सूचीबद्ध पांच हजार कंपनियों के मुनाफे में पिछले पांच वर्षों में 186 फीसद की बढ़ोतरी हुई, जबकि उनके द्वारा दिया गया कर 35 फीसद ही बढ़ा है।

कंपनियों के कर संग्रह में जारी इस कमी के चलते ही पिछले पांच वर्षों में यह जीडीपी के 3.51 फीसद से गिर कर 3.11 फीसद पर आ गया है। वहीं व्यक्तिगत कर संग्रह 2.44 से बढ़कर 3.45 फीसद हो गया है। इसे इस तरह भी समझा जा सकता है कि 1991 के आर्थिक सुधारों के दौर में कंपनियों पर कर की दर 45 फीसद थी, जो वर्तमान समय में घट कर मात्र आधी रह गई है। हालांकि, इसके पीछे का मुख्य कारण भारतीय कंपनियों के उत्पादों को वैश्विक बाजार में प्रतिस्पर्धात्मक कीमत पर लाना है। भारत के संदर्भ में आर्थिक नीतियों में फेरबदल को सदैव लोकतंत्र की छाया में देख कर चलना जरूरी है। मगर भारत ने कभी पूर्ण रूप से पूंजीवाद के प्रारूप को नहीं अपनाया। इसने हमेशा कल्याणकारी राज्य की छवि को बरकरार रखने की कोशिश की है। इस पक्ष पर वर्तमान राजनीति में पारस्परिक विरोधाभास बहुत अधिक है, जिससे आमजन निष्कर्ष नहीं निकाल पा रहा कि सरकार की नीतियां उनके विकास के लिए हैं या उन्हें लुभाने का एक तरीका।

परिधान के रंग

प्रभात कुमार

दुनिया के कई देशों में ऐसी दुकानें खुल रही हैं, जहां कई तरह के कपड़े आदि किराए पर उपलब्ध कराए जा रहे हैं। कोट, सोने के कपड़े, तैरने की पोशाक, बच्चों और बड़ों के लिए जूते वगैरह। सवाल है कि आखिर वे कौन लोग हैं, जो पहनने के इन कपड़ों को खरीदने के बजाय इन्हें कुछ दिनों के लिए किराए पर ले रहे हैं। जाहिर है, इसमें कपड़े की जरूरत की अवधि के पैमाने के समांतर कमजोर होती आर्थिक परिस्थितियों की भूमिका भी होगी। कह सकते हैं कि हमारे समाज की परंपराएं वहां नए अंदाज में लौट रही हैं। हमारे यहां पुराने कपड़ों में से नए छोटे बच्चों के लिए सिल लिए जाते थे। बड़े हो चुके बच्चों के कपड़े छोटे बच्चे, भाई बहन पहनते थे। पिता के कपड़े पुत्र और माताओं की साड़ियां, सूट, स्वेटर, कोट आदि बेटियां पहन लेती थीं।

संभवत अब भी अनेक पिता अपनी कद-काठी के पुत्र के वस्त्र पहनने के लिए तैयार हो जाएंगे, लेकिन शायद पुत्र ऐसा न कर पाएं। विकसित होती या फिर बदलती आर्थिक स्थितियों ने भी इस स्थिति को काफी बदला है। मगर जब पुराने होते जा रहे इंसानों की परवाह कम होती गई है तो पुराने कपड़ों की संभाल कैसे रहेगी! दिलचस्प यह है कि वहां एक साल के बच्चे के ज्यादातर कपड़े किराए पर लिए जा रहे हैं। बच्चे बड़े होते रहते हैं और कपड़े महंगे। महंगे कपड़े किराए पर लेना उचित समझते हुए खरीदने से बेहतर मान लें तो हमारे यहां भी ऐसा शुरू हो सकता है।

हमारा देश और समाज वैसे भी ज्यादा दिखावे वाला, फैशनपरस्त होता जा रहा है। अब तो नए कपड़े खूब खरीदने का रुझान जिंदगी का जरूरी हिस्सा हो गया है। यह बात दीगर है कि उनमें से काफी पोशाकें तो आपस में उलझी, परेशान पड़ी रहती हैं। इस बीच और नए कपड़े खरीद लिए जाते हैं। कुछ वस्त्रालय पुराने कपड़े लेकर नए कपड़ों में छूट का कूपन देते हैं, जिसका नियमित ग्राहक फायदा उठाते हैं, लेकिन वस्त्र बढ़ते जाते हैं।

विवाह में कम न होते दिखावे ने लहंगों के इस्तेमाल और खरीदारी में खूब बढ़ोतरी की है। कपड़े की दुकान में लहंगा मिलना आज जरूरी हो गया है। अनेक दुल्हनें भारी लहंगे का बोझ पहनकर कुछ देर बाद थक जाती हैं, लेकिन विवाह के पारिवारिक, पवित्र, पारंपरिक, सांस्कृतिक, सामाजिक बंधन में मनपसंद लहंगा पहन कर ही प्रवेश करती हैं। हल्के से लेकर भारी वजन का लहंगा उपलब्ध कराया जा रहा है। अगर दुल्हन पतली, कमजोर हो तो लहंगे के साथ 'गैलस' भी दिए जा रहे हैं। शादी के बाद परिवारों में आपसी परेशानियां, पारिवारिक परिस्थितियां, नापसंद लहंगा बनकर आती हैं। धीरे-धीरे पुरानी हो रही नववधू अपना वह लहंगा भूल जाती है जो उसने दौड़-भाग करके कई दुकानें देखकर, मोल-भाव करने के बाद महंगा खरीदा होता है। अक्सर बजट कुछ रहता है और खर्च कुछ और। कभी न कभी यह जरूर लगता है कि लहंगे पर बहुत खर्च हो गया। लहंगा किराए पर लेती तो ऐसा न लगता, लेकिन पुराना वस्त्र तो पुराना होता है! इसीलिए ज्यादातर दुल्हनें नया लहंगा पहनना पसंद करती हैं। विवाह में प्रयोग के बाद लहंगे का गाउन वगैरह भी बनाया जा सकता है। फिलहाल पच्चीस हजार कीमत की साड़ी एक दिन के लिए पांच सौ रुपए किराए में मिल जा सकती है। परिवार की महिलाओं, पड़ोसनों और सहेलियों ने तो एक दूसरे की साड़ियां कभी न कभी पहनी ही होती हैं। देश के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग किस्म की साड़ियों का संग्रह बहुत महिलाओं के पास होगा, जिसमें दर्जन या सैकड़ों के हिसाब से चुनिंदा साड़ियां संभालकर रखी गई होंगी। दूल्हे के मनपसंद परिधान, सूट और अचकन वगैरह भी इन्हीं दुकानों पर जेब की क्षमता में किराए पर मिल जाते हैं। नए तो मिलते ही हैं।

दुनिया मेरे आगे

> **कई संस्थाओं द्वारा पुराने वस्त्र इकट्ठा कर बांटने का अस्थायी सामाजिक सेवा कार्यक्रम रहता है। पहने और बेचे जा सकने वाले पुराने कपड़ों के बदले, स्टील के बर्तन वगैरह देने का सौदा करती हुई महिलाएं शायद अभी भी कई जगह आती होंगी। ऐसे कपड़े सप्ताह के किसी दिन, सड़क किनारे या बाजार की छुट्टी के दिन बिकते देखे गए हैं।**

'नेकी की दीवार' पर टांगे कपड़े काफी लोगों के काम आए होंगे, लेकिन ऐसा भी देखा गया कि कम प्रयोग किए कपड़े एक जगह रखे रह गए। शायद गलत जगह चुन लेने और खराब प्रबंधन के कारण उन वस्त्रों की दुर्गति हुई। कई संस्थाओं द्वारा पुराने वस्त्र इकट्ठा कर बांटने का अस्थायी सामाजिक सेवा कार्यक्रम रहता है। पहने और बेचे जा सकने वाले पुराने कपड़ों के बदले, स्टील के बर्तन वगैरह देने का सौदा करती हुई महिलाएं शायद अभी भी कई जगह आती होंगी। ऐसे कपड़े सप्ताह के किसी दिन, सड़क किनारे या बाजार की छुट्टी के दिन बिकते देखे गए हैं। हमारे यहां विदेश से दान में मिले कपड़े भी खूब बिकते हैं। बताया जाता है कि इनमें से कुछ की गुणवत्ता बेहतर होती है।

पारिवारिक सदस्यों में तो ऐसा हो सकता है कि कपड़ों को बेहतर देखभाल के साथ रखा जाए, बार-बार पहना जाए। इस बारे में सभी छोटे बड़ों को निजी जिम्मेदारी लेनी चाहिए, खासतौर पर ऐसे कपड़े जो महंगे खरीदे हों, उनकी डिजाइन और माप बेहतर हो, रंग पसंद हो। इस तरह कुछ बचत भी की जा सकती है। ऐसे कुछ कपड़े तो हर इंसान की जिंदगी में आते ही हैं जो लंबे अरसे तक, बार-बार पहने जाते हैं। कुछ ऐसे भी होते हैं जो वक्त के साथ पसंद नहीं रहते या शरीर उनके काबिल नहीं रहता। ऐसे कपड़े अगर पहनने लायक हों तो जरूरतमंद तक जरूर पहुंचाने चाहिए।

हिंसक होता समाज

'हिंसा के पांव' (संपादकीय, 25 सितंबर) विचारोत्तेजक है। छोटी-छोटी बातों पर हिंसा आजकल समाज का स्वभाव बनता जा रहा है। सब जानते हैं कि समाज की यह प्रवृत्ति अंततः हमारे स्वस्थ सामाजिक वातावरण और आने वाली पीढ़ियों के लिए घातक है। बच्चों को अनावश्यक रूप से हिंसक बनाया जा रहा है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि घटिया और तुच्छ राजनीति भी काफी हद तक इसके लिए जिम्मेदार है, पर फिर भी सब कुछ चल रहा है और बर्दाश्त किया जा रहा है। बेशक राजनीतिक पार्टियों के लिए यह स्थिति लाभदायक होती है। फिर भी एक स्वस्थ और मूल्यवान समाज के लिए जीवन के बुनियादी नैतिक मूल्यों को छोड़ कर हिंसक प्रवृत्ति को अपनाना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता। एक स्वस्थ समाज को आपसी भाईचारा, सद्भाव और सहिष्णुता ही समृद्ध बनाते हैं। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि चरित्र को ही सबसे ज्यादा अनदेखा किया जा रहा है। बढ़ती हिंसा युवा पीढ़ी में चरित्र के पतन का परिचायक है। देश के बुद्धिजीवी तबके को समाज में बढ़ती हिंसक प्रवृत्ति को रोकने के लिए अविलंब ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

– इशरत अली कादरी, खानूगांव, भोपाल

बेलगाम बयान

समाज में नेता को लोग जनप्रतिनिधि के तौर पर ही नहीं, बल्कि एक आदर्श के तौर पर भी देखते हैं। जहां दो तीन दशक पहले के नेताओं को हम देखते हैं तो उनकी भाषा में मर्यादा होती थी, लेकिन आज आए दिन नेताओं की बदलती भाषा सुनने को मिलती है। अस्सी के दशक से अभी तक नेताओं की भाषा में बहुत अधिक बदलाव आ गया है। आज कई नेता बिना कुछ सोचे समझे सार्वजनिक मंच से आपत्तिजनक टिप्पणी कर देते हैं। नेताओं को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनकी बात सुनने वाले लोग विभिन्न आयु वर्ग के होते हैं। उनको विशेष रूप से इस बात पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए कि उनकी भाषा मर्यादित हो। यदि हम भारत में चुनाव के समय की बात करें तो नेताओं की सबसे अधिक अमर्यादित भाषा हमें इस दौरान ही देखने को मिलती है। कई नेता जनता में चर्चित रहने के लिए कुछ भी बोल देते हैं, वह ये नहीं सोचते कि उनको सुनने वाले युवाओं पर इसका क्या असर पड़ेगा।

– पदम सांगवान, आइआइएमसी, दिल्ली

धरोहरों से खिलवाड़

हाल ही में खबर आई कि ताजमहल की छत से पानी टपकने लगा है। यह चिंता की बात है और उन अधिकारियों एवं कर्मियों की लापरवाही की ओर साफ इशारा करती है। संबंधित विभाग में यदि कर्मचारियों की कमी है, तो उसका खमियाजा, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक इमारतें क्यों भुगत रही हैं? भारत में घोषित 'विश्व धरोहर की श्रेणी' की इमारतों में जब इतनी लापरवाहियां हैं तो भारत भर में फैली कई ऐतिहासिक इमारतों की क्या दुर्दशा हो रही होगी, जिन्हें धरोहर की श्रेणी में नहीं रखा गया है। विभागीय कर्मियों के चलते विश्व धरोहरों में क्षरण को रोका जाना जरूरी है। यह क्या कम बड़ी बात है कि इन प्राचीन इमारतों को देख कर गौरवशाली इतिहास को याद रख पा रहे हैं। उपेक्षा की वजह से हम आने वाली पीढ़ियों के लिए दाग-धब्बों वाली और खंडहर होती धरोहरें छोड़ जाएंगे। जबकि इनके साज-संभाल की जिम्मेदारी, आज की पीढ़ी के साथ अधिकारियों की ज्यादा बनती है।

– नरेश कानूनगो, देवास, मप्र

संविधान में निष्ठा

कर्नाटक के मुख्यमंत्री सिद्धारमैया पर मैसुरु में भूखंड आबंटन को लेकर जो गंभीर आरोप लगे हैं, उसकी जांच होनी चाहिए, लेकिन जैसा कि प्रावधान है, राज्य के मुख्यमंत्री के खिलाफ ऐसी कार्रवाई के लिए कैबिनेट की मंजूरी ली जाती है, लेकिन राज्यपाल ने कार्रवाई की सिफारिश कर दी। नतीजन सिद्धारमैया ने अदालत का दरवाजा खटखटाया, जहां उन्हें निराश होना पड़ा। राज्यों में गैर भाजपा सरकारें हमेशा केंद्र सरकार के निशाने पर रहें यह कोई अच्छी परिपाटी नहीं। क्या अनियमितताएं और भ्रष्ट आचरण विपक्ष की सरकारों में ही है। संवैधानिक निष्पक्षता और लोकतांत्रिक चेतना का तकाजा यह कहता है कि गलत किसी भी सरकार में हो रहा हो, उस पर कारगर और सख्त कार्रवाई होनी चाहिए न कि यह कवायद राजनीतिक लाभ-हानि पहुंचाने के लिए।

– माम चंद सागर, दिल्ली

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

सिद्धरमैया पर संकट

घोटाले के आरोप

कर्नाटक के मुख्यमंत्री सिद्धरमैया को अपने पूर्व कार्यकाल में कथित भूमि घोटाले के कारण राजनीतिक व विधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। विशेष अदालत द्वारा मैसूरू लोकायुक्त पुलिस को कथित 'मूडा' घोटाले में उनकी संलिप्तता की जांच करने के आदेश के बाद सिद्धरमैया पर संकट गहरा गया है। कर्नाटक उच्च न्यायालय ने सिद्धरमैया की याचिका खारिज कर दी है जिसमें राज्यपाल द्वारा जांच की सहमति को चुनौती दी गई थी। सिद्धरमैया पर 2013-2018 के अपने पूर्व कार्यकाल में कथित भूमि घोटाले का आरोप है। अब इस मामले के तूल पकड़ने के कारण वे विवाद में घिरे हैं। इन आरोपों का संबंध बैंगलुरू में महत्वपूर्ण जमीन का 'डिनोटीफिकेशन' से है जिसमें सरकारी स्वामित्व वाली भूमि को कानूनी प्रक्रियाओं की अनदेखी करते हुए निजी डेवलपरों को दिया गया था। इस घटनाक्रम से न केवल राजनीतिक तूफान उठ खड़ा हुआ है, बल्कि इससे कांग्रेस सरकार के स्थायित्व पर भी सवाल उठ रहे हैं जो पहले से ही आंतरिक चुनौतियों का सामना कर रही है। इस मामले ने विपक्षी दलों और एक्टिविस्टों के आरोपों को उजागर कर दिया है जिन्होंने सिद्धरमैया पर अपने पद का दुरुपयोग कर निजी लोगों के पक्ष में भूमि के डिनोटीफिकेशन का आरोप लगाया था। आरोप है कि इससे सरकारी खजाने को भारी वित्तीय नुकसान हुआ। डिनोटीफिकेशन आमतौर से उन मामलों में किया जाता है जहां सरकार को सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए भूमि की जरूरत न हो। लेकिन विपक्ष का आरोप है कि यह निर्णय निहित स्वार्थों से प्रभावित था।

इस जांच का उद्देश्य सिद्धरमैया की भूमिका और इस बात का पता लगाना है कि क्या उन्होंने कानूनी दायरे में रह कर काम किया। हालांकि, जांच अभी शुरुआती चरण में है, पर इसके राजनीतिक प्रभाव दिखने लगे हैं। भारतीय जनता पार्टी-भाजपा द्वारा गंभीर जांच और यहां तक कि उनके इस्तीफे की मांग करने से सिद्धरमैया पर दबाव बढ़ रहा है। आरोपों के जवाब में सिद्धरमैया ने किसी गलत काम का जोरदार खंडन किया है। उन्होंने जांच को 'राजनीति से प्रेरित', अपनी छवि खराब करने तथा सरकार को अस्थिर करने का प्रयास बताया है। अपने बचाव में सिद्धरमैया का कहना है कि भूमि का डिनोटीफिकेशन कानूनी प्रक्रियाओं के अंतर्गत किया गया था और संबंधित अधिकारियों ने इसकी स्वीकृति दी थी। उन्होंने यह भी कहा कि ऐसे ही मामले कई पार्टियों के अनेक राजनेताओं के खिलाफ दर्ज किए गए हैं। उनका संकेत है कि यह विपक्षी दलों के मुख्यमंत्रियों को परेशान करने का आम राजनीतिक तरीका है और इसका संबंध केवल उनके प्रशासन से नहीं है। लेकिन यदि जांच गति पकड़ती है और उनके खिलाफ ठोस सबूत सामने आते हैं तो पार्टी के भीतर तथा जनता की नजरों में उनकी छवि निश्चित रूप से खराब होगी। कर्नाटक में मुख्य विपक्षी दल के रूप में भाजपा इस भूमि घोटाले का लाभ उठा कर सिद्धरमैया की निष्ठा और उनके नेतृत्व पर सवाल उठाएगी। यदि मामला अदालतों में गया तथा न्यायिक निगरानी की मांग हुई तो भाजपा की जवाबदेही की मांग से लंबी राजनीतिक अनिश्चितता पैदा हो सकती है। कर्नाटक जैसे राज्य में भ्रष्टाचार की कोई आशंका सिद्धरमैया की सार्वजनिक छवि ध्वस्त कर सकती है क्योंकि यहां चुनावी मुकाबला कांटे का होता है। सिद्धरमैया के नेतृत्व वाली सरकार पारदर्शिता और विकास के वादों पर सत्ता में आई थी। ऐसे में यह मामला तूल पकड़ने तथा और ज्यादा सटीक सबूत सामने आने पर सिद्धरमैया का संकट और गहरा सकता है जिसमें वे अपना बचाव करने की स्थिति में नहीं रहेंगे।

एकसाथ चुनाव की ओर बढ़ता भारत

भारत में एकसाथ चुनाव कराने की भूमिका तैयार हो रही है। लेकिन संवैधानिक और राजनीतिक चुनौतियों को देखते हुए इसका सफल क्रियान्वयन अनिश्चित बना हुआ है।

कल्याणी शंकर
(लेखिका, वरिष्ठ पत्रकार हैं)

भारत में एकसाथ चुनाव कराने की भूमिका तैयार हो रही है। इसके लिए 'एक देश, एक चुनाव' का प्रस्ताव तैयार हो चुका है। लेकिन संवैधानिक और राजनीतिक चुनौतियों को देखते हुए इसका सफल क्रियान्वयन अनिश्चित बना हुआ है। 'एक देश, एक चुनाव' का विचार संसदीय व आम जनता में चर्चा का विषय बना हुआ है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व वाली केन्द्र सरकार ने पिछले सप्ताह इसे आगे बढ़ाने का निर्णय भी कर लिया है। मोदी कैबिनेट ने इस प्रस्ताव को मंजूर कर लिया है और संसद के आगामी सत्र में यह विधेयक पेश करने की उम्मीद है। प्रधानमंत्री मोदी ने अपने पिछले कार्यकाल में पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में इस पर विचार-विमर्श के लिए एक समिति गठित की थी जिसकी रिपोर्ट और संस्तुतियों को अब स्वीकार कर लिया गया है।

हालांकि, इस अवधारणा पर अतीत में भी बहुत बार बहस हो चुकी है, पर इस पर कोई राजनीतिक सहमति नहीं बन सकी थी। वर्तमान समय में सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी-भाजपा की सरकार लंबे समय से चुनाव सुधारों के पक्ष में रही है और अब वह चुनाव व्यवस्था में परिवर्तनों को गति देने का प्रयास कर रही है। 'एक देश, एक चुनाव' इस दृष्टिकोण से सर्वाधिक परिवर्तनकारी चुनाव सुधार हो सकता है। अतीत में पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी तथा बाद में भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी ने एकसाथ चुनाव कराने का विचार सामने रखा था, लेकिन कांग्रेस ने हमेशा इस विचार को खारिज कर दिया था।

वर्तमान समय में भाजपा द्वारा यह प्रस्ताव आगे बढ़ाने का समय बहुत अच्छा है। यह प्रस्ताव प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उस समय रखा जब वे पिछले सप्ताह प्रधानमंत्री के रूप में लगातार अपने तीसरे कार्यकाल के 100 दिन पूरे कर चुके थे। भाजपा पिछले दो दशक से अधिक समय से इस महत्वपूर्ण चुनाव सुधार की पैरवी कर रही है। हालांकि, यह विचार तार्किक और कारगर दिखता है, पर इसे क्रियान्वित करने पर अनेक सवाल भी उठते रहे हैं। इस संबंध में सबसे बड़ा सवाल यही है कि क्या भारत ऐसे सुधार के लिए तैयार है? यह सवाल भी बहुत महत्वपूर्ण है कि क्या प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के पास आवश्यक दो-तिहाई बहुमत है जिसके द्वारा वे संसद में यह विधेयक पेश कर संविधान संशोधन कराने में सफल होंगे? इसके साथ ही अनेक अन्य सवाल भी हैं जिनके जवाब की आवश्यकता है। सर्वाधिक प्राथमिक और सबसे जरूरी यही तथ्य है कि इस विधेयक को लोकसभा में दो-तिहाई बहुमत होने पर ही आगे बढ़ाया जा सकता है। हालिया, लोकसभा 2024 के चुनाव में भाजपा अपने दम पर सदन में बहुमत से 40 सीटें पीछे रह गई और वह जनता दल युनाइटेड-जदयू तथा तेलगू देशम पार्टी-टीडीपी के सहयोग से ही बहुमत प्राप्त कर सरकार बनाने में सफल हुई। हालांकि, ये दोनों पार्टियां पहले से ही राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन-राजग का हिस्सा थीं और उन्होंने एकसाथ मिल कर लोकसभा चुनाव लड़ा था। लोकसभा की वर्तमान गणित को देखते हुए भाजपा को इन दलों के साथ ही अन्य मैत्रीपूर्ण दलों का समर्थन प्राप्त करना होगा। भाजपा 'एक देश एक चुनाव' के माध्यम से चुनाव प्रक्रिया में व्यापक परिवर्तन इसीलिए करना चाहती है क्योंकि उसके विचार से ऐसा करने से बार-बार चुनाव कराने से मुक्ति मिल जाएगी। एकसाथ चुनाव होने से सरकार तथा राजनीतिक दलों का चुनावों पर होने वाला खर्च भी घटेगा। लेकिन इन सबके बावजूद अधिकांश विपक्षी दलों ने एकसाथ चुनाव का विचार खारिज कर दिया है। इस विचार को अस्वीकृत करने वाले दलों में कांग्रेस, वामपंथी पार्टियां, तृणमूल कांग्रेस तथा क्षेत्रीय व अन्य छोटी पार्टियां शामिल हैं। उन्होंने इसे यह कह कर अस्वीकार कर दिया है कि इससे सत्तारूढ़ दल को 'राजनीतिक बदला' लेने का अवसर मिल जाएगा। उनको यह आशंका भी है कि इसे भाजपा को लाभ होगा।

पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में गठित समिति ने इस मुद्दे पर विचार कर इस बारे में सभी राजनीतिक पार्टियों की राय ली और इसके बाद सर्वसम्मति से इसका समर्थन किया। कोविंद समिति के समक्ष उपस्थित हुई 32 पार्टियों ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया, जबकि 15 ने इसे अस्वीकार कर दिया। समिति ने यह संकेत भी दिया कि केन्द्र को इस प्रस्ताव के क्रियान्वयन के लिए एक समिति का गठन करना चाहिए। इसके साथ ही सभी वर्गों को शामिल करने वाली एक संयुक्त मतदान सूची भी होनी चाहिए जिसका सभी चुनावों में प्रयोग किया जा सके। वर्तमान समय में लोकसभा और विधानसभा चुनावों के लिए मतदान सूची में बार-बार सुधारों के साथ ही स्थानीय निकायों में मतदान सूची लगभग अलग होती है। इस संयुक्त सूची का प्रयोग कर मतदाता राष्ट्रीय, राज्य व स्थानीय निकाय चुनावों में वोट दे सकेंगे। इससे मतदाताओं के पंजीकरण में आने वाली कमियों को कम किया जा सकेगा। समिति ने इस संबंध में सभी पक्षों से बातचीत की योजना बनाई है।

समिति ने दो हिस्सों में चुनाव कराने का सुझाव दिया है। पहला चुनाव लोकसभा और विधानसभाओं के लिए तथा दूसरा स्थानीय निकायों के लिए होगा। ऐतिहासिक रूप से 1952 में पहले चुनाव होने के बाद से 1967 तक एकसाथ चुनाव होते थे। लेकिन श्रीमती इंदिरा गांधी के सत्ता में आने के बाद से स्थिति बदल गई। उन्होंने विपक्ष शासित राज्य सरकारों को भंग करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 356 का प्रयोग करना शुरू किया जिससे स्वतंत्र चुनावों की शुरुआत हुई। इसके बाद से आज तक यही स्थिति बनी हुई है। लेकिन 'एक देश एक चुनाव' पर विधेयक को अनेक संवैधानिक, विधिक और राजनीतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। समिति ने देश में एकसाथ चुनाव कराने के लिए संविधान के अंतिम पांच अनुच्छेदों में संशोधन का सुझाव दिया है। ये संशोधन अनुच्छेद 83 से 172 तक होंगे। भाजपा को अपने दम पर बहुमत प्राप्त नहीं है, जबकि संविधान संशोधनों के लिए दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता है। इसके साथ ही संविधान इस विषय पर मौन है कि क्या चुनाव एकसाथ होने चाहिए। ऐसे में प्रधानमंत्री मोदी के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती संसद में उपयुक्त संख्या में सांसदों को लामबंद करना होगा। इसके साथ ही अभी 'एक देश एक चुनाव' पर राजनीतिक सहमति बनाने का काम भी बाकी है। भाजपा ने इस दिशा में विपक्षी दलों से बात करने या उनको समझाने-बुझाने का प्रयास नहीं किया है।

विपक्ष इस मुद्दे पर आक्रामक मूड में है क्योंकि उसका विश्वास है कि एकसाथ चुनाव से भाजपा को लाभ होगा। कांग्रेस इसके विरोध में है। इसी प्रकार वामपंथी पार्टियां, तृणमूल कांग्रेस, राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी और आल इंडिया मजलिसे इत्तिहादुल मुसलमीन ने भी यह विचार अस्वीकार कर दिया है। 15 विपक्षी दलों के पास 205 सांसद हैं, जबकि मोदी को 362 मतों की आवश्यकता है। एकसाथ चुनाव के लिए विधिक ढांचा भी जरूरी है जो आवश्यक परिवर्तन कर सके। इसके साथ ही कार्यकाल के बीच में ही गिर जाने वाली राज्य सरकारों की समस्या से भी निपटना होगा। यह विचार अच्छा है और इससे पैसे की बरबादी पर लगाम लग सकती है। इसके थ ही हर दे साल में चुनाव से नीतिगत विकलांगता जैसी स्थिति पैदा होती है।

इसलिए विपक्ष को खारिज करने के पहले इस पर विचार करना चाहिए। यदि उनके पास कोई वैकल्पिक योजना हो तो इस पर सार्वजनिक बहस हो सकती है। कुल मिला कर मोदी इस विधायन को संसद में एक रणनीति के अंतर्गत ला रहे हैं। चाहे हारें या जीतें, इससे मोदी को लाभ होगा। यदि वे जीत जाते हैं तो यह एक चुनावी वादा पूरा करना होगा। यदि विधेयक गिर जाता है तो भी वे हमेशा इसे अच्छे इरादे से लाने का दावा कर सकते हैं, लेकिन विपक्ष ने इसे स्वीकार नहीं किया। भले ही यह विधेयक लाने में विलंब हो, पर इस पर बहस होनी चाहिए तथा एकसाथ चुनाव का रास्ता अंततः निकाला जाना चाहिए। आखिरकार बार-बार चुनावों पर सरकार द्वारा किया जाने वाला खर्च करदाताओं का पैसा है।

क्वाड का स्पष्ट दृष्टिकोण

> क्वाड सम्मेलन ने हिंद-प्रशांत क्षेत्र में शांति बनाए रखने को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकता माना है।

कुमारदीप बनर्जी
(लेखक, नीति विश्लेषक हैं)

इस सप्ताह प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की हाई-प्रोफाइल अमेरिका यात्रा ने भारत-अमेरिका द्विपक्षीय संबंधों का महत्व रेखांकित करते हुए अनेक प्रमुख निर्णयों के माध्यम से 21वीं शताब्दी में साझेदारी का भविष्य निर्धारित कर दिया। भारतीय प्रधानमंत्री की यह यात्रा रूस और यूक्रेन की उनकी यात्राओं के बाद हुई। यह बहुआयामी दृष्टिकोण उजागर करती है जहां भरत सर्वोच्च स्तर पर राजनयिक संपर्क मजबूत करते हुए अपने राष्ट्रीय हितों को पवित्रतम मानता है। प्रधानमंत्री मोदी तथा अमेरिकी राष्ट्रपति बाइडेन ने परस्पर मैत्रीपूर्ण ढांचा रेखांकित किया, जबकि प्रधानमंत्री ने 'ओवल आफिस' में उनके पूर्ववर्ती के साथ एक राजनीतिक रोड शो किया था। यह सारी दुनिया को संकेत है कि अमेरिका-भारत द्विपक्षीय संबंधों को सभी पक्षों का समर्थन प्राप्त है। क्वाड नेताओं के सम्मेलन, अनिवासी भारतीयों के साथ मोदी का 'राकस्टार कंसर्ट' शैली के आयोजन तथा अमेरिका में तकनीकी क्षेत्र के सीईओ के साथ बैठक ने यह संकेत दिया है कि अमेरिका और भारत के बीच संबंधों ने बहुत तेज गति प्राप्त कर ली है। ऐसे में पीछे देखने की किसी प्रकार की आशंका का कोई स्थान नहीं है।

क्वाड सम्मेलन की बैठकों में चीन की अदृश्य उपस्थिति रही। क्वाड सम्मेलन ने बिना नाम लिए आक्रामक तथा समुद्री अंतरराष्ट्रीय कानूनों के उल्लंघन करने वाले के रूप में चीन की ओर संकेत किया। इसमें कहा गया, 'हिंद-प्रशांत क्षेत्र की चार प्रमुख समुद्रतटीय लोकतंत्रों के रूप में हम स्पष्ट रूप से इस परिवर्तनशील क्षेत्र में शांति और स्थिरता बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं जो वैश्विक सुरक्षा तथा समृद्धि का अपरिहार्य तत्व है। हम इस क्षेत्र को अस्थिर करने वाले या किसी एकपक्षीय कार्रवाइयों का घोर विरोध करते हैं जो शक्ति या दबाव से यथास्थिति बदलने को लक्षित हो। हम क्षेत्र में ऐसे अवैध मिसाइल प्रक्षेपणों की निन्दा करते हैं जो संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद प्रस्तावों का उल्लंघन करते हैं। हम समुद्री क्षेत्र में हालिया खतरनाक और आक्रामक कार्रवाइयों की निन्दा करते हैं। हम इस क्षेत्र को ऐसा बनाना चाहते हैं जहां कोई देश प्रभुत्व न बनाए तथा किसी देश पर प्रभुत्व न स्थापित हो। इस क्षेत्र में सभी देश दबाव से मुक्त हों और अपना भविष्य तय करने के लिए अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकें। हम एक स्थिर व खुली अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था के प्रति प्रतिबद्ध हैं जो मानवाधिकारों, स्वतंत्रता के सिद्धान्त, कानून के शासन, लोकतांत्रिक मूल्यों, संप्रभुता व क्षेत्रीय अखंडता, विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का दृढ़ समर्थन करे तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ चार्टर समेत अंतरराष्ट्रीय कानून के अनुसार धमकी या शक्ति प्रयोग न करे। असोसियेशन आफ साउथईस्ट एशियन नेशन्स-आशियान, पैसिफिक आईलैंड्स फोरम-पीआईएफ तथा इंडियन ओसेन रिम असोसियेशन-आईओआरए समेत क्षेत्रीय संस्थानों के नेतृत्व का सम्मान क्वाड के सभी प्रयासों के केन्द्र में है और यह बना रहेगा।'

हालांकि, क्वाड 'नाटो' की तरह कोई रक्षा साझेदारी नहीं है, पर वैश्विक महाशक्ति चीन की उपस्थिति तथा उसके द्वारा पूरे हिंद महासागर क्षेत्र में अपनाई जाने वाली दबाव की रणनीतियों के कारण डेलावेयर सम्मेलन में भाग लेने वाले नेता प्रभावित थे। दिल्ली, राष्ट्रपति बाइडेन के गृह शहर डेलावेयर, सिडनी और टोकियो अंतरराष्ट्रीय समुद्रों पर गहरी नजर बनाए हुए हैं जहां चीन के अनेक उल्लंघन सामने आए हैं। नेताओं ने घोषणा की, 'आज हम हिंद-प्रशांत क्षेत्र में प्रशिक्षण के लिए नई क्षेत्रीय समुद्री पहल-मैत्री की घोषणा कर रहे हैं जो इस क्षेत्र में हमारे साझीदारों को आईपीएमडीए तथा अन्य क्वाड साझीदार पहलों से प्राप्त उपकरणों को अधिकतम बनाने में सहायता करेगी।

इससे हम समुद्रों की निगरानी और सुरक्षा सुनिश्चित कर कानूनों को लागू करेंगे तथा अवैध व्यवहारों को निष्प्रभावी करेंगे। हम 2025 में भारत में होने वाली मैत्री कार्यशाला की ओर देख रहे हैं। इसके साथ ही क्वाड साझीदार अगले वर्ष आईपीएमडीए में नई तकनीक और डेटा को समाहित करेंगे जिससे हम इस क्षेत्र में अद्यतन क्षमता और सूचनाओं को उपलब्ध करा सकेंगे।' इस प्रकार चीन क्वाड नेताओं की प्रमुख चिन्ता बना रहेगा और इन चारों देशों को जोड़ने के लिए शक्तिशाली गोंद का काम करेगा।

हिंद-प्रशांत क्षेत्र में प्रमुख हित रखने वाले देश ज्यादा निकट आएंगे। अगला क्वाड सम्मेलन दिल्ली में होने की आशा है, जहां एक नया अमेरिकी राष्ट्रपति प्रमुख सम्मानित अतिथि होगा। पूर्व-राष्ट्रपति ट्रंप द्वारा क्वाड समूह को प्रोत्साहन देने तथा राष्ट्रपति बाइडेन द्वारा सम्मेलन को उच्च स्तर प्रदान करने से यह कहना उचित होगा कि क्वाड मजबूत होता रहेगा।

आप की बात

एनआरआई कोटा

पंजाब सरकार द्वारा मेडिकल में 15 प्रतिशत एनआरआई कोटा रखने पर देश के प्रधान न्यायाधीश वाई. वी. चंद्रचूड़ ने इसकी जरूरत को ख़ारिज करते हुए कहा कि इससे देश के मेधावी छात्रों के पहले भाई-भतीजावादियों को फ़ायदा मिलेगा जो कि ठीक नहीं है। उन्होंने सरकार को सही तर्क देते हुए एनआरआई कोटे की अनुमति को निरस्त कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय स्वागत योग्य है। सवाल है कि आखिर एनआरआई कोटा क्यों दिया जाना चाहिए? इससे एक ओर एनआरआई के रिश्तेदारों के छात्र फ़ायदा उठाते हुए देश के प्रतिभावान छात्रों का हक मारेंगे तो दूसरी ओर भ्रष्टाचार भी बढ़ेगा। विडंबना है कि यह निर्णय उस पंजाब सरकार द्वारा किया गया जो स्वयं को आम आदमी का प्रतिनिधि बताती है। ऐसे समय जब देश में मेडिकल शिक्षा की सीटें कम होने और निजी क्षेत्र में फीस महंगी होने के कारण देश के अनेक छात्र बांग्लादेश, यूक्रेन, चीन व मध्य एशिया के देशों में डाक्टरी पढ़ने जाते हैं, तब पंजाब में चिकित्सा शिक्षा में एनआरआई कोटा अत्यन्त निंदनीय है। मोदी सरकार लगातार नए मेडिकल कालेज खोल रही है जिससे मेडिकल सीटों की संख्या बढ़ी है, पर जनसंख्या के अनुपात में डाक्टरों की संख्या को देखते हुए यह अब भी कम है।

– **शकुंतला महेश नेनावा**, इंदौर

दिसानायके की चुनौतियां

राष्ट्रपति चुनाव में श्रीलंका के मतदाताओं ने श्रमिक के बेटे अनुरा कुमारा दिसानायके को चुना। जनता द्वारा सीधे राष्ट्रपति का चुनाव होने की पद्धति के चलते दिसानायके 50 प्रतिशत से कम वोट पाकर भी राष्ट्रपति चुने गए हैं। वे देश के इतिहास में पहली बार मतगणना के दूसरे दौर में जीते हैं। संसद में उनके मात्र तीन प्रतिनिधि चुनकर आए हैं। स्पष्ट है कि दिसानायके को सत्ता की बागडोर संभालकर श्रीलंका को सुशासन देने में कदम-कदम पर विपक्ष का विरोध सहना पड़ेगा। अतीत में व्यक्त अपनी भारत-विरोधी विचारधारा के चलते उन्हें निष्पक्ष छवि बनानी होगी तथा यह भी सिद्ध करना पड़ेगा कि वह चीन की कठपुतली बनकर नहीं रहेंगे। पहले तमिल-विरोधी होने के कारण उन्हें तमिल जनता को भी विश्वास में लेना होगा। हालांकि उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि वह भारत-चीन के बीच निष्पक्ष संतुलन बनाकर रखेंगे। विदेशी कर्ज में आकंठ डूबी श्रीलंका की अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाना मुश्किल होगा। जहां भारत ने उनको पूरे सहयोग का आश्वासन दिया है, वहीं चीन भी उन पर डोरे डालने में लग गया है। ऐसे में देखना होगा कि आने वाले कुछ महीने में दिसानायके देश की राजनीति व अर्थनीति को क्या दिशा देते हैं।

– **सुभाष बुड़ावन वाला**, रतलाम

बाल यौन अपराध

सुप्रीम कोर्ट ने सुझाव दिया है कि संसद को यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण-पाक्सो कानून में संशोधन को लेकर गंभीरता से विचार करना चाहिए। उसने कहा है कि बाल पोर्नोग्राफी शब्द के स्थान पर बाल यौन शोषण और दुर्व्यवहार सामग्री शब्द का इस्तेमाल किया जाए। इसके परिणामस्वरूप ऐसे अपराधों की वास्तविकता को और अधिक सटीक रूप से दर्शाया जा सकेगा। पीठ ने कहा कि बाल पोर्नोग्राफी शब्द का इस्तेमाल किसी भी न्यायिक आदेश या फैसले में नहीं किया जाएगा। सुप्रीम कोर्ट के निर्देशानुसार, बाल पोर्नोग्राफी देखना और उसे डाउनलोड करना यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम 2012 और सूचना प्रौद्योगिकी-आईटी कानून के तहत अपराध है। पीठ ने सुझावा दिया है कि भारतीय संघ एक विशेषज्ञ समिति गठित करने पर विचार कर सकता है जिसका काम स्वास्थ्य और यौन शिक्षा के लिए एक व्यापक कार्यक्रम या तंत्र तैयार करने के साथ ही देश भर में बच्चों के बीच कम उम्र से ही पाक्सो कानून के बारे में जागरूकता बढ़ाना हो। इससे बाल संरक्षण, शिक्षा और यौन कल्याण के संबंध में मजबूत और सुविचारित दृष्टिकोण बनाना और उसे प्रसारित करना सुनिश्चित किया जा सकता है। यह सुझाव निश्चित रूप से स्वागत योग्य है।

– **मनमोहन राजावत**, शाजापुर

आर्थिक संतुलन के प्रयास

फेडरल रिजर्व द्वारा अमेरिका में आधा प्रतिशत घटाए जाने और आगामी वर्षों में दो प्रतिशत तक घटाए जाने की संभावना व्यक्त की है। फेडरल रिजर्व के इस कदम ने दुनिया के पूंजी बजार और शेयर बाजार में उथल-पुथल मचाई है। इसके कारण भारतीय शेयर बाजार लगातार रिकार्ड ऊंचाई पर पहुंच रहा है। वैसे फेडरल रिजर्व के ब्याज घटाने वाले कदम के बाद अब भारतीय रिजर्व बैंक को भी ब्याज दरों मे कटौती पर विचार करना चाहिए। डॉलर का अंतरराष्ट्रीय बाजार में बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है और उसी के अनुरूप विश्व की अन्य करेंसियां चलती हैं। यदि भारत में भी ब्याज दर घटाई जाती है तो इसका फायदा लोन लेने वाले ग्राहकों को भी दिया जाना चाहिए। हालांकि, रिजर्व बैंक मुद्रास्फीति बढ़ने के भय से पिछले काफी समय से ब्याज दरों में कटौती से बच रहा है। इससे कर्ज लेने वाले लोगों की उम्मीदें टूटती हैं तथा अर्थव्यवस्था की प्रगति भी प्रभावित होती है। लेकिन दुनिया की सर्वाधिक जनसंख्या वाले देश में आर्थिक संतुलन बहुत कठिन काम है।

– **विभूति बुपक्या**, खाचरोद

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।

43.9 प्रतिशत हिस्सेदारी है इलेक्ट्रानिक्स, टेलिकाम तथा इलेक्ट्रिकल सेक्टर के भारतीय आयात में चीन की, ग्लोबल ट्रेड रिसर्च इनीशिएटिव की रिपोर्ट के अनुसार।

शिवेश प्रताप
लोकनीति विश्लेषक एवं तकनीकी प्रबंधन सलाहकार

सेमीकंडक्टर कूटनीति

भारतीय विदेश नीति की बदलती तस्वीर

सेमीकान इंडिया 2024 की सफलता के बाद क्वाड समिट के दौरान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी एवं अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन ने भारत में एक नया सेमीकंडक्टर प्लांट स्थापित करने के महत्वपूर्ण समझौते पर हस्ताक्षर किया है। यह प्लांट अमेरिकी सेना के एक विंग के सहयोग से स्थापित होगा और भारत का पहला नेशनल सिक्योरिटी सेमीकंडक्टर फेब्रिकेशन संयंत्र होगा। यह भारत के औद्योगिक विकास की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित होगा। इसके द्वारा भारत भविष्य में क्वाड देशों, एशिया और अफ्रीका में एक बड़ा निर्यातक बन सकेगा

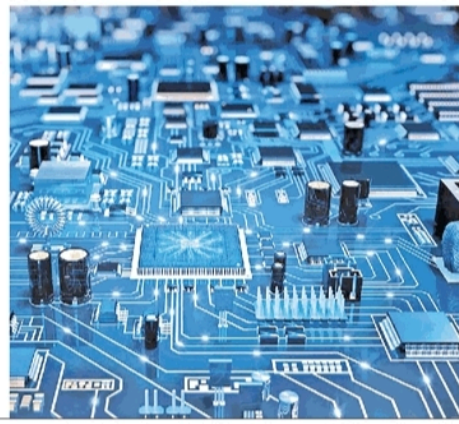

प्रतीकात्मक

इलेक्ट्रानिक उद्योग का सबसे महत्वपूर्ण अंग है सेमीकंडक्टर। हमारे लिए अब तक यह विडंबना रही है कि भारत में इसका निर्माण लगभग नहीं होता है। परंतु अब जल्द ही भारत में भी इसका निर्माण संभव होगा। भारत का यह उभरता हुआ उद्योग देश को केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता ही नहीं, अपितु भू-राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण लाभ प्रदान कर सकेगा और वैश्विक मंच पर देश के प्रभाव को पुनर्परिभाषित कर सकता है। एक मजबूत सेमीकंडक्टर इकोसिस्टम का निर्माण करके, वैश्विक चिप उत्पादन के माध्यम से चीन और ताइवान जैसे देशों से भारत अपनी आयात निर्भरता को कम कर सकेगा। यह आत्मनिर्भरता भारत की रणनीतिक स्वायत्तता (स्ट्रेटेजिक आटोनोमी) को मजबूत करती है, क्योंकि इससे भारत वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला (ग्लोबल सप्लाई चेन) में आने वाले व्यवधानों के प्रति संरोध सुनिश्चित कर सकेगा। वर्तमान भू-राजनीतिक परिदृश्य में, जहां रूस, अमेरिका और चीन आदि प्रमुख शक्तियों के बीच तनाव निरंतर बढ़ रहा है, घरेलू सेमीकंडक्टर उत्पादन शक्ति भारत को बिना बाहरी आपूर्तिकर्ताओं पर निर्भर हुए अपनी विदेश नीति के निर्णयों में अधिक स्वतंत्रता प्रदान कर सकेगी, क्योंकि वर्तमान परिस्थितियों में 2025 तक भारत का सेमीकंडक्टर आयात 100 अरब डालर को पार कर जाने की संभावना है और सेमीकंडक्टर की बढ़ती मांग का अर्थ है चीन और ताइवान पर अत्यंत निर्भरता। उल्लेखनीय है कि ताइवान की टीएसएमसी दुनिया के 90 प्रतिशत सुपर एडवांस सेमीकंडक्टर के निर्माता हैं।

वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला का नया वैकल्पिक केंद्र : कोविड के बाद सप्लाई चेन समस्याओं से भयभीत विश्व के सेमीकंडक्टर क्षेत्र में 'चाइना प्लस वन' नीति को एक स्वर्णिम अवसर मानते हुए मोदी सरकार इसे 'अभी नहीं तो कभी नहीं' के आधार पर देख रही है। वैश्विक सेमीकंडक्टर उद्योग की मांग ने यह स्पष्ट कर दिया है कि विश्व को अधिक विविधताओं से भरे आपूर्ति श्रृंखलाओं की आवश्यकता है। कोविड से सीख लेते हुए विश्व अब विशेष रूप से पूर्वी एशिया के चीन और ताइवान पर निर्भरता कम करने की कोशिश कर रहा है, क्योंकि इस क्षेत्र से जुड़े भू-राजनीतिक जोखिम साल दर साल बढ़ते जा रहे हैं। ऐसे में भारत का स्वयं को एक विश्वसनीय वैकल्पिक केंद्र के रूप में स्थापित करना इसे वैश्विक कूटनीति और एशिया में अपना महत्व स्थापित करने में मदद करेगा। चिप निर्माण, पैकेजिंग और परीक्षण में निवेश के साथ भारत सेमीकंडक्टर आपूर्ति श्रृंखला में एक प्रमुख खिलाड़ी बनने को तैयार है। इससे भारत की स्थिति एक महत्वपूर्ण आपूर्तिकर्ता के रूप में विश्व पटल पर आएगी, जो वैश्विक स्तर पर अन्य पश्चिमी देशों और कंपनियों के लिए आवश्यक होगा एवं भारत अंतरराष्ट्रीय संबंधों में अपनी निगोसिएशन की शक्ति को भी बढ़ाएगा। सेमीकंडक्टर क्षेत्र में आपूर्ति श्रृंखला की अगुआई के द्वारा भारत हिंद महासागर में अपनी धमक को और अधिक प्रासंगिक बनाए रखने के लिए विश्व के अन्य देशों से व्यापक सहयोग प्राप्त कर सकेगा और हिंद महासागर में दबदबे का अर्थ है प्रतिवर्ष विश्व के 80 प्रतिशत समुद्री तेल परिवहन तथा लगभग 10 लाख करोड़ टन कार्गो की सुरक्षा की गारंटी।

प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं से संबंध : भारत के सेमीकंडक्टर उद्योग का उछाल अभी से अमेरिका, जापान और यूरोपीय संघ जैसी वैश्विक शक्तियों का ध्यान आकर्षित कर रहा है, जो अपनी चिप आपूर्ति श्रृंखलाओं में अच्छे विकल्प विकसित करने की कोशिश कर रहे हैं। ये देश भारत को चीन के सेमीकंडक्टर निर्माण पर निर्भरता कम करने के लिए एक संभावित साझेदार के रूप में देखते हैं। स्वयं को एक प्रमुख केंद्र के रूप में स्थापित कर, भारत इन प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं के साथ रणनीतिक और आर्थिक संबंधों को मजबूत कर सकता है, जिससे निवेश, तकनीकी हस्तांतरण और राजनीतिक समर्थन प्राप्त करना अधिक सुलभ होगा।

राष्ट्रीय सुरक्षा का सशक्तीकरण : सेमीकंडक्टर उद्योग, रक्षा प्रौद्योगिकियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इनसे उन्नत हथियार, संचार प्रणाली और साइबर सुरक्षा के उन्नत उपकरणों को बनाने में मदद मिलती है। एक देशी सेमीकंडक्टर उद्योग यह सुनिश्चित करता है कि भारत के पास राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए आवश्यक प्रमुख प्रौद्योगिकियों तक सुरक्षित पहुंच हो। यह भारत के संदर्भ में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारत को चीन और पाकिस्तान जैसे पड़ोसी देशों के साथ क्षेत्रीय सुरक्षा चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। बांग्लादेश की हालिया स्थिति ने भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा हेतु अतिरिक्त चिंताएं खड़ी कर दी हैं। विदेशी सेमीकंडक्टर आपूर्तिकर्ताओं पर निर्भरता कम करके, भारत अपने रक्षा प्रौद्योगिकी पर अधिक नियंत्रण सुनिश्चित कर सकेगा, जिससे उसकी सुरक्षा और भू-राजनीतिक स्थिति को और अधिक मजबूत किया जा सकता है। तकनीकि विकास से खुली सीमाओं की निगरानी, घुसपैठ, वन्य एवं पहाड़ी क्षेत्रों की सुरक्षा आदि में हम अधिक कारगर तरीके से कार्य कर पाएंगे जो भारत के लिए हालिया समय में बेहद प्रासंगिक हो गए हैं।

चीन से मुकाबला : भारत जैसे-जैसे अपना सेमीकंडक्टर उद्योग विकसित करता जाएगा, यह चीन के तकनीकी और मैन्युफैक्चरिंग प्रभुत्व को और बेहतर चुनौती दे सकेगा। सेमीकंडक्टर दूरसंचार, इलेक्ट्रानिक्स और एआइ जैसे उद्योगों की रीढ़ है, जो 21वीं सदी में आवश्यक हैं और चौथे औद्योगिक क्रांति का आधार भी है। इस क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा करके, भारत वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं पर चीन के प्रभाव को कमजोर कर सकता है।

सेमीकंडक्टर कूटनीति का लाभ मिलने की उम्मीद

भारत अपनी सेमीकंडक्टर क्षमता का उपयोग कूटनीति के एक उपकरण के रूप में उन देशों के साथ जुड़ते हुए कर सकता है, जो अपनी चिप आपूर्ति श्रृंखलाओं को सुरक्षित करना चाहते हैं। 'सेमीकंडक्टर कूटनीति' के माध्यम से भारत यूरोप, मध्य पूर्व और दक्षिण पूर्व एशिया के देशों को प्रौद्योगिकी साझेदारी, संयुक्त उद्यम और आपूर्ति समझौतों की पेशकश कर सकता है। यह भारत को गठबंधन बनाने और राजनीतिक समर्थन प्राप्त करने में मदद करता है, जिससे उसकी भू-राजनीतिक प्रभावशीलता और भी बढ़ती है। उदाहरण के लिए, ताइवान और अमेरिका के साथ सेमीकंडक्टर प्रौद्योगिकियों में साझेदारी करके, भारत न केवल तकनीकी विशेषज्ञता प्राप्त करता है, बल्कि एशिया-प्रशांत क्षेत्र में एक प्रमुख भू-राजनीतिक तंत्र के साथ अपने संबंधों को भी मजबूत करता है। ऐसी साझेदारियां भारत के रणनीतिक प्रयासों में अहम भूमिका निभाती हैं, जो विविध क्षेत्रों में रणनीतिक गठबंधन बनाने में सहायक होती हैं।

भारत की सेमीकंडक्टर क्षमता व्यापक इंडो-पैसिफिक रणनीति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिसका उद्देश्य क्षेत्र में चीन के प्रभुत्व का मुकाबला करते हुए क्षेत्रीय संतुलन स्थापित करना है तथा अन्य छोटे देशों की रक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए उन्हें सहयोग है। अमेरिका, जापान और आस्ट्रेलिया जैसे देश इंडो-पैसिफिक में सेमीकंडक्टर आपूर्ति श्रृंखलाओं को सुरक्षित करने पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। ऐसे में भारत का सेमीकंडक्टर हब के रूप में उभरना इस रणनीति के साथ पूरी तरह से मेल खाता है। विश्वसनीय सेमीकंडक्टर निर्माता के रूप में अपनी स्थिति स्थापित करके, भारत क्षेत्रीय सुरक्षा, आर्थिक विकास और कूटनीति में अपनी भूमिका को मजबूत करता है, जिससे वह इंडो-पैसिफिक के भविष्य को आकार देने में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बन जाता है।

जैसे-जैसे भारत का सेमीकंडक्टर उद्योग विकसित हो रहा है, यह इसकी आर्थिक कूटनीति का एक अभिन्न हिस्सा बन रहा है। व्यापार समझौतों, विशेष रूप से विकसित अर्थव्यवस्थाओं के साथ तकनीकी और सेमीकंडक्टर सहयोग पर केंद्रित होने की संभावना है। भारत अपने इस उद्योग का लाभ उठाकर अधिक अनुकूल व्यापार शर्तों पर बातचीत कर सकता है, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को बढ़ा सकता है और प्रौद्योगिकी स्थानांतरण समझौतों के लिए जोर दे सकता है। यह न केवल भारत को आर्थिक रूप से लाभान्वित करेगा, बल्कि इसे गहरे भू-राजनीतिक संबंध बनाने में भी मदद करेगा।

(शिवेश प्रताप)

ग्लोबल ट्रेड रिसर्च इनीशिएटिव की रिपोर्ट के अनुसार इलेक्ट्रानिक्स, टेलीकाम तथा इलेक्ट्रिकल सेक्टर के भारतीय आयात में चीन की हिस्सेदारी 43.9 प्रतिशत है तथा 2023-24 वित्त वर्ष में भारत का इन क्षेत्रों में आयात मूल्य 89.8 अरब डालर रहा। भारत को न केवल अपनी निर्भरता कम करनी है, अपितु विश्व की निर्भरता भी चीन से कम करके भारत की ओर आकर्षित करना है।

रणनीतिक निवेश : सेमीकंडक्टर उद्योग को स्थापित करने हेतु अत्यधिक पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है। इस उद्योग के विकास के माध्यम से भारत इंटेल, माइक्रोन और एएमडी जैसी वैश्विक टेक दिग्गजों से निवेश आकर्षित कर सकता है। ये निवेश केवल पूंजी ही नहीं लाते, बल्कि तकनीकी विशेषज्ञता और नवाचार भी प्रदान करते हैं, जिससे भारत वैश्विक प्रौद्योगिकी इकोसिस्टम के अग्रणी स्थान पर तेजी से पहुंच सकता है। इसके अलावा, अमेरिका, जापान और ताइवान जैसे देशों के साथ सेमीकंडक्टर साझेदारियां भारत को रणनीतिक सहयोगियों के साथ जोड़ती हैं, जिससे उसकी भू-राजनीतिक शक्ति बढ़ती है, साथ ही भारत का साफ्ट पावर भी बढ़ता है। इन कंपनियों से मिलने वाले रणनीतिक निवेश भारत की तकनीकी सहयोग को बढ़ाएंगे, विशेष रूप से एआइ, 5जी और रक्षा जैसे क्षेत्रों में। इस तरह का सहयोग कूटनीतिक संबंधों को मजबूत करता है और भारत को उन देशों के लिए एक महत्वपूर्ण साझेदार बना देता है, जो चीन से जुड़े भू-राजनीतिक संकटों से बचने के लिए विकल्प तलाश रहे हैं।

खरी-खरी

आहत बापू के बोल!

पूरन सरमा

आज हमारे बीच गांधी होते तो रंज और मलाल से अपना सिर पकड़ लेते। आज न तो उनके अनशन की पूछ होती और न ही सत्याग्रह चल पाता। घोटालों की बाढ़ में उनके कुछ भी समझ में नहीं आता कि वे क्या करें या क्या न करें? एक दिन मैं गांधी पार्क में जाकर गांधी जी की प्रतिमा के सामने खड़ा हो गया। अपलक उन्हें देखता रहा, आवाज आई, 'क्यों बेटा, क्या बात है? मुझे जिस काल में कोई देखना नहीं चाहता, तुम आहत हृदय लेकर क्यों समय बरबाद कर रहे हो?'

'बाबा, देश का क्या होगा? मैंने प्रश्न किया जो मंद मुस्कान के साथ आवाज आई, 'किसका देश और कौन सा देश?'

'बापू आपका भारतवर्ष।' मेरे यह कहने पर प्रतिमा ने उत्तर दिया, 'यह तुम्हारा वहम है बेटा। भारत नहीं यह अंग्रेजों का इंडिया बन गया है फिर से। भारत होता तो उसके सिद्धांत और संस्कृति का चलन होता। देशभक्ति का जज्बा आज है किसमें? सब इसे बेतहाशा लूट रहे हैं। इसलिए दुखी होने से क्या फायदा। जाओ, तुम भी उसी भीड़ में शामिल हो जाओ।'

मैं बोला, 'नहीं बापू, इस देश को रास्ता दिखाओ, वरना यह तो आत्मघात की ओर बढ़ रहा है।'

'बेटा, मैंने अन्ना नाम का एक बूढ़ा भेजा था, लोग उसे बेवकूफ बनाकर अपना उल्लू सीधा करने में लगे हैं और उसकी किसने सुनी? जंतर-मंतर से वह भी चला गया। राजघाट आया, तब मैंने उससे कहा था, 'अन्ना, मत सिरफोड़ी करो।'

'तो बापू, मैं क्या करूं? मैं बहुत दुखी हूं। यहां का एक साधारण आम गरीब हूं। पेट की आग शांत करने का मार्ग सुझाओ,' मैंने पूछा तो बापू बोले, 'गरीब हो, यह मेरा और तुम्हारा दुर्भाग्य है। गरीबी हटाओ के कार्यक्रमों में तुमने देख ही लिया। नेता सब हड़प जाते हैं। जिस देश का नेता भ्रष्ट हो, उसे भला कौन संभाल सकता है। जाओ अपने घर।'

बापू बोले, 'मुझे देश में कई जगह खड़ा कर दिया गया है, मेरे आदर्श आज धूल चाट रहे हैं। जाओ, अपने घर जाओ, हां, आत्महत्या मत करना, मेरी तुमसे यही प्रार्थना है।'

गांधी इसके बाद मौन हो गए। मैं बहुत देर तक उन्हें देखता रहा, लेकिन वे बोले कुछ नहीं।

X पोस्ट

प्रतियोगी परीक्षा देने गए बिहार के छात्रों की बंगाल में हुई पिटाई घोर निंदनीय है। हालांकि पीटने वाले रजत भट्टाचार्य को सिलीगुड़ी में गिरफ्तार कर लिया गया है, पर सरकारें अपनी नाकामी का ठीकरा नागरिक समाज पर न फोड़ें। न सांस्कृतिक विभाजन पैदा करने की जुर्रत करें।
सुमंत@sumantkabir

दवा बनाने वाली कंपनी के खिलाफ एक्शन लीजिए कि उसने गलत पैरासिटामाल क्यों बनाया, लेकिन जिसका नाम रिक्शे वाले तक को पता है, उस दवा के प्रति कुप्रचार ठीक नहीं है। एक गरीब के पास डाक्टर नहीं होता तो सबसे पहले यही पैरासिटामाल होता है और उसे भरोसा होता है कि वह ठीक हो जाएगा।
अतुल कुमार राय@AuthorAtul

क्लीन एनर्जी सेक्टर में भारत की बढ़त को रोकने के लिए चीन ने सौर ऊर्जा उपकरणों की कीमत बढ़ा दी है। ऐसे में भारत के लिए यह अपरिहार्य हो गया है कि वह सौर ऊर्जा उपकरणों का घरेलू तौर पर निर्माण करे।
मंजीत ठाकुर@manjit2007

हम आइफोन खरीदने के लिए सारी रात खड़े हो सकते है, लेकिन लाल बत्ती पर 120 सेकेंड शांति से इंतजार नहीं कर सकते।
राहुल राज@x_rahulraj

जागरण जनमत कल का परिणाम

खान-पान की दुकानों पर मालिक का नाम लिखने से खाद्य पदार्थों में मिलावट रुकेगी?

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या सीबीआइ जांच की सहमति वापस लेकर कर्नाटक के मुख्यमंत्री सिद्दरमैया ने खुद की मुसीबत बढ़ा ली है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

सिद्दरमैया कर रहे अब ऐसा छल छंद,
सीबीआई के लिए द्वार कर दिये बंद।
द्वार कर दिये बंद करेंगे खुद घोटाला,
फिर वे चद्दर तान छुपाएं गड़बड़झाला।
अगर आपहैं साफ छुपाना फिर क्या भैया,
बिलावजह क्यों भाग रहे हैं सिद्दरमैया?
- ओमप्रकाश तिवारी

बिहार डायरी

अरुण अशेष
राज्य ब्यूरो प्रमुख, बिहार

संगठन और सरकार की कमजोर कड़ियों की पहचान

जदयू के राष्ट्रीय अध्यक्ष और मुख्यमंत्री नीतीश कुमार संगठन और सरकार की कमजोरियों को दूर करने के लिए सधी चाल चल रहे हैं। यह देखकर उन लोगों को राहत मिल सकती है, जिन्हें यह चिंता सता रही थी कि 2025 के विधानसभा चुनाव में जदयू का क्या होगा? नीतीश अपने पहले के कई कार्यकाल की तरह चुनाव से पहले न केवल सक्रिय हैं, बल्कि सरकार और संगठन से जुड़े उनके निर्णयों से लग रहा है कि वह बिहार में अगली पारी के लिए भी तैयार हैं। वह संगठन और सरकार की कमजोर कड़ियों की पहचान कर उन्हें मजबूत करने में जुट गए हैं।

इस सप्ताह ग्रामीण कार्य मंत्री डा. अशोक चौधरी के फेसबुक पर एक कविता री-पोस्ट हुई थी। उसका भाव यह था कि बुजुर्ग लोगों से अपेक्षाएं छोड़ देनी चाहिए। राजनीतिक गलियारे में कविता की व्याख्या की गई कि चौधरी ने नीतीश कुमार पर तंज कसा है। चौधरी अपने कुछ वक्तव्यों को लेकर पहले से चर्चा में थे। वह जहानाबाद के प्रभारी मंत्री हैं। वहां की एक सभा में उन्होंने कह दिया कि बीते लोकसभा चुनाव में भूमिहार जाति के अधिसंख्य लोगों ने जदयू को वोट नहीं दिया। इससे पहले वे मुख्यमंत्री निवास में पार्टी के वरिष्ठ नेता और केंद्रीय मंत्री राजीव रंजन सिंह उर्फ ललन सिंह से भी उलझ चुके थे। जहानाबाद की टिप्पणी को ललन सिंह के साथ उलझने की घटना से जोड़ा गया। उसमें कविता का भाव जोड़ कर चौधरी के विरुद्ध राय यह बनी कि पार्टी गंभीर संकट का सामना कर रही है। यह भी कि अब जदयू में चौधरी के गिने-चुने दिन बचे हुए हैं। उसी दोपहर चौधरी मुख्यमंत्री निवास से हंसी-खुशी निकले। इंटरनेट मीडिया पर दो फोटो साझा किया। इसमें नीतीश प्रसन्न मुद्रा में चौधरी के कंधे पर हाथ रखे हुए थे। उसके दो दिन बाद चौधरी को जदयू का राष्ट्रीय महासचिव बना दिया गया।

नीतीश कुमार के साथ अशोक चौधरी। फाइल

चौधरी के विरोधी भौंचक रह गए। समर्थक खुश हुए। तटस्थ लोगों की राय बनी कि नीतीश ने संतुलित निर्णय लेकर पार्टी को बड़े विवाद से बचा लिया।

इस पूरे प्रकरण में नीतीश कुमार की ओर से कोई टिप्पणी नहीं आई। चौधरी फिलहाल सुरक्षित नजर आ रहे हैं, क्योंकि उन्होंने ललन सिंह से मुलाकात कर इन चर्चाओं को भी बंद कर दिया कि उन दोनों के बीच खटास है। इस सबसे यह भी पता चलता है कि नीतीश कुमार दल के नेताओं के बीच इस स्तर का तकरार नहीं चाहते हैं जो विधानसभा चुनाव में पार्टी की संभावनाओं को किसी तरह प्रभावित करे। वह दल में एकता बनाए रखने का प्रयास कर रहे हैं। दूसरे दलों के प्रभावशाली नेताओं को जोड़ भी रहे हैं। राजद नेता श्याम रजक का जदयू में आना भी महत्वपूर्ण घटनाक्रम है। रजक राजद से जदयू में आए थे। फिर राजद में गए और अब जदयू में आ गए। अनुसूचित जाति के बीच प्रभाव रखने वाले राज्य के कुछ महत्वपूर्ण नेताओं में श्याम रजक भी हैं। वे लोकनायक जयप्रकाश नारायण के आंदोलन से जुड़े थे। उन्होंने दल भले ही कई बार बदला हो, समाजवादी धारा की राजनीति से कभी अलग नहीं हुए।

यह तो राजनीतिक मोर्चा हुआ। अब प्रशासनिक मोर्चे पर मुख्यमंत्री की सक्रियता को देखिए। लोकसभा चुनाव के समय सरकारी नौकरियों को बड़ा मुद्दा बना दिया गया था। महागठबंधन की सरकार के समय राज्य में करीब साढ़े तीन लाख लोगों को सरकारी नौकरियां दी गई थीं। लोकसभा चुनाव में राजद ने सरकारी नौकरियों का श्रेय लेना शुरू किया। जदयू ने न केवल उसके दावे का विरोध किया, बल्कि 2025 के विधानसभा चुनाव तक लाखों सरकारी नौकरियां देने का वादा भी किया। मुख्यमंत्री इस वादे को पूरा करने में लगे हैं। सरकार के सभी विभागों की रिक्तियां मंगाई गई हैं। बिहार लोक सेवा आयोग ने लंबे समय बाद करीब दो हजार अधिकारियों की नियुक्ति के लिए विज्ञापन निकाला है। अराजपत्रित श्रेणी की नौकरियों की रिक्तियां निकल रही हैं। अगर विधानसभा चुनाव से पहले बड़े पैमाने पर नौकरियां दे दी जाती हैं तो मतदान के समय सत्तारूढ़ दल को उसका लाभ मिलेगा। राजद का यह प्रचार कुंद पड़ जाएगा कि नीतीश राज में सरकारी नौकरियां इसलिए मिलीं, क्योंकि राजद भी उस सरकार में शामिल था। मुख्यमंत्री सभी विभाग की योजनाओं की नियमित समीक्षा कर रहे हैं। वे जिलों में जाकर अपनी आंखों से देख रहे हैं कि जमीन पर योजनाएं किस हद तक उतरी हैं। भाजपा और यहां तक कि रालोजपा (रा) के राष्ट्रीय अध्यक्ष चिराग पासवान भी कहने लगे हैं कि अगला चुनाव नीतीश कुमार के नेतृत्व में ही लड़ा जाएगा।

इसमें कोई दो राय नहीं कि 2025 में सत्ता में 20 साल रहने के बावजूद नीतीश जब चुनाव मैदान में जाएंगे तो उनका कोई वैकल्पिक चेहरा नजर नहीं आएगा। हां, नीतीश इस अवधारणा को भी खंडित कर रहे हैं कि मंत्रिमंडल के कुछ चुनिंदा सहयोगियों के बिना कहीं नहीं जाते।

स्मरण

के. सी. त्यागी
पूर्व सांसद

सभी विचारधाराओं के चहेते भगत सिंह

भगत सिंह की जन्मभूमि लायलपुर भारत की स्वतंत्रता के साथ ही हुए देश विभाजन के कारण पाकिस्तान में चला गया। विडंबना यह है कि भगत सिंह की विरासत से जुड़ी चीजों को पाकिस्तान में कायदे से सहेजा भी नहीं जा रहा है

लाहौर आजकल फिर भगत सिंह को लेकर चर्चा में है। वस्तुतः भगत सिंह लाहौर की जिस जेल में रहे, उसका एक हिस्सा अब शहर के अंदर आ गया है। इसका नाम 'शादमान चौक' है। चौक के उसी पुराने फांसी घर वाले स्थल पर अब भी वर्ष में दो बार कैंडल मार्च निकलते हैं। पाकिस्तान पीस स्टडीज इंस्टीट्यूट नामक संस्था की निदेशक डा. सईदा वर्ष में दो बार इसी चौक पर नुक्कड़ नाटकों का आयोजन करती हैं और इंकलाब जिंदाबाद के बैनर के साथ वहां कैंडल मार्च भी निकलता है। इसी प्रकार भगत सिंह मेमोरियल फाउंडेशन के अथक प्रयासों के बाद लाहौर अदालत ने शादमान चौक को भगत सिंह चौक के नाम से स्वीकृत कर दिया था। लाहौर हाई कोर्ट का यह फैसला 2018 का है, लेकिन प्रांतीय और जिला दोनों सरकारों ने जानबूझकर हाई कोर्ट के आदेश का पालन नहीं किया, इसीलिए कोर्ट में अवमानना का मुकदमा दायर किया गया है। भारत सरकार एवं कई स्वयंसेवी संगठन समय-समय पर इस प्रकार की मांग उठाते रहे हैं। वर्ष 2013 में एक संसदीय दल के प्रतिनिधि के रूप में लाहौर जाकर उस समय के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के सलाहकार सरताज अजीज को एक ज्ञापन देकर यह मांग पुनः दोहराने का मौका मिला। हाई कोर्ट ने इस पर एक बार फिर जवाब-तलब किया है।

वस्तुतः भगत सिंह अकेले क्रांतिकारी हैं जिनको लेकर दक्षिण और वाम चिंतकों में उन्हें अपनाने की होड़ लगी है। भगत सिंह मात्र 23 वर्ष और 176 दिन जीवित रहे, लेकिन समूची दुनिया के स्वतंत्रता आंदोलन में वह सर्वोच्च स्थान रखते हैं। सोवियत संघ की क्रांति के नायक लेनिन, चीनी क्रांति के नायक माओ-त्से-तुंग और वियतनाम युद्ध के नायक हो ची मिन्ह इतिहास में अपने अंतिम दिनों में वह स्थान प्राप्त कर पाए जो उन्होंने मात्र 23 वर्ष की उम्र में प्राप्त कर लिया था। उनके द्वारा लिखे पत्र, लेख, घोषणा पत्र और अपने बचाव में अदालत की बहस इतिहास के सुनहरे पन्नों में दर्ज है। भारतीय उप-महाद्वीप में उनका सर्वमान व्यक्तित्व आज भी सुर्खियां बटोरे हुए है।

इंकलाब जिंदाबाद : 23 मार्च 1931 को भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को लाहौर सेंट्रल जेल में फांसी दी गई थी, यद्यपि फांसी की तिथि 24 मार्च तय की गई थी। जब तीनों को फांसी घर ले जाने के लिए कोठरियों से निकाला गया तो तीनों ने ऊंची आवाज में 'इंकलाब जिंदाबाद' के नारे लगाने शुरू कर दिए। यहां तक कि गैर-सियासी कैदी भी 'इंकलाब जिंदाबाद' के नारे लगाने लगे। भगत सिंह ने अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर को संबोधित करते हुए कहा, 'श्रीमान मजिस्ट्रेट, आप भाग्यशाली हैं कि आप देख सकते हैं कि भारत के क्रांतिकारी किस तरह अपने महान उद्देश्य के लिए मौत को गले लगा सकते हैं।' छात्र जीवन में उन्हें रूसी क्रांति ने प्रभावित अवश्य किया था, लेकिन उनकी राजनीतिक जीवनगाथा लाला लाजपत राय के बलिदान से प्रारंभ होती है।

भगत सिंह की माता विद्यावती के निवास पर मेरी लंबी चर्चा में उन्होंने समूचे घटनाक्रम का वर्णन किया कि किस प्रकार बैसाखी के दिन 13 अप्रैल को जलियांवाला बाग में घटी घटना 'वीर' के जीवन को क्रांतिकारी बना गई। भगत सिंह उस समय लाहौर में विद्यालय के छात्र थे। भारतीय स्वाधीनता संग्राम और भगत सिंह के जीवन में यह अभूतपूर्व घटना थी। इस घटना का 'वीर' पर गहरा असर पड़ा और उन्होंने अमृतसर में लहू से रंगी मिट्टी को एकत्रित कर उसे यादगार के तौर पर सुरक्षित करने का संकल्प लिया। भगत सिंह शीशी में भरी मिट्टी को रोजाना फूल चढ़ाकर श्रद्धांजलि देते थे। पढ़ाई के दौरान सभी उनकी बुद्धि का लोहा मान चुके थे। डीएवी लाहौर से नौंवी कक्षा पास कर सीधे एफए में दाखिला ले लिया और मात्र 11 वर्ष की आयु में एफए पास कर बीए में प्रवेश किया। शादी के लिए परिवार वालों ने दबाव बनाना शुरू कर दिया था। एक दिन वह पत्र लिखकर घर पर छोड़ गए कि उनका जीवन देश के लिए समर्पित है। वर्ष 1972 में गाजियाबाद के दर्जन भर 'भगत सिंह ग्रुप' के द्वारा निर्मित मूर्ति के अनावरण के अवसर पर इस परिवार के साथ 24 घंटे गुजारने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अवसर पर माता विद्यावती कौर, बहन प्रकाशवती कौर और भाई कुलतार सिंह भी उपस्थित रहे।

अपनी मृत्यु पर भी भगत सिंह का अंतिम पत्र 22 मार्च 1931 को लिखा गया जिसमें उन्होंने लिखा है, 'जीने की इच्छा मुझ में भी है, मैं इसे छिपाना नहीं चाहता, लेकिन मैं कैद होकर या पाबंद होकर जीना नहीं चाहता। मेरा नाम क्रांति का प्रतीक बन चुका है। क्रांतिकारी दल के आदर्शों और कुर्बानियों ने मुझे बहुत ऊंचा उठा दिया है। इतना ऊंचा कि जीवित रहने की स्थिति में इससे ऊंचा हरगिज नहीं हो सकता। आज मेरी कमजोरियां जनता के सामने नहीं हैं। मैं अगर फांसी से बच गया तो वह जाहिर हो जाएंगी और क्रांति का प्रतीक चिह्न मध्यम हो जाएगा।'

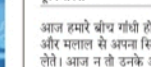

भगत सिंह।

उनके इस बलिदान ने समूचे देश में स्वराज्य प्राप्ति की चाह को और तेज कर दिया। व्यापक जन उभार के अभाव में कांग्रेस भी कोई ठोस कार्यक्रम नहीं अपना पा रही थी। इतिहास साक्षी है कि दबाव में आई कांग्रेस को अपने कराची अधिवेशन में संपूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पास करना पड़ा और मृत प्राय कांग्रेस पार्टी में भी नई चेतना का संचार हुआ।

दैनिक जागरण

बुरे विचार ही हमारी सुख-शांति के शत्रु हैं

कौशल विकास का कार्यक्रम

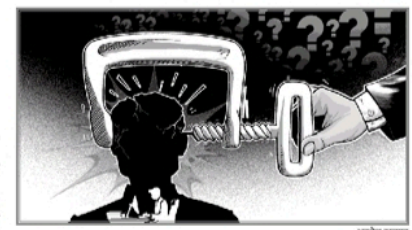

यह अच्छा है कि सरकार और उद्योग जगत मिलकर कुशल मानव संसाधन तैयार करने जा रहे हैं। इसके लिए कौशल विकास मंत्रालय ने मानव संसाधन क्षेत्र की विश्व की जानी-मानी संस्था सोसायटी फार ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट यानी एसएचआरएम के साथ एक अध्ययन शुरू किया है। आशा की जाती है कि इस अध्ययन के उपरांत ऐसे कदम उठाए जाएंगे, जिनसे उद्योग जगत को वैसे हुनरमंद युवा अवश्य मिल सकेंगे, जैसे उसे चाहिए। इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि उद्योग जगत को वैसे प्रशिक्षित और अपने काम में दक्ष कर्मी नहीं मिल पाते, जो उसकी जरूरत को पूरा करने में समर्थ हों। इसका प्रमाण यह है कि देश के विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में अनेक कारखानों के बाहर कुशल कर्मियों की आवश्यकता वाली सूचनाएं चस्पा होती हैं। कौशल विकास मंत्रालय को उन कारणों का निवारण करने के लिए तत्पर रहना चाहिए, जो ऐसी सूचनाओं के लिए जिम्मेदार हैं। इस तथ्य से इन्कार नहीं कि देश में रोजगार के पर्याप्त अवसर नहीं पैदा हो रहे हैं, लेकिन इसी के साथ एक सच्चाई यह भी है कि उद्योग जगत को जैसे हुनरमंद कर्मी चाहिए, उनका उसे अभाव दिखता है। इसका एक बड़ा कारण यही है कि अपने देश में बड़ी संख्या में छात्र डिग्री-डिप्लोमा लेकर तो निकल रहे हैं, लेकिन वे किसी कौशल से लैस नहीं होते। यही स्थिति केवल इंटरमीडिएट तक पढ़ाई करने वाले छात्रों की भी होती है। कौशल के अभाव के कारण उन्हें रोजगार पाने में कठिनाई होती है। यह कठिनाई इसलिए भी बढ़ रही है, क्योंकि सरकारी नौकरियां कम हो रही हैं।

अब जब कौशल विकास मंत्रालय उद्योग जगत के साथ मिलकर कुशल मानव संसाधन तैयार करने की रणनीति बना रहा है, तब फिर इसकी समीक्षा भी आवश्यक है कि राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना और ऐसे ही अन्य कार्यक्रम वांछित परिणाम क्यों नहीं दे सके? कहीं इसका कारण यह तो नहीं कि अभी तक सरकार उद्योग जगत के प्रतिनिधियों से विचार-विमर्श तक सीमित रहती थी? जो भी हो, यह एक सही रणनीति है कि अब अलग-अलग सेक्टर की कंपनियों के मानव संसाधन विभाग के लोगों से मिलकर उनकी जरूरतों को समझा जाएगा। इसके अतिरिक्त एसएचआरएम की रिपोर्ट के अनुसार पाठ्यक्रम तैयार किए जाएंगे। उचित यह होगा कि छात्रों को स्कूलों में ही कौशल विकास से लैस करने का काम प्राथमिकता के आधार पर किया जाए, ताकि पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्हें नौकरी तलाशने के दौरान अलग से कौशल विकास का प्रशिक्षण न लेना पड़े। चीन ऐसा ही करता है। यदि वह विश्व का कारखाना बना हुआ है तो इसलिए भी कि उसके पास हर क्षेत्र की कंपनियों के लिए कुशल कर्मी हैं। यह सही समय है कि अपने देश में इस पर भी विचार किया जाए कि जो लाखों छात्र प्रतिवर्ष बीए, एमए आदि की डिग्री लेकर निकलते हैं, उन्हें किसी कौशल से कैसे लैस किया जाए।

भ्रष्टाचार का रोग

पंजाब सरकार की ओर से भ्रष्टाचार के खिलाफ सख्ती की गई है, लेकिन अब भी आम लोगों को इस गंभीर बीमारी से सरकारी विभागों में दो-चार होना पड़ रहा है। शायद ही कोई विभाग हो जहां पर जनता परेशान न होती हो। जो काम आसानी से हो जाना चाहिए उसके लिए भी कई-कई चक्कर लगाने पड़ते हैं। सबसे ज्यादा शिकायतें पुलिस विभाग की लोग करते हैं जो कि ज्यादा चिंताजनक है। कभी रिश्वत लेते पुलिस अधिकारी या कर्मचारी गिरफ्तार किए जाते हैं तो कभी हेरोइन के साथ।

रिश्वत लेने वाले अधिकारियों और कर्मचारियों के खिलाफ सरकार की ओर से ऐसी कार्रवाई की जानी चाहिए जिससे दूसरों को सबक मिल सके

ताजा मामला तरनतारन का है जहां एएसआइ रिश्वत लेते हुए गिरफ्तार किया गया है। एक मोबाइल फोन वापस करने के लिए तीस हजार रुपये मांगना हैरानीजनक है। जिस पुलिस से भ्रष्टाचार के खिलाफ कार्रवाई की उम्मीद की जाती है यदि वही कदाचार में लिप्त रहे तो लोगों का भरोसा उठेगा ही। इससे पहले भी कई अधिकारी एनडीपीएस एक्ट के मामले में विभाग की किरकिरी करा चुके हैं। हाई कोर्ट में भी पुलिस को फटकार लगाई जा चुकी है। यह स्थिति ठीक नहीं है। पुलिस की तरह बिजली विभाग से भी भ्रष्टाचार की शिकायतें ज्यादा आती हैं। ताजा मामला जुर्माना माफ करवाने के लिए अमृतसर में जेई की ओर से रिश्वत लेने का है। हालांकि विजिलेंस ने उसे गिरफ्तार कर लिया है, लेकिन सरकार को ऐसी व्यवस्था बनानी होगी जिससे इस तरह के मामलों की पुनरावृत्ति न हो। निगरानी तंत्र और प्रभावी बनाना होगा। इसके साथ ही रिश्वत लेने वालों के खिलाफ ऐसी कार्रवाई की जानी चाहिए जिससे दूसरों को सबक मिल सके।

कार्य-जीवन में खतरनाक असंतुलन

प्रो. गौरव वल्लभ

आज कंपनियां कम कार्यबल से जितना संभव हो, उतना उत्पादन करने की जो कोशिश कर रही हैं, उसने एक हानिकारक माहौल तैयार किया है

अवधेश राजपूत

पिछले दिनों पुणे की एक युवा सीए का काम से संबंधित तनाव के कारण निधन हो जाना कार्यस्थल पर उस उच्च दबाव की याद दिलाता है, जिसका कई युवा पेशेवरों को प्रतिदिन सामना करना पड़ता है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की हालिया रिपोर्ट से पता चला है कि भारत में 9.5 प्रतिशत से अधिक आत्महत्याएं वेतनभोगी पेशेवरों द्वारा की गईं। यह चिंताजनक है और इस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है। इस संकट के लिए किसी एक कारण को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि यह कार्यस्थल पर दबाव की संस्कृति से उत्पन्न हुआ है। यह सच है कि आज कारपोरेट जगत में प्रतिस्पर्धा पहले से कड़ी हो गई है। आज कंपनियां कम कार्यबल से जितना संभव हो, उतना उत्पादन करने की कोशिश कर रही हैं। इसने एक हानिकारक माहौल तैयार किया है, जो कार्यस्थल पर मानवता को लील रहा है। इसने कार्यस्थल को एक युद्धक्षेत्र में बदल दिया है, जहां व्यक्ति न केवल पदोन्नति या वेतन वृद्धि के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं, बल्कि अपनी भावनात्मक भलाई के लिए भी लड़ रहे हैं। युवा पेशेवर अक्सर कारपोरेट जीवन के तनाव के लिए तैयार नहीं होते। स्कूल-विश्वविद्यालय तकनीकी कौशल विकास पर तो ध्यान केंद्रित करते हैं, लेकिन व्यवहार में लचीलापन लाने और तनाव प्रबंधन की उपेक्षा करते हैं।

लंबे समय तक काम से संबंधित तनाव के कारण उत्पन्न बर्नआउट (मानसिक एवं शारीरिक थकान) का एक अन्य कारण सामाजिक अलगाव भी है। भारत में सीए या किसी अन्य व्यावसायिक पाठ्यक्रम में सफलता प्राप्त करने का दबाव अक्सर छात्रों को कालेज के अनुभव से खुद को अलग करने के लिए प्रेरित करता है। केवल अपनी पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करने के कारण वे कालेज जीवन से चूक जाते हैं। यह अलगाव उन्हें उच्च दबाव वाली कारपोरेट दुनिया के लिए तैयार नहीं कर पाता और उनमें आवश्यक सामाजिक और भावनात्मक कौशल की कमी रह जाती है। कारपोरेट जगत अक्सर नेतृत्व और भावनात्मक बुद्धिमत्ता के बजाय अंतिम परिणामों की उपलब्धि या तकनीकी कौशल के आधार पर प्रबंधकों को बढ़ावा देता है। इससे प्रबंधकों के पास अपनी टीमों को भावनात्मक रूप से समर्थन देने के लिए समय और कौशल की कमी रह जाती है, जिससे तनाव पैदा होता है। कार्यस्थल पर पेशेवरों की संतुष्टि इससे काफी प्रभावित होती है कि उनके वरिष्ठ उनके साथ कैसा व्यवहार करते हैं और उनकी टीम की गतिशीलता क्या है।

युवा पेशेवरों को बर्नआउट से बचने के लिए उन्हें स्वीकृति या मान्यता प्रदान करने की भी आवश्यकता है। एक साधारण धन्यवाद नोट या सार्वजनिक स्वीकृति ही काफी हो सकती है। इसके साथ-साथ कार्य-जीवन संतुलन बनाए रखना और कंपनियों द्वारा अपने कर्मचारियों की भलाई को प्राथमिकता देने की आवश्यकता है। कारपोरेट संस्कृति में मानसिक स्वास्थ्य को लेकर नकारात्मक सोच कई कर्मचारियों को मदद मांगने से रोकता है। इसके लिए कंपनियों को एक ऐसा परिवेश बनाने की आवश्यकता है, जहां मानसिक स्वास्थ्य के बारे में खुली बातचीत को प्रोत्साहित किया जाए। इसके अतिरिक्त, तकनीकी प्रगति से प्रेरित आज की "आलवेज आन" संस्कृति ने पेशेवर और व्यक्तिगत समय के बीच की रेखा को धुंधला कर दिया है, जिससे कर्मचारियों, विशेष रूप से युवा पेशेवरों के बीच तनाव का स्तर बढ़ रहा है। पेशेवरों को बर्नआउट की समस्या से निजात दिलाने के लिए कारपोरेट जगत को काम की मात्रा के बजाय जीवन की गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। ओवरटाइम या सप्ताहांत में काम करने या व्यक्तिगत समय छोड़ने के लिए कर्मियों को पुरस्कृत करने के बजाय कंपनियों को दक्षता और संतुलन पर जोर देना चाहिए। कंपनियों को अपने कर्मियों को कार्यस्थल पर भलाई को प्राथमिकता देने, ब्रेक लेने और व्यक्तिगत समय की सीमाओं का सम्मान करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। सरकारों को भी सार्वजनिक स्वास्थ्य एजेंडे के हिस्से के रूप में कार्य-जीवन संतुलन का समर्थन करने की आवश्यकता है, क्योंकि लंबे समय तक काम करने से दीर्घकाल में मानसिक स्वास्थ्य संकट पैदा होता है और उत्पादकता कम होती है। कार्यस्थल पर उत्पादकता और खुशहाली बढ़ाने के लिए पारंपरिक 40 घंटे के कार्यसप्ताह को अपनाना एक आजमाया हुआ तरीका है। इस अवधारणा को स्वीडन जैसे देशों ने प्रभावी ढंग से लागू किया है, जिससे वहां उत्पादकता और कर्मचारियों की खुशी बढ़ी है। अध्ययन बताते हैं कि कम कार्यसप्ताह बेहतर कार्य-जीवन संतुलन को बढ़ावा देता है, तनाव के स्तर को कम करता है और मानसिक कल्याण को बढ़ावा देता है, जो लंबे समय में उत्पादकता बढ़ाने में योगदान करते हैं। जर्मनी की प्रायोगिक चार-दिवसीय कार्यसप्ताह योजना इसका ताजा उदाहरण है। स्वीडन और जर्मनी कड़ी मेहनत के बजाय बेहतर तरीके से काम करने के फायदों पर जोर देते हैं। दोनों देश दुनिया भर में कार्यस्थल संस्कृति में बदलाव पर जोर दे रहे हैं, ताकि कारपोरेट परिणामों और कर्मचारी कल्याण को समान महत्व दिया जा सके। ये माडल उन कंपनियों और सरकारों के लिए प्रेरणास्रोत के रूप में काम कर सकते हैं, जो अधिक टिकाऊ कार्यसंस्कृति बनाना चाहते हैं और जो कर्मचारियों के दीर्घकालिक स्वास्थ्य और उत्पादकता को पहले स्थान पर रखते हैं। फ्रांस और जर्मनी जैसे देशों ने तो श्रमिकों की भलाई और स्वस्थ कार्य-जीवन संतुलन सुनिश्चित करने के लिए "डिस्कनेक्ट करने का अधिकार" कानून लागू किया है। यह कानून कर्मचारियों को काम के बाद काम से संबंधित संचार से इन्कार करने का अधिकार देता है।

कार्यस्थल पर तनाव के कारण खोया हुआ प्रत्येक जीवन यही बताता है कि कारपोरेट संस्कृति लोगों पर पैसे को, करुणा पर दक्षता को और कल्याण पर उत्पादकता को प्राथमिकता देती है। ऐसे में हमें व्यावसायिक माहौल को फिर से विकसित करने के लिए एक सहयोगात्मक प्रयास की आवश्यकता है। सरकारों को इसे सार्वजनिक स्वास्थ्य चिंता के रूप में लेना चाहिए और कानून एवं नीति में मानसिक स्वास्थ्य और कार्य-जीवन संतुलन को प्रमुख स्थान देना चाहिए। इससे पहले कि और जानें जाएं, बदलाव का समय अब आ गया है।

(लेखक एक्सएलआरआइ, जमशेदपुर में वित्त के प्रोफेसर एवं भाजपा नेता हैं)

response@jagran.com

झूठे नैरेटिव से लड़ने में नाकाम भाजपा

अवधेश कुमार

यदि भाजपा राहुल गांधी की विचारधारा से लड़ते हुए उन्हें रक्षात्मक नहीं कर पा रही है तो यह संकट का प्रमाण है

आज भारत का हर विवेकशील व्यक्ति हतप्रभ है। लोकसभा में नेता विपक्ष राहुल गांधी का हालिया वक्तव्य है कि अमेरिका में उन्होंने कुछ भी गलत नहीं कहा और भाजपा उन्हें डराकर चुप कराना चाहती है। उन्होंने प्रश्न उठाया कि क्या हमको ऐसा भारत नहीं चाहिए, जहां हर सिख बिना डरे अपने धर्म का पालन कर सके? कांग्रेस अमेरिका में दिए राहुल के वक्तव्यों के विरुद्ध कैबिनेट मंत्रियों और भाजपा नेताओं के बयानों को उनके विरुद्ध हिंसा भड़काने वाला बताकर जगह-जगह प्रदर्शन कर रही है। कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखा और बयान दिया कि उन्होंने अपने साथियों के विरुद्ध कार्रवाई न करके एक प्रकार से समर्थन किया है। सामान्य स्थिति तो यही होती कि अमेरिका में राहुल ने जो कुछ कहा, जिनसे मिले, उसके विरुद्ध देश में प्रखर आक्रामकता दिखाई जाती। कोई नेता ऐसे भारत विरोधी बयान दे, जिनसे विभाजनकारी शक्तियों को बल मिले, जिसका लाभ खालिस्तानी और भारत विरोधी उठाएं, वह घोषित भारत विरोधियों से मिले तथा गलती स्वीकारने के बजाय इसकी आलोचना करने वालों का विरोध करे और उसे समर्थन भी मिले, यह किसी भी हालात में सामान्य स्थिति नहीं हो सकती। इसे ही कहते हैं इकोसिस्टम और नैरेटिव तंत्र की शक्ति।

केंद्रीय मंत्री रवनीत सिंह बिट्टू ने राहुल गांधी को सबसे बड़ा आतंकी कहा या गिरिराज सिंह ने हमला किया। उनकी भाषा से हमारी असहमति होगी, किंतु ये सब प्रतिक्रियाएं राहुल के विभाजनकारी, उकसाऊ और भारत की विश्व में छवि नष्ट करने के व्यवहारों के विरुद्ध हैं। बड़ी संख्या में आम आदमी बातचीत में राहुल के बयान पर ऐसी ही गुस्सैल प्रतिक्रिया दे रहा है। आश्चर्य की बात है कि भाजपा इतने बड़े मुद्दे पर राहुल के खिलाफ माहौल नहीं बना सकी। इसके उलट उसके नेताओं और मंत्रियों का बयान कांग्रेस के लिए मुद्दा बन गया और वह जनता के बीच जा रही है कि ये लोग राहुल की हत्या करना चाहते हैं। यह तो उलटी दिशा में जलधारा को बहाना हुआ। भाजपा के पास इतनी क्षमता है कि वह इसे देशव्यापी मुद्दा बनाकर राहुल और कांग्रेस को रक्षात्मक होने या बयान वापस लेने के लिए विवश कर सकती थी। अगर जनता किसी नेता और पार्टी के विरुद्ध दिखने लगे, तो उसके पास पीछे हटने के अलावा कोई चारा नहीं होता। राहुल अमेरिका में केवल इल्हान उमर जैसे भारत विरोधी और पाकिस्तान समर्थक से ही नहीं मिले। मुलाकातियों में व्हाइट हाउस में हमेशा भारत के विरुद्ध शरारत भरे प्रश्न करने वाले बांग्लादेशी पत्रकार से भी राहुल की मुलाकात हुई। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि भारत विरोधी समूह राहुल से मिल रहा था तो उसका एजेंडा क्या रहा होगा?

राहुल गांधी के खिलाफ भाजपा का प्रदर्शन। प्रेट्र

सिखों के मामले में राहुल गांधी के बयान का आतंकी गुरपतवंत सिंह पन्नू समर्थन करता है और वह इसका प्रतिवाद नहीं करते। देश में इसके विरुद्ध नैरेटिव भी नहीं बनता। ऐसी तो नौबत आनी ही नहीं चाहिए थी कि मल्लिकार्जुन खरगे भाजपा को ही आरोपित करने वाला पत्र प्रधानमंत्री को लिखते। भाजपा अध्यक्ष और केंद्रीय मंत्री जगत प्रकाश नड्डा के उत्तर में राहुल पर टिप्पणियां थीं और कांग्रेस द्वारा प्रधानमंत्री मोदी के लिए प्रयुक्त किए गए अपशब्दों का विवरण। इसमें सिखों पर दिए गए बयान या उनकी मुलाकातियों वाला अक्षम्य आचरण नेपथ्य में चला गया। भाषाओं के संदर्भ में दिया गया राहुल का वक्तव्य भी देश में संघर्ष पैदा करने वाला था। पिछले काफी समय से राहुल का पूरा नैरेटिव देश के अंदर जाति, समुदाय, भाषा, क्षेत्र, आर्थिक स्थिति आदि के आधार पर लोगों को संघर्ष के लिए उकसाने पर केंद्रित हो चुका है। भाजपा उनके विरुद्ध मीडिया में प्रतिक्रिया देती है, राहुल आगे बढ़कर कुछ और बोलते हैं, जिसे उनका इकोसिस्टम फैलाने में जुट जाता है। खुद को हिंदू कहने वाले हिंसा-नफरत करते हैं... वाला राहुल का भाषण हिंदुत्व विचारधारा वाले सभी संगठनों, उसे मानने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध उनके अभियान का खतरनाक हिस्सा था और अमेरिका का उनका वक्तव्य उसी का विस्तार था। कुछ भाजपा सांसदों ने उक्त भाषण का विरोध किया तो उसे संसद के रिकार्ड से निकाल दिया गया, लेकिन इंटरनेट मीडिया पर वह पूरा भाषण उपलब्ध है। देश में इस भाषण के वीडियो को अभियान की तरह ले जाकर माहौल बनाया जा सकता था। यह सब नहीं हो पा रहा तो यह चिंता का विषय है।

अगर भाजपा सरकार में होते हुए राहुल और उनकी विचारधारा से लड़ते हुए, उन्हें और उनके पूरे इकोसिस्टम को रक्षात्मक होने को विवश करते हुए नहीं दिख रही है तो यह असाधारण संकट का प्रमाण है। सनातन और हिंदुत्व के विरुद्ध जिस तरह का विष-वमन आइएनडीआइए के घटकों ने किया, उसके विरुद्ध भी ऐसी स्थिति नहीं पैदा की गई, जिससे आम लोग उनके विरोध में खड़े होकर उनके इकोसिस्टम पर प्रहार कर पाते। बौद्धिक क्षेत्र में जिस प्रखरता से इन विषयों को उठाया गया, उसका रत्ती भर भी असर राजनीति और संगठन के स्तर पर हुआ होता तो माहौल दूसरा होता। भाजपा के पास तो इस पूरे सोच का तथ्यों के साथ खंडित करने का ठोस आधार है। तमिल भाषा के विकास, तमिल विद्वानों का वैश्विक सम्मान तथा अन्य भाषाओं के साथ उसके समागम के जितने कदम मोदी सरकार ने उठाए, उतने किसी ने नहीं उठाए। भारत की सभी भाषाओं में प्रोफेशनल शिक्षा देने की नीति पहली बार बनी। फिर भी भाजपा अपने विरोधियों को बेनकाब नहीं कर पा रही है। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि गलत नैरेटिव से भ्रमित होकर उसे सही मानने वालों की संख्या बढ़ी है और लोकसभा 2024 का परिणाम इसका साक्षी है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

अंतःकरण और उन्नति

मनुष्य का अंतःकरण उसके व्यवहार का आधार है। मनुष्य का अंतःकरण ही पाप और पुण्य का निर्धारक है। अंतःकरण ही इंद्रियों को पाप या पुण्य करने के लिए प्रेरित करता है। कलुषित अंतःकरण पाप और शुद्ध अंतःकरण पुण्य का बायस होता है।

अंतःकरण की शुद्धता को जानने का एक सही तरीका है। यदि परनिंदा सुनकर आपको प्रसन्नता नहीं होती है तो आप अपना अंतःकरण शुद्ध समझें, क्योंकि हम जिसकी निंदा सुनेंगे उसके प्रति द्वेष बुद्धि उत्पन्न होगी। द्वेष बुद्धि के उत्पन्न होने से हमारा अंतःकरण कलुषित हो जाता है। कलुषित अंतःकरण मनुष्य को पाप की ओर प्रवृत्त करता है। इसके विपरीत यदि अंतःकरण निष्कलुष या निर्मल है तो हमारी इंद्रियां पाप कर्म में निरत नहीं होती हैं। यदि मन में कुभावना नहीं होती है तो मनुष्य की दृष्टि दोष रहित होती है। उसके कान परनिंदा नहीं, बल्कि सत्संग सुनते हैं। उसका जीवन रूप, रस, गंध की आराधना न होकर त्याग और तेज की साधना होता है। तेज और त्याग के लिए इंद्रियों का वश में होना आवश्यक है। इंद्रियों पर शुद्ध अंतःकरण ही अंकुश लगा सकता है। यदि मनुष्य अपने मन को मात्र सुख का साधन बनाता है तो उसकी बुद्धि निर्बल हो जाती है। जैसे खूंटे के कमजोर होने पर उसमें बंधी गाय उसे तोड़कर भाग जाती है, वैसे ही निर्बल बुद्धि से नियंत्रित मन चंचल होकर विषय भोग की ओर भागता है। यह विषयराग अवनति का रास्ता है। जबकि वैराग्य और अभ्यास उन्नति के मार्ग पर ले जाते हैं।

वस्तुतः मनुष्य का जीवन कर्म योनि है। वह किसी भी स्थिति में कर्म से च्युत नहीं हो सकता, परंतु सम्यक् कर्म का चुनाव आवश्यक है। यदि जीवन का नवनीत पाना है तो पानी मथने से काम नहीं चलेगा। उसके लिए दूध को मथना ही पड़ेगा। शुद्ध अंतःकरण के साथ सम्यक् कर्म, त्यागपूर्ण भोग और निष्काम कर्म का पालन मनुष्य की उन्नति का एकमेव मार्ग है।

डा. प्रशांत अग्निहोत्री

धरती पर जीवन कठिन बनाता मानव

प्रदीप

पारिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न जीव एक-दूसरे पर निर्भर हैं, इसलिए अन्य प्राणियों की विलुप्ति से मनुष्यों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा

अपने स्वार्थ में लिप्त मानव ने प्रकृति का इतना अंधाधुंध दोहन किया है कि अब उसे यह भी अहसास नहीं रहा कि वह न केवल अपने लिए, बल्कि इस धरती पर रहने वाले लाखों अन्य प्राणियों के भी जीवन को कठिन बना रहा है। मानव विकास की सबसे बड़ी कीमत वन्य जीवों ने चुकाई है। आज हम दुनिया भर में बड़े पैमाने पर सामूहिक जैविक विलुप्ति को देख सकते हैं। अफ्रीका, एशिया और अन्य जगहों पर बड़े स्तनधारी जीव विशेष रूप से खतरे में हैं। लगभग 60 प्रतिशत शाकाहारी वन्य जीव जैसे- हाथी और दरियाई घोड़े पहले से ही विलुप्ति के कगार पर हैं। दुनिया भर के शोधकर्ता विलुप्ति की सटीक वजहों को समझने के लिए जनसंख्या माडलों को विकसित करने में जुटे हुए हैं। इन माडलों से बड़े स्तनधारी जीव क्यों कम हो रहे हैं, इस बारे में महत्वपूर्ण सुराग मिल सकते हैं।

हाल में होहेनहेम विश्वविद्यालय, जर्मनी के शोधकर्ताओं ने पहला ऐसा माडल विकसित किया है, जो बताता है कि बड़े स्तनधारी जीव एक-दूसरे और अपने पर्यावरण के साथ किस तरह प्रतिक्रिया करते हैं। शोधकर्ताओं ने पूर्वी अफ्रीका के टोपी (एक बड़ा मृग) की आबादी पर माडल का परीक्षण किया। टोपी की भारी आबादी में गिरावट के कारणों में प्राकृतिक आवास का नुकसान, अवैध शिकार और शिकारियों द्वारा हत्या शामिल थी।

वन्य जीवों की आबादी में गिरावट के पीछे क्या कारण हैं, यह जानना अत्यंत मूल्यवान है। पारिस्थितिकी तंत्र में संतुलन के लिए सभी प्राणियों का संरक्षण जरूरी है, अन्यथा किसी भी एक वन्य प्राणी के विलुप्त होने पर पूरी संरचना धीरे-धीरे बिखरने लगती है। चूंकि पारिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न जीव एक-दूसरे पर निर्भर हैं, इसलिए अन्य प्राणियों की विलुप्ति से हम मनुष्यों पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। हालांकि आज भी कई लोग ऐसा मानते हैं कि कुछ प्रजातियों के विलुप्त होने से मानव अस्तित्व पर कोई खतरा नहीं आएगा। यह दावा बेमानी है। वास्तविकता यह है कि पूरी पारिस्थितिकी एक इमारत की तरह है। ऐसे में एक ईंट के कमजोर होने या गिरने से पूरी इमारत के धराशायी होने का खतरा रहता है। छोटे-से-छोटे जीव की पारिस्थितिकी संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मधुमक्खियों की विलुप्ति की ही कल्पना कीजिए। मधुमक्खियों के बिना परागण नहीं होगा, फसलें और पेड़ नहीं फलेंगे और पेड़ नहीं होंगे तो कार्बन डाईआक्साइड को आक्सीजन में कौन बदलेगा। फिर मनुष्य और दूसरे जीव सांस कैसे ले पाएंगे। इसलिए ऐसी कई प्रक्रियाएं हैं जिनमें से किसी एक जीव के विलुप्त हो जाने से अप्रत्याशित परिणाम झेलने पड़ सकते हैं। बहरहाल, जीवों की विलुप्ति के कारणों के बारे में हमारी समझ में सुधार से यह सुनिश्चित होगा कि उनके संरक्षण के लिए समुचित कार्रवाई कैसे की जाए।

(लेखक विज्ञान संचारक हैं)

मेलबाक्स

कृषि सुधार की नई पहल

'ग्रामीण भारत की सूरत बदलती कृषि' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में रमेश कुमार दुबे ने ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि सुधार के लिए तकनीकी ज्ञान, प्रशिक्षण और सरकारी योजनाओं के सही क्रियान्वयन पर जोर दिया है। यह दृष्टिकोण आज के आधुनिक परिवेश को देखते हुए ग्रामीण कृषि के लिए आवश्यक और उचित भी है। ग्रामीण भारत में कृषि का जो परंपरागत स्वरूप रहा है, उसमें अब धीरे-धीरे बदलाव की आहट सुनाई देने लगी है। सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं और डिजिटल माध्यमों के उपयोग से किसानों की स्थिति में सुधार का प्रयास हो रहा है, परंतु यह सुधार कितना स्थायी होगा, इस पर गंभीरता से सोचने की आवश्यकता है। सबसे पहले यह समझना जरूरी है कि हमारे गांवों के किसान आज भी तकनीक और नवीन ज्ञान से वंचित हैं। योजनाओं की घोषणा तो होती है, परंतु उनका वास्तविक लाभ केवल सीमित वर्ग तक ही पहुंच पाता है। इस समस्या का मूल कारण यह है कि कई किसान आज भी आधुनिक तकनीक, फसल विविधीकरण और बेहतर विपणन साधनों से अपरिचित हैं। इससे उनकी उत्पादकता और आय में कमी आ रही है। एक प्रमुख समस्या यह भी है कि छोटे और सीमांत किसानों को नई योजनाओं का लाभ उठाने के लिए जो प्रशिक्षण और सुविधाएं मिलनी चाहिए, वे पर्याप्त नहीं हैं। इस दिशा में हमें गांव स्तर पर कृषि विशेषज्ञों की तैनाती करनी चाहिए, जो किसानों को आधुनिक खेती के साथ-साथ फसल के विपणन और उद्यमशीलता के बारे में जानकारी दे सकें। साथ ही, स्थानीय किसान संगठनों को सशक्त बनाना आवश्यक है, ताकि वे सरकार से मिलने वाले लाभों को हर किसान तक पहुंचा सकें। इसके अतिरिक्त, पंचायतों और ग्राम सभाओं को भी कृषि विकास योजनाओं में भागीदार बनाकर जागरूकता अभियान चलाए जाएं। इससे यह सुनिश्चित होगा कि किसान अपने अधिकारों और सुविधाओं के प्रति सचेत रहें और उनका पूरा लाभ उठा सकें।

awanishg30@gmail.com

भारत की चिंता का ध्यान रखे श्रीलंका

श्रीलंका को विशेष रूप से भारत के साथ संबंधों को आगे बढ़ाना वहां की नई सरकार की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण आयाम होगा। श्रीलंका के नए राष्ट्रपति अनुरा दिसानायके अपने भाषणों और साक्षात्कारों में यह बात कह चुके हैं कि उनके नेतृत्व में श्रीलंका न तो किसी खेमे का हिस्सा होगा और न ही भू-राजनीतिक दौड़ से कोई मतलब रखेगा। श्रीलंका पिछले दो सालों से राजनीतिक के साथ-साथ आर्थिक उठापटक से भी जूझ रहा है। अब राष्ट्रपति दिसानायके पर श्रीलंका को पटरी पर लाने के लिए दोहरी जिम्मेदारी होगी। साल 2022 में श्रीलंका में तख्तापलट के बाद श्रीलंकाई सरकार ने एलान किया कि देश दिवालिया हो चुका है। तब लाखों प्रदर्शनकारी सड़कों पर उतर आए और तत्कालीन राष्ट्रपति को हटाकर ही दम लिया। इसके बाद ये देश जिस आर्थिक संकट में डूबा तो अब तक उबर नहीं सका। श्रीलंका को आर्थिक मदद पहुंचाने के लिए सबसे पहले भारत आगे आया। इसी साल जून में कोलंबो में हुए इंडिया पार्टनर्स मीट में पूर्व राष्ट्रपति ने कहा था कि भारत से उन्हें 3.5 बिलियन डालर की आर्थिक मदद मिली। इससे देश में आर्थिक स्थिरता तो आई, लेकिन अब भी मामला पूरी तरह सामान्य नहीं हो पाया है। भारत द्वारा मदद किए जाने के बाद इसके लिए चीन भी आगे आया। चीन नहीं चाहता कि भारत के साथ श्रीलंका का संबंध अच्छा रहे। बताते चलें कि दोनों देश आर्थिक दृष्टि से भी करीब हैं, भारत इस द्वीप का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। दोनों के बीच गहरे जातीय और सांस्कृतिक संबंध हैं। भारत श्रीलंका का एकमात्र पड़ोसी है, जो पाक जलडमरूमध्य से अलग होता है। दोनों देश दक्षिण एशिया में एक रणनीतिक स्थान रखते हैं और हिंद महासागर में एक आम सुरक्षा छत्र बनाने की मांग करते हैं। श्रीलंका के नई सरकार को भारत से इतर गतिविधियों को प्रायोजित करना आत्मघाती कदम होगा।

युगल किशोर राही, ग्रेटर नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली • शनिवार • 28 सितम्बर • 2024
www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

मैं एक ऐसे ईश्वर की कल्पना नहीं कर सकता जो अपने द्वारा सृजन किए गए लोगों को पुरस्कृत करे और सजा दे, ये बस मनुष्य के दोष का प्रतिबिम्ब हैं

-ऐल्बर्ट आइन्स्टाइन

मुआवजे का हक

सुप्रीम कोर्ट ने घरेलू हिंसा अधिनियम पर ऐतिहासिक फैसला सुनाया। शीर्ष अदालत ने कहा कि घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण कानून 2005, नागरिक संहिता है जो भारत में हर महिला पर लागू होता है। चाहे उस महिला की धार्मिक संबद्धता और सामाजिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो। शीर्ष अदालत ने भरण-पोषण और मुआवजा देने से संबंधित मामले में कर्नाटक हाई कोर्ट के आदेश को चुनौती देने वाली अपील पर फैसला सुनाया। याचिकाकर्ता महिला ने अधिनियम की धारा 12 के तहत अपील की थी जिसके पति को फरवरी, 2015 में बारह हजार रुपये मासिक और एक लाख रुपये मुआवजा देने के निर्देश दिए थे। पति की अधिनियम 25 के तहत इस आदेश में परिवर्तन की अपील को खारिज कर दिया गया था। महिला के हाई कोर्ट का दरवाजा खटखटाने पर उसकी याचिका खारिज कर दी गई। मजिस्ट्रेट को पति के आवेदन पर विचार करने को कहा गया। सुप्रीम कोर्ट की पीठ ने कहा विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए मजिस्ट्रेट को परिस्थितियों में बदलाव के कारण संतुष्ट होना होगा जिसके लिए परिवर्तन, संशोधन का आदेश पारित करने की आवश्यकता है। साथ ही, यह भी कहा कि पीड़ित अधिनियम के प्रावधानों के तहत आदेश में परिवर्तन, संशोधन या निरस्तीकरण की मांग कर सकता है। अपने समाज में घरेलू हिंसा से बहुत महिलाएं जूझती हैं। उनके साथ न सिर्फ नियंत्रणकारी बर्ताव होता है, बल्कि पति मार-कूट, जानलेवा हमले तक करते हैं। दैहिक-यौन, भावनात्मक-मनोवैज्ञानिक दुर्व्यवहार से त्रस्त होने के बाद ही कोई स्त्री न्याय की गुहार लगाती है। याचिककर्ता नौ सालों से अपने कानूनी अधिकार के लिए अदालती चक्कर लगा रही है। यहां सवाल केवल आदेशित भरण-पोषण राशि में वृद्धि या कमी का नहीं है, बल्कि यह देश की किसी भी महिला नागरिक को उसके हकों से वंचित करना भी है। चूंकि सरकारें अपने मुनाफे के लोभ में समुदायों या पृष्ठभूमि के आधार पर महिलाओं के भरण-पोषण और मुआवजे संबंधी कानूनों में पेंचीदगियां उत्पन्न करती रही हैं। हर महिला को यह अधिकार देकर अदालत ने घरेलू हिंसा कानून को पारदर्शी बनाने के साथ ही दूरगामी सकारात्मक परिणामों के लिए पैमाना तय कर दिया। परिवार अदालतें भी घरेलू हिंसा के मामले में इसका प्रयोग कर महिलाओं को उनका हक दिला सकेंगी। दरअसल, महिलाओं के भरण-पोषण संबंधी पेचीदे कानूनों का कार्यान्वयन अच्छे से न हो पाने से महिलाओं का संत्रास बढ़ा है।

कूटनीतिक प्रयास का असर

सेंट पीटर्सबर्ग में 12 सितम्बर को राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल और उनके चीनी समकक्ष वांग यी के बीच हुई बातचीत के बाद चीन के रक्षा मंत्रालय की ओर से कहा गया है कि दोनों देशों ने पूर्वी लद्दाख में विवादित स्थलों से अपने सैनिकों को हटाने के लिए सहमति बनाई है। इस दिशा में आगे भी बातचीत जारी रहेगी। 2020 में पूर्वी लद्दाख के गलवान घाटी में दोनों देशों के बीच सैनिक झड़पें हुई थी। इसके बाद से दोनों पक्षों के बीच विवादित मुद्दों को लेकर बातचीत जारी है। कूटनीति स्तर पर बातचीत का ही परिणाम है कि 2020 के घटनाक्रम के बाद पूर्वी लद्दाख में दोनों देशों की सेवा की तैनाती के बावजूद सीमा पर सामान्य रूप से शांति कायम है। दोनों देश हिंसक वारदात की पुनरावृत्ति रोकने के लिए तत्पर दिखाई देते हैं। 2022 के नवम्बर में इंडोनेशिया के बाली में प्रधानमंत्री मोदी और चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग के बीच द्विपक्षीय संबंधों और सीमा पर स्थिरता बनाए रखने के बारे में चर्चा हुई थी। अगले महीने 22 से 24 अक्टूबर तक रूस में ब्रिक्स शिखर सम्मेलन होने जा रहा है जिसमें प्रधानमंत्री मोदी और राष्ट्रपति शी जिनपिंग के बीच द्विपक्षीय वार्ता की संभावना जताई जा रही है। इस बैठक के पहले दोनों पक्ष ऐसा वातावरण बनाना चाहते हैं कि मोदी और शी जिनपिंग आपसी रिश्तों को सुधारने की दिशा में ठोस कदम उठाएं। विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने मंगलवार को न्यूयॉर्क के एशिया सोसाइटी पॉलिसी इंस्टीट्यूट के कार्यक्रम में कहा कि भारत चीन संबंधों का असर न केवल एशिया बल्कि पूरी दुनिया पर पड़ेगा। संबंधों में प्रगति के लिए सबसे पहले सीमा पर शांति बहाल करना जरूरी है। जयशंकर का विश्वास है कि अगर एशिया को बहुतध्रुवीय बनाना है तो भारत चीन संबंध इसमें अहम भूमिका निभाएगी। चीन का शीर्ष नेतृत्व यदि बुद्धिमता का परिचय दे तो संबंधों को फिर पटरी पर लाया जा सकता है। जयशंकर यह बार-बार स्पष्ट कर चुके हैं कि द्विपक्षीय संबंधों को पटरी पर लाने के लिए सीमा से सेना को पीछे हटना हटाने तथा शांति एवं सामान्य स्थिति कायम रखना एक आवश्यक शर्त है।

कटाक्ष/ कबीरदास

डंका तो बज रहा है!

अब भाई कोई कुछ भी कहे, मोदी जी का डंका तो बज रहा है। हल्का-धीमा नहीं, जोर-जोर से बज रहा है। अब सिर्फ इसलिए कि अमेरिका में मोदी-मोदी करने के लिए भक्तों को मोदी जी के पीछे-पीछे ढोकर ले जाया गया था, डंके की आवाज कोई कमजोर नहीं हो जाएगी। एनआरआई बन कर अमेरिका में करें या आरआई यानी रेजीडेंट इंडियन बन कर भारत में करें, भारत वाले कर तो मोदी-मोदी ही रहे हैं। अगर यह भी डंका बजना नहीं है, तो डंका बजना किसे कहेंगे?

फिर मोदी जी का डंका सिर्फ भारतीय ही थोड़े बजा रहे हैं। भारत और भारतीयों की छोड़ो, सिर्फ एशिया वाले भी नहीं, योरप वाले भी मोदी जी के नाम के डंके बजा रहे हैं और डंके बजाने ही पड़ेंगे। पट्ठे योरप वालों ने शौक-शौक में यूक्रेन-रूस वाली लड़ाई तो छेड़ ली, लेकिन उनकी गति सांप-छछूंदर वाली हो गई है। न लड़ाई उगलते बनती है, न निगलते। और कोई रास्ता नहीं दिखा तो हमारे मोदी जी से विनतियां कर रहे हैं कि प्लीज, हमारी लड़ाई रुकवा दो। यूक्रेन वाले जेलेंस्की साहब ने तो अब मुगले आजम के प्रसिद्ध डॉयलाग की पूरी कॉमिडी ही कर के रख दी है-यूक्रेन वालो, रूसी तुम्हें जीने नहीं देंगे और अमेरिकी तुम्हें मरने नहीं देंगे; तुम फिलहाल युद्ध की दीवार में चिने रहो! मजा ये कि जेलेंस्की साहब कभी मिलने जा रहे हैं, तो कभी मिलने बुला रहे हैं, पर किसी न किसी बहाने से मोदी जी के गले पड़ रहे हैं। और पूतिन? मिलने भी बुला रहे हैं और मोदी जी के खास दूत बन कर पहुंचे, डोवाल साहब को कुर्सी के इतने किनारे पर, इतने किनारे पर बैठा रहे हैं, कि देखने वालों को देख कर ही डर लगता है कि पूतिन जोर से गला खखार न दे, वर्ना बंदा कहीं कुर्सी से टपक ही न पड़े। ये सब भी तो डंका पिटने के ही लक्षण हैं। और रेजीडेंट इंडियनों के डंके पीटने की तो पूछो ही मत। सुना है बारिश ने बीच में टांग अड़ा दी, वर्ना पुणे वालों ने तो अपनी मैट्रो का मोदी जी से छठवीं बार उद्घाटन करा लिया होता। लोग फिर भी मान नहीं रहे हैं और छठी बार का उद्घाटन रिमोट से ही करने की मांग कर रहे हैं, ताकि सातवीं बार के लिए ज्यादा प्रतीक्षा नहीं करनी पड़े। यह डंका नहीं तो और क्या है?

ये जंग नहीं आसान

हिज्बुल्लाह

डॉ. ब्रह्मदीप अलूने

पश्चिमी एशिया का संकट एक जटिल और दीर्घकालिक समस्या है, जो युद्ध भी भयावहता की आशंका को निरंतर बनाए रखती है। इसके केंद्र में इस्राइल और फिलिस्तीनियों के बीच भूमि के अधिकार और स्वायत्तता के विवाद की खास भूमिका है और इस्लामिक दुनिया के नेतृत्व की लड़ाई ने इसे खतरनाक बना दिया है। पश्चिमी एशिया में सांस्कृतिक विविधता से समृद्ध देश लेबनान, शिया सशस्त्र संगठन हिज्बुल्लाह के शिकंजे में है, और इसकी आक्रामकता के कारण यह गाजा के बाद अब इस्राइल का नया युद्ध का मैदान है।

लेबनान की सीमा उत्तर में सीरिया और दक्षिण में इस्राइल से लगती है। पश्चिम में भूमध्य सागर है। लेबनान में रहने वाले धार्मिक समूहों में सुन्नी, शिया और ईसाई शामिल हैं। शिया समूहों पर ईरान का गहरा प्रभाव है, और हिज्बुल्लाह, सीरिया और अन्य समूहों के साथ उसकी साझेदारी क्षेत्रीय स्थिरता को प्रभावित करती है। लेबनान की भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधता इसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र बनाती है लेकिन ईरान की आर्थिक और सैन्य सहायता से शिया समूह हिज्बुल्लाह, देश की राजनीति और समाज पर हावी है तथा यह इस देश की समस्या का मुख्य कारण माना जाता है। उत्तरी इस्राइल की सीमा लेबनान के साथ मिलती है, जहां हिज्बुल्लाह की गतिविधियों के कारण सुरक्षा संबंधी चिंताएं बनी रहती हैं। इस्राइल के लिए यह क्षेत्र सामरिक रूप से महत्त्वपूर्ण है।

यहीं पर गोलान हाइट्स है, जिस पर इस्राइल ने 1967 के युद्ध में कब्जा किया था। यहां से सीरिया के कुछ हिस्से और लेबनान दिखाई देते हैं। पहाड़ी और घाटियों से भरा गैलील क्षेत्र, इस्राइल का तीसरा सबसे बड़ा शहर, बंदरगाह और औद्योगिक केंद्र हैफा है। लेबनान की सीमा से लगे इस्राइल के इन इलाकों को हिज्बुल्लाह निशाना बनाता रहता है। इन क्षेत्रों में हिज्बुल्लाह की गतिविधियों को खत्म करने के लिए इस्राइल ने युद्ध का सहारा लिया और इससे पश्चिम एशिया में किसी बड़े युद्ध का खतरा बढ़ गया है। इस्राइल के हमले आम तौर पर लेबनान के दक्षिणी हिस्से और विशेषकर उन क्षेत्रों पर केंद्रित होते हैं, जहां हिज्बुल्लाह की मौजूदगी होती है। इन इलाकों में हिज्बुल्लाह का गढ़ दक्षिणी लेबनान लेबनान, लेबनान और इस्राइल के बीच स्थित शिबा फार्म्स जैसे कुछ और इलाके भी हैं, जहां इस्राइल ने सीमा पर ड्रोन और हवाई हमले भी किए हैं। लेबनान के कुछ गुटों से इस्राइल के संघर्ष पिछले पांच दशकों से हो रहे हैं, लेकिन इस बार यह संकट ज्यादा बड़ा है। हिज्बुल्लाह को ईरान ने अत्याधुनिक हथियारों से लैस कर रखा है। हिज्बुल्लाह के पास छोटे और मध्यम दूरी के राकेट हैं, जिनका

इस्तेमाल वे इस्राइल के खिलाफ कर सकते हैं। इनमें कात्यूशा और फज्जर जैसे रॉकेट शामिल हैं। संगठन के पास तोपखाने के हथियार भी हैं, जिनका उपयोग जमीनी लड़ाई में किया जा सकता है। हिज्बुल्लाह के पास एंटी-एयरक्राफ्ट मिसाइलें हैं, जिनसे वे इस्राइल के विमानों को लक्षित कर सकते हैं। हिज्बुल्लाह के पास संचार और निगरानी के लिए उन्नत तकनीकी उपकरण भी हैं, जो उन्हें युद्ध के दौरान लाभ प्रदान करते हैं। ये हथियार हिज्बुल्लाह को इस्राइल के खिलाफ अपनी सैन्य क्षमता बढ़ाने में मदद करते हैं।

इस्राइल अपनी उत्तरी सीमा को सुरक्षित करने के लिए दक्षिण लेबनान में जमीनी हमला करने की योजना बना रहा है, उसका यह कदम खतरनाक हो सकता है। हिज्बुल्लाह ने शिया समुदाय में शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किए हैं। यह स्थानीय स्तर पर अपनी सेवाओं के लिए लोकप्रियता हासिल कर चुका है। हिज्बुल्लाह और अन्य लेबनानी समूहों का मजबूत प्रतिरोध इस्राइली बलों के लिए गंभीर चुनौती साबित हो सकता है। स्थानीय नागरिकों का समर्थन भी उन्हें ताकत दे सकता है। जमीनी हमले से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नकारात्मक प्रतिक्रिया हो सकती है, जिससे इस्राइल की अंतरराष्ट्रीय स्थिति प्रभावित हो सकती है। कई देश इसे मानवाधिकारों का उल्लंघन मान सकते हैं। संघर्ष के दौरान नागरिकों की हताहत होने की आशंका बढ़ जाती है, जिससे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जनहित में नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। लेबनान में जमीनी संघर्ष से पूरे क्षेत्र में अस्थिरता बढ़ सकती है, जो अन्य देशों को भी प्रभावित कर सकती है। यदि संघर्ष बढ़ता है, तो यह एक दीर्घकालिक सैन्य अभियान में बदल सकता है जिससे इस्राइल को अधिक संसाधनों और सैनिकों की आवश्यकता हो सकती है।

इन चुनौतियों के कारण इस्राइल को जमीनी हमले के निर्णय पर सोच-समझ कर विचार करना होगा। हमास से हिज्बुल्लाह ज्यादा खतरनाक और संगठित है। हिज्बुल्लाह अक्सर गुरिल्ला युद्ध की रणनीति अपनाता है, जिसमें छोटे, त्वरित हमले किए जाते हैं। हमले अचानक होते हैं, और विरोधियों को असामान्य स्थानों से निशाना बनाते हैं। हिज्बुल्लाह का एक प्रमुख हमला राकेट और मिसाइलों का इस्तेमाल करना है। यह इस्राइल के भीतर बड़े शहरों और सैन्य ठिकानों को निशाना बनाता है। हिज्बुल्लाह कभी-कभी जमीनी हमलों का सहारा भी लेता है, जिसमें वे इस्राइली सैनिकों के ठिकानों पर हमला करते हैं खासकर दक्षिणी लेबनान में। संगठन ने कुछ मामलों में आत्मघाती हमलों का भी सहारा लिया है जहां सदस्य खुद को विस्फोटकों के साथ लक्षित स्थान पर ले जाकर हमला करते हैं। हिज्बुल्लाह अपने हथियारों और सैनिकों को सुरक्षित ठिकानों और सुरंगों में छुपाता है, जिससे उन्हें दुश्मन के हमलों से बचने में मदद मिलती। हिज्बुल्लाह ने दक्षिण लेबनान के इलाकों में सुरंगों का व्यापक जाल बिछा रखा है। इन क्षेत्रों में इस्राइल की सेना को जमीनी हमला करने पर भारी नुकसान होता है।

हमलों की योजना बनाने और हमलों को प्रभावी बनाने के लिए विस्तृत इंटेलिजेंस का उपयोग किया जाता है, जिसमें स्थानीय नेटवर्क और सामुदायिक सहायता शामिल होती है। ईरान हिज्बुल्लाह को समर्थन देता है, और यदि वह लेबनान में सक्रिय रूप से शामिल होता है तो यह इस्राइल के साथ संघर्ष को और भड़का सकता है। ईरान का सीधे तौर पर शामिल होना सऊदी अरब और अन्य खाड़ी देशों के साथ क्षेत्रीय तनाव को बढ़ा सकता है। ईरान का सैन्य हस्तक्षेप संघर्ष को दीर्घकालिक बना सकता है जिससे शांति स्थापित करना और भी कठिन हो जाता है। लेबनान में युद्ध बढ़ने से क्षेत्रीय और वैश्विक स्थिरता को खतरा हो सकता है। इसे हर हाल में रोका जाना चाहिए।

(लेखक के निजी विचार हैं)

लेबनान की भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधता इसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र बनाती है लेकिन ईरान की आर्थिक-सैन्य सहायता से शिया समूह हिज्बुल्लाह देश की राजनीति और समाज पर हावी है तथा यह इस देश की समस्या का मुख्य कारण माना जाता है। उत्तरी इस्राइल की सीमा लेबनान के साथ मिलती है, जहां हिज्बुल्लाह की गतिविधियों के कारण सुरक्षा संबंधी चिंताएं बनी रहती हैं। लेबनान की सीमा से लगे इस्राइल के इलाकों को हिज्बुल्लाह निशाना बनाता रहता है। हिज्बुल्लाह की गतिविधियों को खत्म करने को इस्राइल ने युद्ध का सहारा लिया है, जिससे बड़े युद्ध का खतरा बढ़ गया है

भारतीय महिलाएं
रोज दो घंटे बीता रहीं सामाजिक-धार्मिक कार्यों में

- भारत में महिलाएं किस काम में अपने दिन का अधिकतर समय बिताती हैं। एक अध्ययन के मुताबिक महिलाएं 2.33 घंटे रोजमर्रा के कामों और परिवार की देखभाल करने में बिताती हैं
- हर दिन औसतन 5.90 घंटे रोजगार से जुड़े कामों और 2 घंटे सामाजिक-धार्मिक कार्यों में बिताती हैं
- ये तथ्य आईआईएम, अहमदाबाद के जेंडर सेंटर द्वारा देश का पहला वूमन एम्पावरमेंट इंडेक्स तैयार करने के क्रम किए गए अध्ययन से पता चले हैं

(स्रोत : मीडिया इनपुट्स)

अमेरिका यूक्रेन युद्ध में गहराई से जुड़ा है, लेकिन न्यूयॉर्क टाइम्स के मुताबिक, अमेरिकी खुफिया एजेंसियों ने चेताया है कि कीव के पश्चिमी मिसाइलों से रूस पर हमले जारी रखे तो जवाब में मास्को अमेरिका पर घातक हमला कर सकता है

ब्रह्म चेलानी, सामरिक चिंतक
@Chellaney

गुमनामी से अंतरराष्ट्रीय शिखर तक

खो-खो | सुधांशु मित्तल

पीछा करने के सदियों पुराने रोमांचक खेल 'खो-खो' की जड़ें भारतीय पौराणिक कथाओं में हैं, और यह खेल प्राचीन काल से प्राकृतिक घास या मैदान में नियमित रूप से पूरे भारत में खेला जाता है। 'खो' मराठी शब्द है, जिसका अर्थ है, जाओ और पीछा करो। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों द्वारा खेले जाने वाला 'खो खो' प्राचीन भारत का पारंपरिक खेल माना जाता है, और यह ग्रामीण क्षेत्रों में कबड्डी के बाद दूसरा रोमांचक टैग गेम है। 'खो खो' की उत्पत्ति भारत में मानी जाती है। इतिहास में इसका वर्णन मौर्य शासनकाल (चौथी ईसा पूर्व) में मिलता है। इस खेल का वर्णन महाभारत काल में भी किया गया है।

विशेषज्ञों का मानना है कि महाभारत काल में 'खो खो' रथ पर खेला जाता था जहां प्रतिद्वंद्वी रथ पर सवार होकर एक-दूसरे का पीछा करते थे, जिसे 'रथेरा' कहा जाता था। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि महाभारत युद्ध के 13वें दिन गुरु द्रोणाचार्य द्वारा बनाए गए चक्रव्यूह में प्रवेश करने के लिए अभिमन्यु ने 'खो-खो' में इस्तेमाल की जाने वाली रणनीति का उपयोग किया था और 'खो-खो' के कौशल का उपयोग करके कौरव वंश को भारी नुकसान पहुंचाया था। लोकमान्य तिलक द्वारा गठित डेक्कन जिमखाना पुणे ने पहली बार इस खेल के विधिवत नियम तय किए। 1923-24 में इंटर स्कूल स्पोर्ट्स कंपटीशन की स्थापना की गई जिसके माध्यम से ग्रामीण स्तर पर 'खो-खो' को लोकप्रिय करने के लिए कदम उठाए गए। 1928 में भारत की पारंपरिक खेलों को प्रोत्साहित करने के लिए गठित 'अखिल भारतीय शारीरिक शिक्षण मंडल' का गठन हुआ और 1935 में इस खेल के नियमों को पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया। आधुनिक काल में 'खो-खो' खेल को महाराष्ट्र के अमरावती के हनुमान व्यायाम प्रसारक मंडल के तत्वावधान में सबसे पहले 1936 के बर्लिन ओलंपिक्स में प्रदर्शित किया गया था तथा इस खेल को अडोल्फ हिटलर ने जमकर सराहा।

1938 में अखिल महाराष्ट्र शारीरिक शिक्षण मंडल ने

'खो-खो' खेल की दूसरी नियम पुस्तिका प्रकाशित की। इसी वर्ष अकोला में इंटर जोनल स्पोर्ट्स का आयोजन किया गया। आज 'खो-खो' भारत के सभी राज्यों में खेली जाती है तथा राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर 'खो-खो' की अनेक प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती हैं। आजादी के बाद भारतीय खेलों को प्रोत्साहन देने के अंतर्गत 1955-56 में 'अखिल भारतीय खो-खो मंडल' की स्थापना की गई। पुरुषों की पहली राष्ट्रीय खो-खो चैंपियनशिप का आयोजन 25 दिसम्बर, 1959 से 01 जनवरी, 1960 को आयोजित किया गया जबकि महिलाओं की पहली राष्ट्रीय खो-खो चैंपियनशिप महाराष्ट्र के कोल्हापुर में 13 से 16 अप्रैल, 1961 को आयोजित की गई। वर्ष 1964 में इंदौर, मध्य प्रदेश में आयोजित 5वीं नेशनल खो-खो चैंपियनशिप में व्यक्तिगत पुरस्कार शुरू किए गए। 1966 में 'खो-खो फेडरेशन ऑफ इंडिया' की स्थापना की गई तथा 1970 में किशोर लड़कों की पहली नेशनल खो-खो चैंपियनशिप का आयोजन किया गया जबकि 1974 में किशोर लड़कियों की पहली नेशनल खो-खो चैंपियनशिप का आयोजन किया गया। 1982 में दिल्ली में आयोजित 9वीं एशियाई खेलों में खो-खो का डेमोंस्ट्रेशन मैच आयोजित किया गया। 1987 में कोलकाता में आयोजित तीसरी साउथ एशियाई खेलों में खो-खो खेल को प्रदर्शित किया गया। अंतरराष्ट्रीय खेलों में पहली बार 1996 में 'खो-खो' की पहली एशियाई खो-खो चैंपियनशिप आयोजित की गई जिससे 'खो-खो' को अंतरराष्ट्रीय खेल के रूप में लोकप्रियता मिली जिससे आज यह खेल 36 से अधिक देशों में खेला जाता है।

1998 में पहला नेता जी सुभाष गोल्ड कप इंटरनेशनल खो-खो टूर्नामेंट का आयोजन किया गया। 'खो-खो' को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रोत्साहित करने के लिए जुलाई, 2018 में 'इंटरनेशनल खो-खो फेडरेशन' का गठन किया गया जिसका हेडक्वार्टर लंदन में है। लंदन में पहली इंटरनेशनल खो-खो चैंपियनशिप 2018 में आयोजित की गई। आज 'खो-खो' भारत और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यापक रूप से खेला जाने वाला खेल है। यह विभिन्न अंतरराष्ट्रीय खेल आयोजनों का हिस्सा है, जिसमें लगभग 20 देशों की राष्ट्रीय खो-खो टीमें हैं। ऐसे गौरवशाली इतिहास के साथ खो-खो की लोकप्रियता आने वाले वर्षों में भी बढ़ती रहेगी।

(लेखक इंटरनेशनल खो-खो फेडरेशन के अध्यक्ष हैं)

अज्ञानता | संत राजिन्दर

हम अपना जीवन जीते हुए बाहर की दुनिया में खुशी पाने की कोशिश करते हैं जिसके लिए अपना अधिकतर समय धन-संपत्ति एकत्र करने, मान-सम्मान पाने और शरीर स्वस्थ रखने आदि में लगा देते हैं, लेकिन यह सब करने के बावजूद हम अंदर से खुश नहीं हो पाते। संत-महापुरुष हमें समझाते हैं कि सच्ची खुशी कहीं बाहर नहीं, बल्कि हमारे अंतर में है। यह सच्ची खुशी हमारी आत्मा मन, शरीर और संसार की मन-माया की परतों से ढकी हुई है, इस बात से हम अनजान हैं। इस अज्ञानता को दूर करने के लिए हम संतों-महात्माओं की शिक्षाओं का आश्रय ले सकते हैं, जोकि धर्म-पुस्तकों में लिखित हैं। वे हमें समझाते हैं कि प्रभु, जो सत, चेतनता और आनंद के महासागर हैं, ने यह सृष्टि बनाई है। शुरू-शुरू में वह अकेले थे, फिर उन्होंने एक से अनेक होने का संकल्प लिया एवं अपने अंशों को अपने से अलग किया, जिन्हें हम आत्माएं कहते हैं, और उन्हें इस भौतिक सृष्टि में रहने के लिए भेज दिया। जब आत्मा इस संसार में आती है तो यहां कार्य-व्यवहार के लिए इसे एक भौतिक शरीर और मन दिया जाता है। होना तो यह चाहिए था कि हमारी आत्मा के बस में शरीर और मन होता लेकिन दुर्भाग्यवश उल्टा हो गया। आत्मा, शरीर और मन के साथ लिप्त होकर इसी का रूप बन बैठी है और अपने आपको भूल गई। हमारा मन बहुत शक्तिशाली है, और हर समय मौज-मस्ती में रहना चाहता है। यह जल्द ही बाहरी चमक-दमक में फंस जाता है। यह हर सुंदर दृश्य, मधुर आवाज, अच्छी खुशबू, लजीज जायके एवं मनमोहक स्पर्श की ओर खिंचा चला जाता है। हमारी सभी इंद्रियां मन को बाहर की ओर खींचती रहती हैं क्योंकि इस शरीर में आत्मा और मन साथ-साथ रहते हैं। इसलिए आत्मा भी बेबस होकर इंद्रियों के भोगों-रसों में खिंची चली जाती है। समय के साथ हमारी आत्मा इस संसार के खेल में खो गई है, और अपने असली रूप को भूल गई है। आत्मा सत्य, चेतनता और आनंद से परिपूर्ण अपनी असलियत की ओर ध्यान देने की बजाय बाहरी संसार में लिप्त हो गई है। दुनिया में आए सभी पूर्ण संत-महात्माओं ने शांति एवं सुख को स्वयं प्राप्त किया और जिज्ञासुओं को भी बांटा। वे हमारे दुःखों को दूर कर देते हैं। हमें अज्ञानता से मुक्त कर देते हैं।

रीडर्स मेल

हैकिंग की घटनाओं की बाढ़

बीते कुछ दिनों से देश में लगातार सोशल मीडिया अकाउंट में हैकिंग की घटना सामने आ रही हैं, जिनमें यूट्यूब अकाउंट की हैकिंग प्रमुख है जो जनमानस का ध्यान खींचती है। किसी मीडिया संस्था यूट्यूब चैनल की बात हो, बात सुप्रीम कोर्ट के यूट्यूब चैनल की हो या किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति का यूट्यूब चैनल, तमाम बड़े चैनलों को हैक करके क्रिप्टो करेंसी का प्रचार किया जा रहा है, जिसके कारण लोगों को आर्थिक हानि हो रही है। इसी कारण अब अपने सोशल मिडिया अकाउंट को 'टू स्टेप वेरिफिकेशन' करते हुए मजबूत पासवर्ड रखना हमारी जिम्मेदारी बन गई है, जिससे हमारा अकाउंट सुरक्षित रहे और हमें फॉलो करने वाले जनमानस को भी किसी प्रकार की आर्थिक हानि का सामना न करना पड़े। यह कोई किसी एक देश की चिंता नहीं है, बल्कि समूची दुनिया में इस प्रकोप फैल चुका है।

सूरज कुमार, ई मेल से

छात्र दीवारों को न करें गंदा

दिल्ली यूनिवर्सिटी में प्रत्येक वर्ष छात्र चुनाव आयोजित किए जाते हैं। चुनावों में प्रचार के दौरान हर साल चुनाव लड़ रहे छात्रों द्वारा अनगिनत संख्या में पोस्टर, होर्डिंग और पंपलेट लगाए और बंटवाए जाते हैं। इस कार्य की वजह से सार्वजनिक संपत्तियों पर पोस्टर चिपकाए जाते हैं। दीवारों पर पेंट करके शहर की सुंदरता को खराब किया जाता है। छात्रों द्वारा किए जा रहे ऐसे कार्यों से देश-विदेश में गलत संदेश जाता है। बहरहाल, इस मामले को माननीय हाई कोर्ट ने संज्ञान में ले लिया है और तब तक दिल्ली यूनिवर्सिटी के छात्र चुनाव के रिजल्ट पर रोक लगा दी है जब तक कि चुनाव लड़ने वाले छात्र नेताओं द्वारा प्रचार के दौरान सार्वजनिक संपत्ति को पहुंचाए गए नुकसान की पूरी भरपाई नहीं हो जाती। इस मुद्दे पर लिंग्दोह कमिटी की सिफारिशें और अदालतों के विस्तृत आदेश पहले से हैं परंतु उन पर अमल नहीं होता। इस बात पर सभी छात्रों, देश के नागरिकों और प्रशासन को गंभीरता से विचार करना चाहिए। अगर प्रचार और अन्य किसी तरह से देश की सार्वजनिक संपत्तियों को गंदा करने का सिलसिला ऐसे ही चलता रहेगा तो स्वच्छ भारत का सपना कैसे पूरा होगा? जब तक समस्त देशवासी सफाई को अपनी आदतों में शुमार नहीं करेंगे तब तक भारत को साफ रखना बेहद मुश्किल ही रहेगा। भारत के प्रत्येक नागरिक को स्वच्छता को अपना कर्त्तव्य समझते हुए इसमें सहयोग करना चाहिए।

हितेंद्र डेढ़ा, दिल्ली

फर्जी एनकाउंटर चिंता का विषय

देश में बढ़ रहे फर्जी एनकाउंटर एक चिंता का विषय है, मुंबई उच्च न्यायालय का 'बदलापुर' एनकाउंटर को 'फर्जी' कहना कहीं न कहीं देश की आम जनता का नया न्याय प्रणाली से विश्वास धूमिल करता है। हमें समझना चाहिए कि देश मई जल्द न्याय की जरूरत है किंतु फर्जी न्याय की नहीं। जिस तरह प्रियंका रेड्डी के दोषियों का 'फर्जी' ढंग से एनकाउंटर हुआ उससे जमीनी तौर पर कोई बदलाव नहीं आया, बल्कि महिलाओं के प्रति अपराध और बढ़े हैं। हमें मजबूत पारदर्शी न्याय प्रणाली की जरूरत है जिससे नागरिक का भरोसा 'न्याय' में बना रहे। कानून का जमाल बनाए रखने के लिए भी यह जरूरी है।

आदित्या, भारतीय जन संचार संस्थान, जम्मू

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा
• राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
वर्ष-34, अंक 45
सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया काजरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3,4, सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 705-706, सातवां तल, नवांग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित। । समूह संपादक - डॉ. विजय राय। स्थानीय संपादक - स्नेहा मिश्रा* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 23352368, 23352369, 23352371, 23352372, फैक्स - 23352370, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750
आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' पर रामनाथ कोविंद पैनल की सिफारिशों को जो मंजूरी दी है, उसका मकसद लोक सभा के साथ सभी राज्यों के विधानसभा और स्थानीय निकायों का चुनाव कराना है। लेकिन यह इतना आसान भी नहीं है। इसे लागू करने के लिए सरकार को एक नहीं, बल्कि दो-दो संविधान संशोधन विधेयकों को पास कराना होगा जिनके तहत संविधान में कई बदलाव करने पड़ेंगे। खैर, कोविंद कमेटी की रिपोर्ट को कैबिनेट से मंजूरी मिलने के बाद अब आगे क्या? 'वन नेशन, वन इलेक्शन' को लागू करने के लिए सरकार का आखिर, प्लान क्या है? कैसे लागू होगा? आइए, बात समझते हैं:

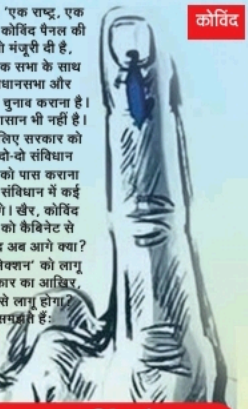

आसान नहीं होगा 'वन नेशन वन इलेक्शन' का कार्यान्वयन

कोविंद पैनल की सिफारिशों को आगे बढ़ाने के लिए एक क्रियान्वयन समूह का गठन किया जाएगा। केंद्रीय मंत्री अश्विनी वैष्णव ने कैबिनेट मीटिंग के बाद बताया कि यह समूह रिपोर्ट में दी गई सिफारिशों को लागू करेगा। रिपोर्ट में कहा गया है कि एक साथ चुनाव दो चरणों में लागू किए जाएंगे: पहला लोक सभा और विधानसभा चुनाव के लिए; और दूसरा, आम चुनावों के 100 दिनों के भीतर स्थानीय निकाय चुनावों के लिए

कैसे लागू करने का है प्लान

सबसे पहले लोक सभा और विधानसभा चुनाव एक साथ होंगे। इसके बाद दूसरे चरण में पंचायतों और नगर पालिकाओं के स्थानीय निकाय चुनाव आम चुनाव के 100 दिनों के भीतर कराए जाएंगे। सभी चुनावों के लिए एक ही मतदाता सूची होगी। भारत निर्वाचन आयोग राज्य चुनाव अधिकारियों की सलाह से मतदाता पहचान पत्र तैयार करेगा। केंद्र पूरे देश में इस बारे में विस्तृत चर्चा शुरू करेगा। वैष्णव ने कहा कि बड़ी संख्या में पार्टियों ने 'वन नेशन, वन इलेक्शन' का समर्थन किया है, और केंद्र अगले कुछ महीनों में इस पर आम सहमति बनाने की कोशिश करेगा

सिफारिशों में क्या-क्या?

कोविंद पैनल के मुताबिक जब संसद का सत्र होगा, तो इस कदम को अधिसूचित करने के लिए एक तारीख तय की जानी चाहिए। उस नियत तिथि के बाद होने वाले राज्य चुनावों से बनने वाली सभी विधानसभाएं केवल 2029 में होने वाले लोक सभा चुनाव तक की अवधि के लिए ही होंगी। इसका मतलब है कि बदलाव के लिए लोक सभा चुनाव के बाद एक तारीख तय की जाएगी। उस तारीख के बाद जिन राज्यों में चुनाव होंगे, उनका कार्यकाल आम चुनावों के साथ तालमेल बिठाने के लिए कम कर दिया जाएगा इसका मतलब है कि 2024 और 2028 के बीच बनने वाली राज्य सरकारों का कार्यकाल 2029 के लोक सभा चुनावों तक ही होगा। उसके बाद लोक सभा और विधानसभा के चुनाव अपने आप एक साथ होंगे

विपक्ष तो नहीं बनेगा अड़चन?

मिसाल के तौर पर, एक राज्य जहां 2025 में चुनाव होना है, उसके पास चार साल के कार्यकाल वाली सरकार होगी जबकि 2027 में चुनाव कराने वाले राज्य में 2029 तक केवल दो साल के लिए सरकार होगी। जैसे बिहार में अगले साल विधानसभा चुनाव हैं, तो वन नेशन वन इलेक्शन लागू करने के लिए उसकी विधानसभा का कार्यकाल 2029 तक रहेगा यानी सिर्फ साल का। इसी तरह 2027 में यूपी विधानसभा के चुनाव होने हैं, तो उसके बाद बनने वाली सरकार सिर्फ 2 साल रहेगी। ऐसे ही अन्य राज्यों के मामले में भी होगा। फिर 2029 में लोक सभा के साथ-साथ सभी राज्यों के विधानसभा का चुनाव भी मुमकिन हो सकेगा

रिपोर्ट में यह भी सिफारिश की गई है कि अगर हंग असेंबली या हंग पार्लियामेंट की स्थिति हो, अविश्वास प्रस्ताव या ऐसी ही किसी अन्य स्थिति में नया सदन बनाने के लिए नए सिरे से चुनाव कराए जा सकते हैं- चाहे वह लोक सभा हो या राज्य विधानसभाएं

इस तरह बनी नई सरकार का कार्यकाल भी लोक सभा के पिछले पूर्ण कार्यकाल की शेष अवधि के लिए ही होगा और इस अवधि की समाप्ति सदन के विघटन के रूप में काम करेगी। इसे अभी जो उपचुनाव की प्रक्रिया होती है, उससे और बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। किसी लोक सभा, विधानसभा या राज्य सभा की सीट के रिक्त हो जाने की स्थिति में उपचुनाव कराए जाते हैं। लेकिन उपचुनाव में जीतकर आए जनप्रतिनिधि का कार्यकाल लोक सभा या विधानसभा के बाकी बचे

कार्यकाल जितना ही होता है। राज्य सभा की स्थिति में भी 6 साल का कार्यकाल पूरा होने में जितना समय बचा होता है, उतने समय के लिए ही उपचुनाव से जीते सांसद का कार्यकाल रहता है

बिल्कुल इसी तरह त्रिशंकु संसद या त्रिशंकु विधानसभा की स्थिति में चुनाव तो होंगे लेकिन जो सरकार बनेगी, वह अगले आम चुनाव तक ही रहेगी यानी अगर 2 साल बाद ही मध्यावधि चुनाव की नौबत आ जाए तो अगली सरकार का अधिकतम कार्यकाल सिर्फ 3 साल होगा, न कि 5 साल। वैष्णव ने आगे कहा कि पैनल ने एक साथ चुनाव के लिए व्यापक समर्थन पाया, जिसके बाद कैबिनेट ने प्रस्ताव को सर्वसम्मति से मंजूरी दे दी। उन्होंने कहा कि 80 प्रतिशत से अधिक उत्तरदाताओं ने इसका समर्थन किया है, और विपक्षी दलों को समर्थन देने के लिए अंदर से दबाव का सामना करना पड़ सकता है

आगे क्या?

कोविंद पैनल की सिफारिशों को माने तो 'वन नेशन, वन इलेक्शन' के लिए कम से कम 18 संवैधानिक संशोधनों की जरूरत होगी। इनमें से ज्यादातर संविधान संशोधनों के लिए राज्य विधानसभाओं के समर्थन की जरूरत नहीं होगी। लेकिन, इसके लिए कुछ संविधान संशोधन विधेयकों की आवश्यकता होगी जिन्हें संसद द्वारा पारित करना होगा

ओएनओपी के दो अलग-अलग चरणों के लिए, दो संवैधानिक संशोधन विधेयक पास करने होंगे। इनके तहत नए प्रावधानों को शामिल करने और अन्य में संशोधन सहित कुल 15 संशोधन किए जाएंगे

पहला संविधान संशोधन विधेयक

कोविंद पैनल की सिफारिश के अनुसार, पहला विधेयक संविधान में एक नया अनुच्छेद-82ए डालेगा। अनुच्छेद 82ए उस प्रक्रिया को स्थापित करेगा जिसके जरिए देश एक साथ चुनाव की ओर बढ़ेगा

दूसरा संविधान संशोधन विधेयक

दूसरा विधेयक संविधान में अनुच्छेद 324ए पेश करेगा। यह केंद्र सरकार को लोक सभा और विधानसभा चुनावों के साथ नगर पालिकाओं और पंचायतों के समानांतर चुनाव सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने का अधिकार देगा

क्या राज्यों की विधानसभा से भी मंजूरी की जरूरत होगी?

दो संविधान संशोधन विधेयकों को पारित करने के बाद संसद अनुच्छेद 368 के तहत संशोधन प्रक्रियाओं का पालन करेगी। चूंकि संसद को ही लोक सभा और विधानसभा से संबंधित चुनाव कानूनों को बनाने का अधिकार है, इसलिए पहले संशोधन विधेयक को राज्यों से समर्थन की जरूरत नहीं होगी। लेकिन, स्थानीय निकायों में चुनाव से जुड़े मामले राज्य के अधीन हैं, और इसके लिए दूसरे संशोधन विधेयक को देश के कम से कम आधे राज्यों द्वारा अनुमोदित किया जाना जरूरी होगा

राष्ट्रपति की सहमति और कार्यान्वयन

दूसरे संविधान संशोधन विधेयक को राज्यों से मंजूरी के बाद, और दोनों सदनों में निर्धारित बहुमत से पारित होने के बाद, विधेयक राष्ट्रपति की सहमति के लिए जाएंगे। एक बार जब वह विधेयकों पर हस्ताक्षर कर देती हैं, तो वे कानून बन जाएंगे। इसके बाद, कार्यान्वयन समूह इन अधिनियमों के प्रावधानों के आधार पर इन बदलावों को अंजाम देगा। एकल मतदाता सूची और मतदाता पहचान पत्र के संबंध में प्रस्तावित कुछ बदलावों के लिए कम से कम आधे राज्यों से मंजूरी की जरूरत होगी। संविधान के अनुच्छेद 325 में एक नया उप-खंड सुझाएगा कि एक निर्वाचन क्षेत्र में सभी मतदान के लिए एक ही मतदाता सूची होनी चाहिए ■

विकसित देशों में भी एक साथ चुनाव

■ डॉ. ब्रह्मदीप अलूने

वैदेशिक मामलों के जानकार

चुनावी खर्च को नियंत्रित करने के लिए कई देशों में नियम-कानून होते हैं, जिससे चुनावी प्रक्रिया निष्पक्ष और पारदर्शी बनी रहे। 'एक देश एक चुनाव' की प्रक्रिया को समय, लागत, राजनीतिक स्थिरता, भागीदारी और प्रभावी प्रबंधन की दृष्टि से बेहतर माना जाता है। हालांकि इसे लागू करना आसान नहीं है, और विकसित देश भी इस व्यवस्था की निरंतरता को बनाए रखने में सफल नहीं हो सके हैं।

ब्रिटेन : दुनिया के सबसे उदार लोकतंत्र ब्रिटेन में आम चुनावों की शुरुआत 17वीं सदी में ही हो गई थी। समय के साथ यहां आम चुनाव की प्रक्रिया में कई परिवर्तन और सुधार हुए जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया को मजबूत करने के लिए महत्वपूर्ण थे। ब्रिटेन में स्थानीय और राष्ट्रीय चुनाव एक साथ कराने की कोशिशें अक्सर होती रहती हैं। ब्रिटेन में सामान्य, स्थानीय चुनाव, प्रांतीय चुनाव, महानगर चुनाव, पार्लियामेंटरी विशेष चुनाव और पार्टी चुनाव का आयोजन किया जाता है। सामान्य चुनाव हाउस ऑफ कॉमन्स के लिए होते हैं, जो आम तौर पर हर पांच साल में होते हैं, लेकिन समय से पहले भी बुलाए जा सकते हैं।

एक साथ चुनाव कराने के खास तरीके

ब्रिटेन में केंद्रीय और प्रांतीय चुनावों को एक साथ आयोजित करने की प्रक्रिया कुछ खास तरीके से काम करती है। इसमें केंद्रीय और प्रांतीय चुनाव एक ही दिन में आयोजित किए जाने के उदाहरण भी हैं। 2015 में आम चुनाव के साथ-साथ स्कॉटिश संसदीय चुनाव भी हुए थे। ऐसा करने का उद्देश्य मतदाता को सुविधा प्रदान करना और चुनावी प्रक्रिया को सरल बनाना होता है।

कनाडा : कनाडा संघीय देश है जिसमें संघीय और प्रांतीय सरकारों के बीच सत्ता का वितरण होता है। प्रत्येक प्रांत और क्षेत्र की अपनी सरकार और विधानसभा होती है। स्थानीय निकायों और नगर परिषदों के चुनाव भी होते हैं, जो नागरिकों की सेवा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कनाडा में संघीय चुनाव हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों के लिए होते हैं। ये आम तौर पर हर चार साल में होते हैं, लेकिन समय से पहले भी बुलाए जा सकते हैं। प्रांतीय चुनाव प्रत्येक प्रांत और क्षेत्र के लिए विधानसभा के चुनाव हैं। ये चुनाव आम तौर पर चार साल में होते हैं, लेकिन प्रांतों में अलग-अलग समय पर आयोजित किए जा सकते हैं। स्थानीय चुनाव नगर परिषदों और स्थानीय निकायों के लिए होते हैं। चुनावों की अवधि आम तौर पर चार साल होती है, लेकिन विभिन्न शहरों में समय भिन्न हो सकता है। विशेष चुनाव जब किसी सांसद या विधायक का निधन या इस्तीफा होता है, तो उनके स्थान पर विशेष चुनाव आयोजित होते है। महापौर के चुनाव और राजनीतिक दलों के आंतरिक चुनाव भी आयोजित किए जाते हैं। इन चुनावों के माध्यम से कनाडा में विभिन्न स्तरों पर लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाता है।

हालांकि कनाडा में एक साथ चुनाव आयोजित करने में कुछ चुनौतियां और कारण हैं, जो इन्हें मुश्किल बना देते हैं। कनाडा का संविधान संघीय, प्रांतीय और स्थानीय चुनावों के लिए अलग-अलग प्रावधान करता है। प्रत्येक स्तर की अपनी चुनावी प्रक्रिया और नियम होते हैं। संघीय और प्रांतीय चुनावों की अवधि अलग- अलग होती है। संघीय चुनाव आम तौर पर हर चार साल में होते हैं, जबकि प्रांतीय चुनावों की समय-सीमा भिन्न होती है। इससे एक साथ चुनाव आयोजित करना मुश्किल हो जाता है। कनाडा में मौसम से जुड़ी कई चुनौतियां हैं, जो विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार की समस्याएं उत्पन्न कर सकती हैं। उत्तर और मध्य कनाडा में अत्यधिक ठंड और भारी बर्फबारी आम हैं, जो परिवहन, बिजली की आपूर्ति और दैनिक जीवन को प्रभावित कर सकती हैं। भारी बर्फबारी से सड़क और हवाई परिवहन में व्यवधान आ सकता है, जिससे आपातकालीन सेवाओं और आपूर्ति शृंखलाओं पर प्रभाव पड़ता है।

> विकसित देशों में नागरिक अपने अधिकारों, कर्त्तव्यों और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के प्रति जागरूक और सक्रिय होते हैं। कुछ विकसित देशों, जैसे कनाडा में विभिन्न चुनाव एक साथ आयोजित करने के प्रयास किए गए हैं, लेकिन यह हमेशा संभव नहीं होता। ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया में कभी-कभी स्थानीय और राष्ट्रीय चुनाव एक साथ होते हैं। संसाधन की दृष्टि से विकसित देशों में एक साथ सभी प्रकार के चुनाव आयोजित करने की संभावना होती तो है, लेकिन यह कई कारकों पर निर्भर करता है

असली शक्ति संसद के हाथ में

जापान : जापान पूर्वी एशिया में स्थित द्वीपीय देश है। यह होंशू, होक्काइडो, क्यूशू और शिकोकू जैसे चार प्रमुख द्वीपों के अलावा कई छोटे द्वीपों से मिल कर बना है। जापान भूकंप और सुनामी के लिए जाना जाता है, जो इसके भूगर्भीय स्थिति के कारण होते हैं। जापान संवैधानिक राजतंत्र है, जहां सम्राट प्रमुखता का प्रतीक होता है, लेकिन वास्तविक शक्ति संसद और प्रधानमंत्री के हाथ में होती है। जापान का लोकतंत्र विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पहलुओं के साथ विकसित हुआ है, और यह एक स्थिर और सक्रिय लोकतांत्रिक प्रणाली को दर्शाता है। जापान में विभिन्न प्रकार के चुनाव होते हैं। यहां राष्ट्रीय चुनाव आम तौर पर चार साल में एक बार होते हैं, लेकिन समय से पहले भी बुलाए जा सकते हैं। प्रतिनिधि परिषद के चुनाव हर तीन साल में आधे सदस्यों के लिए होते हैं, जिससे पूरा चुनावी चक्र हर छह साल में पूरा होता है। स्थानीय चुनाव प्रांतीय और नगर पालिका स्तर पर होते हैं। प्रत्येक प्रांत और शहर में अपने स्थानीय परिषदों और मेयरों के चुनाव होते हैं, जो आम तौर पर चार साल में एक बार आयोजित होते हैं। जब किसी सांसद का निधन या इस्तीफा होता है, तो उनके निर्वाचन क्षेत्र के लिए विशेष चुनाव आयोजित होते हैं। जापान में भी अन्य लोकतांत्रिक देशों की तरह ही राजनीतिक दलों के आंतरिक चुनाव होते हैं। इन चुनावों के माध्यम से जापान में विभिन्न स्तरों पर लोकतांत्रिक प्रक्रिया और प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाता है। जापान का मौसम बहुत विविध और क्षेत्रीय है तथा जापान का संविधान और चुनावी कानून विभिन्न स्तरों के चुनावों के लिए अलग-अलग प्रावधान करते हैं, जो एक साथ चुनाव आयोजित करने में बाधा डालते हैं। विकसित देशों में नागरिक अपने अधिकारों, कर्त्तव्यों और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के प्रति जागरूक और सक्रिय होते हैं। कुछ विकसित देशों, जैसे कनाडा में विभिन्न चुनावों को एक साथ आयोजित करने के प्रयास किए गए हैं, लेकिन यह हमेशा संभव नहीं होता। ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया में कभी-कभी स्थानीय और राष्ट्रीय चुनाव एक साथ होते हैं। संसाधन की दृष्टि से विकसित देशों में एक साथ सभी प्रकार के चुनाव आयोजित करने की संभावना होती तो है, लेकिन यह कई कारकों पर निर्भर करता है तथा जटिलता से भरा होता है। मौसम, विभिन्न प्राकृतिक बदलाव और भौगोलिक परिस्थितियों के बीच प्रशासनिक और प्रबंधन की दृष्टि से इसे चुनौतीपूर्ण ही माना जाता है। इसीलिए इतिहास में ऐसे कम ही अवसर आए हैं, जब विकसित देशों में एक साथ चुनाव सफलतापूर्वक आयोजित किए जा सके हैं। ■

पंचायतों के बिना अधूरा 'एक देश एक चुनाव' का नारा

■ अरविंद कुमार सिंह

वरिष्ठ पत्रकार एवं संसदीय मामलों के जानकार

रामनाथ कोविंद समिति की 'एक देश, एक चुनाव' की बाबत दी गई सिफारिशों पर चुनावी माहौल में चर्चा जोरों पर चल रही है। गौर करने की बात यह है कि सरकार ने रिपोर्ट को अभी सैद्धांतिक मंजूरी ही दी है। इस पर व्यापक सहमति अभी बनानी है, मुख्य विपक्षी दलों को तैयार करना है, क्योंकि उनके सहयोग के बिना कोई कानून बन नहीं सकेगा। लोक सभा और विधानसभाओं का चुनाव एक साथ कराने की पैरवी तो सत्ता दल के तमाम नेता करते हैं पर इस बात से कतरा जाते हैं कि जब इनके चुनाव हो रहे हैं, तो नगर निकाय और पंचायतों के चुनाव भी इनके साथ क्यों न हों। इससे चार चुनावों की जगह असल में केवल तीन चुनाव ही होंगे। नगरों में लोक सभा, विधानसभा और नगर निकाय के और ग्रामीण अंचलों में अतिरिक्त रूप से केवल पंचायत का चुनाव ही होगा। ऐसा नहीं है कि सबका चुनाव एक साथ हो यह कोई नया विचार है।

दरअसल, राज्य सभा में 3 जुलाई, 2019 को नियम 176 के तहत हुई चुनाव सुधारों पर चर्चा में वरिष्ठ भाजपा सांसद भूपेन्द्र यादव (जो अब केंद्रीय मंत्री और भाजपा संगठन में इतने अहम हैं कि कई चुनावों के प्रभारी रह चुके हैं, और अभी भी हैं) ने कहा था, 'कितना अच्छा होगा कि इसी मशीनरी के माध्यम से विधानसभा, लोक सभा और पंचायतों के चुनाव एक साथ हो जाएं। यह देश की स्थिरता के लिए अच्छा रहेगा। तीनों चुनाव होने से राजनीतिक दलों का काफी खर्च बचेगा।' उच्च सदन की कार्यवाही में उनकी कही बातें दर्ज हैं।

वैधानिक कारणों से टूटा चक्र

जब 1951-52 से लेकर 1967 का हुए एक साथ चुनावों का तर्क दिया जाता है, तो ध्यान रखने की बात है कि तब केवल लोक सभा और विधानसभाओं के चुनाव साथ हुए। फिर चक्र वैधानिक कारणों से टूटा। लेकिन गौर करने की बात है कि 1967 में देश में 25 करोड़ वोटर थे जो 2029 में 100 करोड़ पार होंगे। नेहरू के कालखंड का समाज अलग था, आज चुनावों में बाहुबल और धनशक्ति के बेइंतहा बढ़ते प्रभाव के साथ चुनाव आयोग की निष्पक्षता समेत कई सवाल खड़े हैं। इन कमजोरियां पर सबसे पहले चोट न हुई तो एक साथ चुनाव में एक तबका जनतंत्र को ही हथियाने की कोशिश में लग जाएगा।

पहले आम चुनाव में नया अनुभव था। लिहाजा, प्रक्रिया 10 सितम्बर, 1951 से लेकर 21 फरवरी, 1952 तक चली थी और 68 चरणों में चुनाव हुए। तब 497 लोक सभा और 3278 विधानसभा सीटों के चुनाव एक साथ हो रहे थे। मशीनें भूमिका से बाहर थीं। लिहाजा, कसरत लंबी थी। इन चुनावों के तुरंत बाद राज्य सभा, विधान परिषदों और फिर राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव भी हुए थे। उस दौर की तुलना में आज ग्रामीण भारत भी संचार और सूचना क्रांति का हिस्सा है। साक्षरता बहुत अधिक हो गई है। फिर भी 2019 में 91 करोड़ वोटरों में से 61.30 करोड़ वोटरों ने ही वोट डाला। 2024 में 96.88 करोड़ वोटरों में से 64.2 करोड़ ने वोट डाला, जबकि 7 चरणों में 46 दिनों के बीच चुनाव चले। इसी मशीनरी में सारे चुनाव एक साथ असंभव नहीं हैं। सारे चुनाव साथ होने पर मत प्रतिशत बढ़ सकता है क्योंकि जितने ग्रासरूट स्तर के चुनाव होते हैं, मतदाताओं की उतनी ही अधिक भागीदारी होती है। अभी लोक सभा में 2009 में 58.21% तो 2014 में 66.44% मतदान रहा, 2019 में 67.4% से घट कर 2024 में यह 66.07% रहा।

'एक देश एक चुनाव' के पैरोकार कुछ ऐसा बोध करा रहे हैं, जैसे इसके बिना लोकतंत्र अधूरा है जबकि हकीकत में भारतीय लोकतंत्र की दुनिया में परिपक्वता और स्थिरता के लिए नेहरू के जमाने से ही ख्याति है। संसद के 18 चुनावों में केंद्र में मतदाताओं ने 8 बार सरकारें बदली हैं। इसका श्रेय चुनाव आयोग से अधिक ग्रामीण मतदाताओं को जाता है। अभी सरकार जिस राह पर चल रही है, वह केवल प्रतीकात्मक ही है। वह बताना चाहती है कि 2014 और 2024 के चुनावों में घोषणापत्र में जो वादा किया गया था, वह उसे याद है। लेकिन असली चुनाव सुधारों के प्रति सरकार की बेरुखी है, जबकि सुधारों को लेकर हाल के सालों में संसद और समाज में खासी चर्चा चल रही है।

विपक्ष की सहमति बिना दिक्कत

अब जो बहस चली है, उसके लिए सरकार के पास संसद के भीतर 2014 या 2019 जैसा संख्या बल नहीं है। वह स्थिति नहीं कि संविधान संशोधन विधेयकों को उस तरह पास करा लिया जाए जैसे तीन कृषि कानूनों, श्रम कानूनों, 370 या तीन तलाक को पास करा लिया गया था। कोविंद समिति ने जिन 18 संवैधानिक संशोधनों की सिफारिश की है, उनमें कुछ में 50 प्रतिशत विधानसभाओं की मंजूरी भी जरूरी होगी। संसद के दोनों सदनों में विपक्ष की सहमति के बिना दिक्कत आएगी। संसदीय समिति में भी सहमति में समस्याएं खड़ी होंगी। मौजूदा तस्वीर में जिन दो चुनावों की बात कही जा रही है, उनमें संसद और विधानसभाओं के चुनाव भारत का चुनाव आयोग कराता है, जबकि नगर निकायों और पंचायतों का चुनाव राज्य निर्वाचन आयोग। सभी वोटरों की एक लिस्ट बनानी होगी तो अधिकांश राज्यों की विधानसभाओं से सहमति लेनी होगी। संसद में दो-तिहाई बहुमत की सहमति टेढ़ी खीर होगी।

अभी लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 13 घ के तहत जो संसदीय निर्वाचन क्षेत्र की मतदाता सूची बनती है, उससे विधानसभा चुनाव भी हो जाते हैं। स्थानीय निकायों और पंचायतों के लिए मतदाता सूची बनाते समय राज्य सरकारें चुनाव आयोग के डाटा का उपयोग कर रही हैं पर इन चुनावों में मतदाता सूची बनाने से लेकर अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण संबंधित अधिकार राज्यों के पास हैं। इस तरह चुनाव तो दरकिनार एक राष्ट्र एक मतदाता सूची में भी कम अड़चन नहीं होंगी और इसमें भी संविधान संशोधन की दरकार होगी। वास्तव में जब विधि आयोग ने 2015 में अपनी 255वीं रिपोर्ट में मतदाता सूचियों के एकीकरण की सिफारिश की थी तो सरकार ने गंभीरता से नहीं लिया। उलटे सरकार ने मतदाता सूची को आधार से जोड़ने पर अधिक जोर दिया, जिसे लेकर विवाद हुआ। सुप्रीम कोर्ट तक ने कहा कि आधार डाटा अगर चुनाव में उपयोग में आने लगेगा तो लोकतंत्र कैसे बचेगा। फिर भी 1 अगस्त से 12 दिसम्बर, 2022 के बीच 54.32 करोड़ वोटरों को आधार से जोड़ दिया गया।

इस तरह सारे पक्षों को देखें तो साफ है कि अगर सरकार वास्तव में चाहती है कि चुनावों पर व्यय भार कम हो और वोटरों की भागीदारी बढ़े तो पंचायती राज और नगर निकायों का चुनाव भी एक साथ कराने के लिए ठोस पहल करनी होगी। देश में 2,55,600 गांव पंचायतों, 6697 ब्लॉक पंचायतों, 665 जिला पंचायतें हैं। इनके निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या 30.45 लाख है, जिनमें से करीब 14 लाख महिलाएं हैं। 73वें और 74वें संविधान संशोधन के कारण पंचायतों और शहरी निकायों को संवैधानिक हैसियत मिल चुकी है। ■

सत्ता का असल इरादा जानने को करना होगा इंतजार

■ डॉ. सी. पी. राय

राजनीतिक विचारक एवं वरिष्ठ पत्रकार

मोदी सरकार ने पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में 'एक देश एक चुनाव' की सम्भावना पर विचार करने, उसकी संभावनाएं देखने और उसके लिए सुझाव देने को एक समिति का गठन किया था। समिति के गठन के समय ही कुछ विवाद उठ खड़े हुए। पूर्व राष्ट्रपति का किसी समिति का अध्यक्ष बनना लोगों को उचित नहीं लगा तो समिति के कुछ सदस्यों पर भी लोगों को एतराज था। कांग्रेस के लोक सभा में नेता अधीर रंजन चौधरी ने समिति में रहने से इंकार कर दिया तो राज्य सभा में प्रतिपक्ष के नेता को समिति में नहीं रखने पर भी सवाल उठा। 191 दिन काम करने के बाद समिति ने 18000 पन्नों से ज्यादा की अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू को सौंप दी और फिर केंद्रीय मंत्रिमंडल ने इस रिपोर्ट को स्वीकार करने की घोषणा भी कर दी।

समिति ने लोक सभा और विधानसभाओं के चुनाव 2029 में एक साथ करवाने की सिफारिश की है तथा उसके लिए सुझाव दिया है कि जिन राज्यों में 2029 से पहले चुनाव होना हो उनका कार्यकाल 2029 तक बढ़ा दिया जाए तथा जिन राज्यों में 2029 के बाद चुनाव होना हो उनका कार्यकाल घटा दिया जाए। अपनी ही अनुशंसा में खुद 'एक देश एक चुनाव' की भावना के विपरीत राय भी दी है कि लोक सभा और विधानसभा चुनाव के बाद 100 दिन में स्थानीय निकायों का चुनाव करा लिए जाएं। सवाल यही उठ खड़ा हुआ है कि फिर इसे 'एक देश एक चुनाव' कैसे माना जाए।

चुनाव पर कम खर्च होने का तर्क

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 'एक देश एक चुनाव' की बात करना शुरू किया। इसके पक्ष में तर्क दिया गया कि एक साथ चुनाव कराने पर खर्च कम हो जाएगा और अनुमान लगाया गया कि करीब 4000 करोड़ रुपया बच जाएगा। विरोध करने वालों का कहना है कि एक तो यह पैसा जनता के टैक्स से आता है, और भारत के चुनाव का खर्च दुनिया में सबसे कम है। दूसरे राजनीतिक दल जब 50/60 हजार करोड़ खर्च करते हैं, उसका क्या होगा तथा सरकारें जो तमाम फिजूलखर्ची करती हैं, वो बचाने के प्रयास क्यों नहीं करतीं। एक पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त का कहना है कि सारे चुनाव यदि एक साथ कराए जाएंगे तो चार गुना वोटिंग मशीन तथा वीवी पैट मशीन की जरूरत पड़ेगी जिनको बनाने में भी बहुत समय लगेगा तथा काफी पैसा खर्च होगा। दूसरी तरह के विद्वानों का कहना है कि नेता लोग चुनाव के बाद 5 साल तक तो जनता का हाल पूछते ही नहीं हैं। बार-बार चुनाव होने पर उनको आना पड़ता है, और वादे याद रखने पड़ते हैं तथा चुनाव के चक्कर में कुछ वादे पूरे भी करने पड़ते हैं।

संघीय ढांचा टूटने का अंदेशा

विरोध करने वालों का कहना है कि भारत के संविधान में संघीय ढांचा स्वीकार किया गया है। यदि समिति की रिपोर्ट को स्वीकार किया जाता है तो संघीय ढांचा भी टूटता है तथा संविधान के मूल ढांचे पर भी आक्रमण होता है। यह रिपोर्ट लागू करने के लिए कई संविधान संशोधन करने होंगे जो पहले तो वर्तमान सरकार की लोक सभा और राज्य सभा में संख्या को देखते हुए असंभव है। दूसरा, यदि संविधान के मूल ढांचे में परिवर्तन के लिए देखा जाए तो आधे राज्यों की सहमति भी चाहिए और यदि कोई ऐसा रास्ता निकालने का प्रयास होता है कि राज्यों के बिना केंद्र ही विधानसभाओं के बारे में फैसला कर ले तो वो संविधान के मूल ढांचे पर हमला होगा और फिर वो मुद्दा सर्वोच्च न्यायालय के सामने जरूर जाएगा।

सबसे बड़ा सवाल तो अभी उठ खड़ा हुआ है कि अभी कश्मीर का 10 साल बाद चुनाव करवाया जा रहा है, और वो भी उसे बिना पूर्ण राज्य का दर्जा दिए। आलोचक कह रहे हैं कि किसी केंद्रशासित क्षेत्र को राज्य बनते तो देखा गया है लोकतंत्र के लिए पर किसी राज्य को केंद्रशासित क्षेत्र बनते पहली बार देखा गया है और उसमें भी लद्दाख का लोकतांत्रिक अधिकार छीन लिया गया है। एक बड़ा आरोप यह भी है कि 'एक देश एक चुनाव' सत्ता का केंद्रीकरण करने को है जिसमें जनता राष्ट्रीय स्तर के नेताओं और दलों में ही चुनाव करेगी और क्षेत्रीय दल घाटे में रहेंगे तथा अमेरिका की राष्ट्रपति प्रणाली की तरह हो जाएगा कि राष्ट्रीय स्तर पर जिन दो नेताओं में मुकाबला होगा देश के मतदाता का ध्रुवीकरण उन्हीं दो में हो जाएगा। एक अध्ययन से निष्कर्ष निकला है कि 'एक देश एक चुनाव' में जीतती दिखने वाली पार्टी तथा नेता के ही जीत जाने के 70 प्रतिशत चांस होंगे और ऐसे में तानाशाही आ जाने की संभावना भी बनी रहेगी। जो भी है अब समिति की रिपोर्ट सरकार ने स्वीकार कर ली है। आगे सत्ता अपने दांव आजमाएगी और 'एक देश एक चुनाव' करवाने की कोशिश करेगी और इसका विरोध करने वाले अपने तर्कों के साथ राजनैतिक और संवैधानिक बहस के मैदान में होंगे। इंतजार करना होगा सभी को कि सत्ता का असल इरादा क्या है। शिगूफा या इसमें गंभीरता है, और संवैधानिक सवालों तथा शंकाओं का समाधान वो क्या तथा किस तरह से सामने लाती है। ■

अठन्नी बचाने के लिए संवैधानिक मूल्यों से खिलवाड़

■ विवेक वार्ष्णेय
सुप्रीम कोर्ट संवाददाता

इस साल अप्रैल-मई में हुए चुनाव में ओडिशा में मिली अप्रत्याशित जीत से उत्साहित भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ने 'एक देश एक चुनाव' का नारा बुलंद किया है, लेकिन सभी 28 राज्यों और कुछ केंद्रशासित प्रदेशों के विधानसभा चुनाव अगली लोक सभा के साथ कराने की केंद्र की मंशा व्यावहारिक नहीं दिखाई देती। राज्य विधानसभा का पांच वर्ष का कार्यकाल कुछ महीने के लिए तो घटाया-बढ़ाया जा सकता है, लेकिन निर्वाचित सरकार के सत्ता संभालने के बाद दो-तीन वर्ष बाद ही उसे दोबारा चुनाव में धकेलने का संविधान संशोधन संवैधानिक मूल्यों पर खरा उतरेगा, इस पर संदेह है। क्षेत्रीय दल निश्चित रूप से इसे सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देंगे।

'एक राष्ट्र एक चुनाव' की परिकल्पना भारत जैसे विशाल देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था की मूल भावना के ठीक विपरीत है। यह संवैधानिक मूल्यों से टकराव पैदा करती है। संविधान में साफ कहा गया है-'इंडिया इज यूनियन ऑफ स्टेट्स' यानी भारत राज्यों का संघ है। राज्यों की सार्वभौमिकता को नकारा नहीं जा सकता। कोविंद समिति ने राज्य विधानसभा के पांच वर्ष के कार्यकाल में कटौती की अनुशंसा की है, लोक सभा की नहीं। क्यों न लोक सभा का कार्यकाल घटाकर उसे अन्य राज्यों की विधानसभा के चुनाव के साथ तारतम्य बिठाया जाए? सिर्फ केंद्र सरकार और लोक सभा को ध्यान में रख कर चुनाव का समय तय करने की कवायद संघवाद पर सीधी चोट पहुंचाती है।

कोविंद समिति ने 'एक राष्ट्र एक चुनाव' की सिफारिश करके जितने सवालों का जवाब दिया है, उससे ज्यादा प्रश्नों को खड़ा कर दिया है। पांच साल में एक बार चुनाव होने से लोकतंत्र मजबूत होगा, क्या इस पर राजनीति शास्त्र के विद्वानों से राय ली गई। यह जरूर है कि इस सवाल का सर्वमान्य जवाब नहीं मिलता, लेकिन समिति का काम यही होता है कि देश ही नहीं दुनिया के किसी भी कोने से मिला उस विषय का विशेषज्ञ अपनी राय व्यक्त करना चाहे तो उस पर विचार किया जाए और इस विषय पर हुई स्टडी के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाए।

सरकार ने 'एक देश एक चुनाव' का नारा देते समय अजीब तर्क पेश किया है कि मतदाता बार-बार वोट डालने से ऊब जाता है। कई वर्षों के लंबे चुनाव कवरेज के दौरान मुझे एक भी मतदाता नहीं मिला जो कहे कि बार-बार के मतदान से ऊब गया है। उलटे, मतदाता बार-बार के चुनाव से खुश रहता है। उसे लगता है कि उसके हाथ में भी पावर है। चुनाव के दौरान उम्मीदवार उसके पास आता है तो उससे सवाल-जवाब करता है। हर बार के चुनाव में मतदान का बढ़ता प्रतिशत सबूत है कि लोक सभा, विधानसभा, नगर निगम, नगर पालिका, पंचायत के चुनाव में भाग लेने से मतदाता कतराता नहीं है। हो सकता है कि काम की व्यस्तता, बीमारी, मतदाता सूची में नाम न होने, नौकरी-पेशे के कारण मतदान स्थल से दूर होने की वजह से वह वोट नहीं कर पाता हो, लेकिन मतदान से ऊबता नहीं है। हम पत्रकार दिल्ली के अपने प्रेस क्लब ऑफ इंडिया का उदाहरण दे सकते हैं। यहां पांच साल के अंतराल में नहीं, बल्कि हर वर्ष चुनाव होता है। क्लब के अधिसंख्य सदस्य बहुत उत्साह से इसमें भाग लेते हैं

मतदाता नहीं ऊबता

यदि हम मौजूदा माहौल की बात करें तो मतदाता को पांच साल में दो या तीन बार मतदान स्थल तक जाने में कोई गुरेज नहीं है। सरकार ने 'एक देश एक चुनाव' का नारा देते समय एक बहुत ही अजीब तर्क पेश किया है कि मतदाता बार-बार वोट डालने से ऊब जाता है। कई वर्षों के लंबे चुनाव कवरेज के दौरान मैंने एक भी मतदाता ऐसा नहीं पाया जो यह कहे कि बार-बार के मतदान से वह ऊब गया है। उलटे, मतदाता बार-बार के चुनाव से खुश रहता है। उसे लगता है कि उसके हाथ में भी पावर है। चुनाव के दौरान उम्मीदवार उसके पास आता है तो उससे सवाल-जवाब करता है। हर बार के चुनाव में मतदान का बढ़ता प्रतिशत इस बात का सबूत है कि लोक सभा, विधानसभा, नगर निगम, नगर पालिका, पंचायत के चुनाव में भाग लेने से मतदाता कतराता नहीं है। हो सकता है कि काम की व्यस्तता, बीमारी, मतदाता सूची में नाम न होने, नौकरी-पेशे के कारण मतदान स्थल से दूर होने की वजह से वह वोट नहीं कर पाता हो, लेकिन वह मतदान से ऊबता नहीं है। हम पत्रकार दिल्ली के अपने प्रेस क्लब ऑफ इंडिया का उदाहरण दे सकते हैं। यहां पांच साल के अंतराल में नहीं, बल्कि हर वर्ष चुनाव होता है। क्लब के अधिसंख्य सदस्य बहुत उत्साह से इसमें भाग लेते हैं।

दरअसल, बार-बार के चुनाव से नहीं, बल्कि इसके बेतरतीब प्रबंधन से समस्या खड़ी हुई है। कुछ राज्य विधानसभा के चुनाव निश्चित रूप से लोक सभा के चुनाव के साथ कराए जा सकते हैं। कराए भी गए हैं। 18वीं लोक सभा के चुनाव के साथ ओडिशा, आंध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश और सिक्किम विधानसभा के चुनाव भी हुए। जम्मू-कश्मीर विधानसभा के चुनाव भी लोक सभा के साथ कराए जा सकते थे। जम्मू-कश्मीर में लोक-सभा और विधानसभा का चुनाव एक साथ नहीं कराने पर निर्वाचन आयोग ने कानून-व्यवस्था को एक कारण बताया था, जो तर्कपूर्ण नहीं है। एक साथ चुनाव होने से सुरक्षा एजेंसियों को अपनी तैनाती के लिए ज्यादा मशक्कत नहीं करनी पड़ती। विधानसभा चुनाव होने से उन्हें कुछ माह बाद ही दोबारा उसी जगह तैनात किया गया है। इस समय हरियाणा और जम्मू-कश्मीर में विधानसभा का चुनाव प्रचार चल रहा है। चुनाव के नतीजे आठ अक्टूबर को आएंगे।

आधार संहिता के हवाले से खोखला दावा

इन दोनों विधानसभाओं के साथ महाराष्ट्र और झारखंड विधानसभा के चुनाव कराने की उम्मीद की जा रही थी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। यदि चार राज्यों के विधानसभा चुनाव एक साथ होते तो एक बार की आचार संहिता में निपट जाते। इसलिए आचार संहिता का हवाला देकर विकास रुकने का दावा बहुत खोखला है। इसमें बिल्कुल दम नहीं है। इन दोनों राज्य विधानसभा चुनाव के दौरान भी केंद्र सरकार लगातार नई 'जनकल्याणकारी' योजनाओं की घोषणा कर रही है। पहले से घोषित सभी पुरानी नीतियों के अनुसार प्रशासनिक कामकाज आगे बढ़ता रहता है। विकास धीमा हो जाने या थम जाने का तर्क थोथा नजर आता है।

यदि केंद्र में सत्ताधारी भाजपा चाहती तो हरियाणा और महाराष्ट्र,दोनों विधानसभाओं को तयशुदा समय से भंग करके लोक सभा के साथ चुनाव करा सकती थी। हरियाणा में उसकी सरकार है, और महाराष्ट्र में वह सरकार का अहम हिस्सा है। इससे वह एक साहसी उदाहरण पेश करती कि उसने अपने दो राज्यों की सरकार का कार्यकाल घटाया, जिससे अन्य दलों की सरकारें भी अपने निर्धारित कार्यकाल में कटौती करें। दरअसल, चुनाव से मतदाता नहीं, बल्कि नेता घबराते हैं। चुनाव आने से उनकी जवाबदेही तय होती है। मतदाता को चुनाव से नई ताकत मिलती है। चुनाव का प्रबंधन इस तरह होना चाहिए कि कई विधानसभा के चुनाव एक साथ कराए जा सकें। आम आदमी पार्टी के नेता अरविंद केजरीवाल ने जल्द चुनाव के लिए विधानसभा भंग करने की पेशकश की है, ताकि फरवरी, 2025 में निर्धारित अवधि से पहले चुनाव हो सकें। देखना होगा कि दिल्ली के चुनाव महाराष्ट्र और झारखंड के साथ हो पाते हैं, या नहीं। ■

लोकतंत्र के नाम पर फासिस्ट एजेंडा?

जनादेश का न होने पाए अपहरण!

■ मृणाल पन्त
संयुक्त सचिव, भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

'वन नेशन वन इलेक्शन' चुनावी प्रक्रिया के साथ-साथ देश के संविधान, राज्यों की स्वायत्तता, सत्ता के विकेंद्रीकरण के सिद्धांत और राष्ट्र पर होने वाले उनके प्रभावों में गड्डम-गड्ड विषय बना हुआ है। कहना अनुचित है कि स्वतंत्रता के बाद कुछ वर्षों तक होने वाले चुनाव 'एक राष्ट्र एक चुनाव' की परिकल्पना से संचालित थे। वास्तव में नवोदय राष्ट्र के रूप में पूरे देश में एक साथ चुनावी प्रक्रिया लागू करने के परिणामस्वरूप एक साथ चुनाव को अनिवार्य करने वाली कोई संवैधानिक व्यवस्था न होते हुए भी केंद्र और राज्यों के चुनाव साथ ही होते रहे। सरकारों की बर्खास्तगी और जोड़-तोड़ के कारण मध्यावधि चुनाव एक संवैधानिक बाध्यता थी और नई व्यवस्था में भी इस संवैधानिक व्यवस्था का माकूल और सर्व-स्वीकार्य हल खोजना बेहद कठिन होगा।

1993 में पंचायती राज अधिनियम ने केंद्र और राज्य के साथ स्थानीय निकायों को जोड़ कर चुनावी संग्राम का तीसरा अखाड़ा खड़ा कर दिया। स्थानीय स्तर के नवोदित नेताओं के लिए यह चुनाव बाकी दोनों की अपेक्षा ज्यादा महत्वपूर्ण है। पंचायती राज में त्रिस्तरीय चुनाव की व्यवस्था है, तो शहरी निकायों में एक या दो स्तरीय चुनाव की। इन निकायों को शामिल करें तो एक मतदाता को कुल तीन से पांच प्रतिनिधि चुनने पड़ते हैं। 'वन नेशन वन इलेक्शन' का प्रस्तावित ड्राफ्ट इन सभी चुनावों के लिए एक ही दिन मतदान का प्रावधान नहीं करता, बल्कि लोक सभा और विधानसभा का चुनाव करवाने के पश्चात स्थानीय निकाय के चुनाव करवाने का प्रस्ताव करता है। इस तरह मूल प्रस्ताव को 'वन नेशन वन इलेक्शन' कहने पर ही सवाल उठाए जा सकते हैं।

महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश जैसे बड़े राज्यों में चुनी हुई सरकारें बिना मध्यावधि चुनाव के बदल गईं। विपक्षी विधायकों के इस्तीफों के कारण उपचुनाव हुए। जैसा कि उपचुनावों में होता है, सत्ता की पूरी ताकत झोंकी गई। विपक्ष को आशंका है कि भाजपा पूरे देश में विपक्ष शासित राज्य सरकारों को ऐसे ही गिराएगी और फिर 'वन नेशन वन इलेक्शन' के नाम पर उन्हें जनता की अदालत में पुनः चुनाव करवाने के लोकतांत्रिक अधिकार से वंचित कर देगी

तमाम चुनाव सुधार और मशीनों के उपयोग के बावजूद चुनाव आयोग को 2024 के लोक सभा चुनाव में मतदान के लिए प्रथम से अंतिम चरण तक 44 दिन लगे। इससे पहले केवल 1951 में चुनाव प्रक्रिया इतनी लंबी चली थी। जब लोक सभा चुनाव करवाने में आयोग को इतना समय और संसाधन लग रहे हैं तो सारे चुनाव एक साथ करवाना कितना दुष्कर होगा? वोटिंग मशीन में अविश्वास के बीच क्या आयोग और राजनैतिक दल चुनावकर्मी और एजेंट तालमेल बिठा पाएंगे? छोटे चुनावों में बड़े विवाद होते हैं। क्या एक साथ चुनाव करवाने के लिए पर्याप्त संख्या में सुरक्षा बल उपलब्ध हैं? आचार संहिता के उल्लंघन की ढेरों शिकायतों और उन पर कार्रवाई में हमारे चुनाव आयोग की नख-दंत हीनता के दौर में ढेर सारे प्रत्याशियों की अनगिनत शिकायतों का क्या होगा?

हमारे मतदान केंद्र एक या दो वोटिंग मशीन का सेटअप समाहित करने जैसे तो हैं, लेकिन क्या पांच या ज्यादा मशीनों का सेटअप रख पाएंगे? क्या मतदाता को एक ही केंद्र पर हर चुनाव का वोट देने की सुविधा मिलेगी? और सबसे बढ़कर यह कि क्या इतना बड़ा चुनाव कार्यक्रम पूरी पारदर्शिता और निष्पक्षता के साथ संभव हो पाएगा? यह तो सुनिश्चित करना ही पड़ेगा कि चुनाव को लेकर किया जा रहा कोई भी प्रयोग लोकतंत्र में अविश्वास पैदा करने वाला नहीं हो।

मिलकर खोजा जा सकता है प्रश्नों का हल

राजनैतिक दल और चुनाव आयोग मिल कर इन सब प्रश्नों का हल भी खोज सकते हैं। तकनीक की सहायता से इसे आसान भी बनाया जा सकता है। महीनों तक चलने वाले प्रचार की समय-सीमा को कम किया जा सकता है। जनता को बेवजह के शोर-शराबे और दबाव-प्रभाव से मुक्त करने के प्रयास तो किए ही जाने चाहिए। आचार संहिता के नाम पर विकास कार्य रोकना, एक के बाद एक चुनाव ड्यूटी में शिक्षकों को लगा कर स्कूली शिक्षा को हाशिये पर धकेलना आदि बार-बार चुनाव होने के दुष्परिणाम हैं। देश के कुछ पैसे भी जरूर बचेंगे लेकिन ये सब तर्क कितने सही हैं?

विपक्ष शासित राज्यों के मुख्यमंत्रियों को जेल भेजा जा रहा है। उन पर प्रकरण लादे जा रहे हैं। इन सब के बीच खरीद-फरोख्त, जोड़-तोड़ आम बात हो गई है। पिछले 10 सालों में कई राज्यों में विपक्षी विधायकों ने दल-बदल किया है। महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश जैसे बड़े राज्यों में चुनी हुई सरकारें बिना मध्यावधि चुनाव के बदल गईं। विपक्षी विधायकों के इस्तीफों के कारण उपचुनाव हुए। जैसा कि उपचुनावों में होता है, सत्ता की पूरी ताकत झोंकी गई। विपक्ष को आशंका है कि भाजपा पूरे देश में विपक्ष शासित राज्य सरकारों को ऐसे ही गिराएगी और फिर 'वन नेशन वन इलेक्शन' के नाम पर उन्हें जनता की अदालत में पुनः चुनाव करवाने के लोकतांत्रिक अधिकार से वंचित कर देगी। किसी भी जीवंत लोकतंत्र में यह स्थिति अस्वीकार्य है। विपक्ष के अनुसार 'वन नेशन वन इलेक्शन' लोकतंत्र के नाम पर फासिस्ट एजेंडा लागू करना है। चुनावी खर्च के मामले में ही कमोबेश यही तर्क है। क्या लोकतंत्र किसी भी कीमत से ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है?

मतदाता के लिहाज से बार-बार होने वाले चुनाव से मुक्ति एक अच्छा कदम है। भारतीय मतदाता वैसे ही संसदीय प्रणाली में रहते हुए अमेरिकन चुनाव प्रणाली की मानसिकता से वोट दे रहा है। ऐसे में वह गुण-दोष के आधार पर जनप्रतिनिधि का नहीं, बल्कि नेतृत्व के आधार पर पार्टी के प्रतिनिधि का चयन कर रहा है। लेकिन मत का अधिकार उसके लिए बहुत महत्वपूर्ण है, जिससे समझौता नहीं किया जा सकता। लोकतंत्र का अर्थ चुनाव जीत कर सत्ता में बने रहना नहीं है। लोकतंत्र का अर्थ सत्ता को जनता का सेवक बनाए रखना है। 'वन नेशन वन इलेक्शन' पद्धति में यह तो सुनिश्चित करना ही पड़ेगा कि जनादेश का किसी भी तरह से अपहरण न हो। यह अधिकार स्पष्टतः सुनिश्चित हो तो भारतीय मतदाता किसी भी चुनाव प्रक्रिया को स्वीकार करने के लिए तैयार दिखता है। ■

पीएम मोदी ने लाल किले से 'वन नेशन वन इलेक्शन' के बारे में जो कहा...

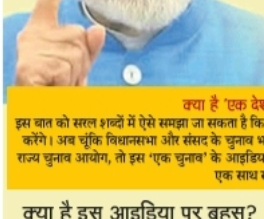

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने स्वतंत्रता दिवस की 78वीं वर्षगांठ पर लाल किले से भाषण देते हुए फिर 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' की जरूरत पर बल दिया। उन्होंने कहा, 'लाल किले से मैं राजनीतिक समुदाय से 'वन नेशन, वन इलेक्शन' के विचार का समर्थन करने का आग्रह करता हूं। इस पहल के पीछे देश का एकजुट होना महत्वपूर्ण है। बार-बार चुनाव देश में गतिरोध पैदा करते हैं। आज, हर योजना और हर पहल ऐसा लगता है कि यह चुनाव चक्र से प्रभावित है, और हर गतिविधि राजनीतिक विचारों से रंगी हुई है'

क्या है 'एक देश एक चुनाव' का आइडिया?

इस बात को सरल शब्दों में ऐसे समझा जा सकता है कि वोटर एक ही दिन में सरकार या प्रशासन के तीनों स्तरों के लिए वोटिंग करेंगे। अब चूंकि विधानसभा और संसद के चुनाव भारत निर्वाचन आयोग संपन्न करवाता है, और स्थानीय निकाय चुनाव राज्य चुनाव आयोग, तो इस 'एक चुनाव' के आइडिया में समझा जाता है कि तकनीकी रूप से संसद और विधानसभा चुनाव एक साथ संपन्न करवाए जा सकते हैं

क्या है इस आइडिया पर बहस?

कुछ विद्वान और जानकार इस विचार से सहमत हैं, तो कुछ असहमत। दोनों के अपने-अपने तर्क हैं। पहले इन तर्कों के मुताबिक इस तरह की व्यवस्था से जो फायदे मुमकिन दिखते हैं उनकी चर्चा करते हैं:

1. राजकोष को फायदा और बचत : जाहिर है कि बार-बार चुनाव नहीं होंगे, तो खर्च कम होगा और सरकार को काफी बचत होगी। और यह बचत मामूली नहीं, बल्कि बहुत बड़ी होगी। इसके साथ ही, यह लोगों और सरकारी मशीनरी के समय व संसाधनों की बड़ी बचत भी होगी
2. विकास कार्य में तेजी : चूंकि हर स्तर के चुनाव के वक्त चुनावी क्षेत्र में आचार संहिता लागू होती है, जिसके तहत विकास कार्य रुक जाते हैं। इस संहिता के हटने के बाद विकास कार्य व्यावहारिक रूप से प्रभावित होते हैं क्योंकि चुनाव के बाद व्यवस्था में काफी बदलाव हो जाते हैं, तो फैसले नये सिरे से होते हैं
3. काले धन पर लगाम : संसदीय, सीबीआई और चुनाव आयोग की कई रिपोर्ट्स में कहा जा चुका है कि चुनाव के दौरान काले धन को खपाया जाता है। अगर देश में बार-बार चुनाव होते हैं, तो एक तरह से समानांतर अर्थव्यवस्था चलती रहती है
4. सुचारू प्रशासन : एक चुनाव होने से सरकारी मशीनरी का इस्तेमाल एक ही बार होगा लिहाजा कहा जाता है कि स्कूल, कॉलेज और अन्य विभागों के सरकारी कर्मचारियों का समय और काम बार-बार प्रभावित नहीं होगा, जिससे सारी संस्थाएं बेहतर ढंग से काम कर सकेंगी
5. सुधार की उम्मीद : चूंकि एक ही बार चुनाव होगा, तो सरकारों को धर्म, जाति जैसे मुद्दों को बार-बार नहीं उठाना पड़ेगा, जनता को लुभाने के लिए स्कीमों के हथकंडे नहीं होंगे, बजट में राजनीतिक समीकरणों को ज्यादा तवज्जो नहीं देना होगी यानी एक बेहतर नीति के तहत व्यवस्था चल सकती है

ऐसे और भी तर्क हैं कि एक बार में ही सभी चुनाव होंगे तो वोटर ज्यादा संख्या में वोट करने के लिए निकलेंगे और लोकतंत्र और मजबूत होगा। बहरहाल, अब आपको बताते हैं कि इस आइडिया के विरोध में क्या प्रमुख तर्क दिए जाते हैं-

1) क्षेत्रीय पार्टियां होंगी खारिज : चूंकि भारत बहुदलीय लोकतंत्र है, इसलिए राजनीति में भागीदारी करने की स्वतंत्रता के तहत क्षेत्रीय पार्टियों का अपना महत्व रहा है। चूंकि क्षेत्रीय पार्टियां क्षेत्रीय मुद्दों को तरजीह देती हैं, इसलिए 'एक देश एक चुनाव' के आइडिया से छोटी क्षेत्रीय पार्टियों के सामने अस्तित्व का संकट खड़ा हो जाएगा क्योंकि इस व्यवस्था में बड़ी पार्टियां धन के बल पर मंच और संसाधन छीन लेंगी

2) स्थानीय मुद्दे पिछड़ेंगे : चूंकि लोक सभा और विधानसभा चुनाव अलग मुद्दों पर होते हैं, इसलिए दोनों एक साथ होंगे तो विविधता और विभिन्न स्थितियों वाले देश में स्थानीय मुद्दे हाशिये पर चले जाएंगे। 'एक देश एक चुनाव' के आइडिया में तस्वीर दूर से तो अच्छी दिख सकती है, लेकिन पास से देखने पर उसमें कई कमियां दिखेंगी। इन छोटी-छोटी डिटेल्स को नजरअंदाज करना मुनासिब नहीं होगा

3) चुनाव नतीजों में देर : ऐसे समय में जबकि तमाम पार्टियां चुनाव पत्रों के माध्यम से चुनाव करवाए जाने की मांग करती हैं, अगर एक बार में सभी चुनाव करवाए गए तो अच्छा खासा समय चुनाव के नतीजे आने में लग जाएगा। इस समस्या से निपटने के लिए क्या विकल्प होंगे, इसके लिए अलग से नीतियां बनानी होंगी

4) संवैधानिक समस्या : देश के लोकतांत्रिक ढांचे के तहत यह आइडिया सुनने में भले ही आकर्षक लगे, लेकिन इसमें तकनीकी समस्याएं काफी हैं। मान लीजिए कि देश में केंद्र और राज्य के चुनाव एक साथ हुए, लेकिन यह निश्चित नहीं है कि सभी सरकारें पूर्ण बहुमत से बन जाएं। तो ऐसे में क्या होगा? ऐसे में चुनाव के बाद अनैतिक रूप से गठबंधन बनेंगे और बहुत संभावना है कि इस तरह की सरकारें 5 साल चल ही न पाएं। फिर क्या अलग से चुनाव नहीं होंगे। यही नहीं, इस विचार को अमल में लाने के लिए संविधान के कम से कम छह अनुच्छेदों और कुछ कानूनों में संशोधन किए जाने की जरूरत पेश आएगी

5) संसाधनों की दरकार : आबादी के लिहाज से भारत चूंकि दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, इसलिए जानकारों के मुताबिक यहां एक साथ सभी राज्यों, केंद्रशासित प्रदेशों के साथ ही संसद के लिए चुनाव करवाए जाने के लिए मौजूदा संसाधनों और मशीनरी से कम से कम दोगुने की जरूरत पेश आएगी

क्या कहता है सर्वे

एक सर्वे के मुताबिक पाया गया कि एक साथ चुनाव हुए तो एक आम भारतीय वोटर एक ही पार्टी को राज्य और केंद्र के लिए वोट करे, इसके चांस 77% होंगे। भारत में चुनावों में धन और ताकत झोंकी जाती है, इसलिए इस तथ्य को भी ध्यान में रखना चाहिए। प्रधानमंत्री के भाषण के बाद लगता है कि सरकार 'वन नेशन वन इलेक्शन' को लेकर गंभीर है ■

संघीय संसदीय तंत्र के लिए घातक : अंसारी

'एक देश एक चुनाव' को लेकर देश में सियासी सरगर्मी बढ़ गई है। देश में 'एक देश एक चुनाव' को मोदी कैबिनेट से मंजूरी भी मिल गई। ज्ञात है कि 'एक देश एक चुनाव' के लिए एक कमेटी बनाई गई थी जिसके चेयरमैन पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद थे। हालांकि इसके बाद आगे का सफर आसान नही होने वाला है। इसके लिए संविधान संशोधन और राज्यों की मंजूरी भी जरूरी है, जिसके बाद ही इसे लागू किया जाएगा। इन्हीं सब मसलों पर *वरिष्ठ पत्रकार राजीव मंडल* ने *छत्तीसगढ़ के पूर्व पुलिस महानिदेशक डब्ल्यू एम अंसारी* से बातचीत की। प्रस्तुत है बातचीत के अंश-

■ **'एक देश एक चुनाव'-सरकार के इस निर्णय को आप किस तरह देखते हैं?**

उत्तर- एक देश एक चुनाव (ओएनओपी) का नारा देकर लालकिले से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने माहौल गरमा दिया है। इस विचार से बुरा इलाज शुरू होगा। मर्ज से बदतर इलाज। ओएनओपी का विचार कलेक्टिव कल्चर, एकता में अखंडता के लिए घातक है। साथ ही यह लोकतंत्र के लिए भी बड़ा खतरा है।

■ **'एक देश एक चुनाव क्या वाकई जरूरी है?**

उत्तर-देखिए, मेरे विचार से यह संकल्पना बहुत खतरनाक है। इसके लागू होने से देश की सामूहिक संस्कृति और विविधता में एकता का विचार पूरी तरह से खत्म हो जाएगा। अगर चुनाव में बदलाव लाना है तो सबसे पहले चुनाव कानून में संशोधन की जरूरत है। साथ ही पारदर्शिता की भी जरूरत है। दलबदल पर नये सिरे से पुनर्समीक्षा या संशोधन की जरूरत है। दरअसल, तकलीफ की बात यह है कि दलबदल को सभी राजनीतिक पार्टियां बढ़ावा देती हैं, उसकी पोषक बनती है।

■ **'एक देश एक चुनाव का समर्थन करने वाले ये तर्क रखते हैं कि आचार संहिता लगने की वजह से विकास कार्य बाधित हो जाते हैं। इससे काला धन पर रोक लगेगी, चुनावी खर्च कम होंगे आदि। आपका इस मसले पर क्या कहना है?**

जी, निश्चित रूप से विकास के काम रुकते हैं। धन और समय भी काफी खर्च होता है। लेकिन यह संकल्पना देश को फासिज्म और तानाशाही की ओर ले जाएगा। मेरा कहना है कि अगर ये तर्क रखेंगे तो फिर नोटबंदी से क्या काला धन का प्रवाह रुक गया? चुनावी बॉन्ड से क्या हुआ और पार्टी फंड में क्या हो रहा है? रामनाथ कोविंद कमिटी ने 190 दिन काम किया और कुल 18,626 पन्ने की रिपोर्ट सौंपी। कमिटी ने सिर्फ लोगों से सुझाव मांगे। किसी एक्सपर्ट को इसमें शामिल नहीं किया। दरअसल, इससे छोटी पार्टियों का अस्तित्व खत्म हो जाएगा।

■ **क्या इतने बड़े देश में जहां अलग-अलग राजनीतिक दलों का अपना-अपना मैंडेट होता है, इसे लागू करना कितना कठिन या आसाना होगा?**

मेरा साफ तौर पर मानना है कि इसे लागू कराना काफी मुश्किल भरा होगा। अगर यह पॉलिसी ठीक है तो चुनाव चरणों में क्यों कराए जाते हैं? वीवीपैट, ईवीएम, पोलिंग बूथ, चुनाव कर्मचारियों की भारी व्यवस्था करनी होगी। स्वाभाविक है, कम वक्त में ये सारी सुविधाएं मिलने में परेशानी होगी। स्टाफ, सुरक्षा वालों को एक ही दिन में एक जगह से दूसरी जगह ले जाने में भी भारी दुश्वारियों का सामना करना पड़ेगा।

■ **क्या एक देश एक चुनाव का सबसे बड़ा फायदा बड़ी राजनीतिक पार्टियों को मिलेगा? फिर क्षेत्रीय दल या छोटे दलों की भूमिका कैसी रहने वाली है?**

बेशक, छोटी पार्टियां खतरे में आ जाएंगी। बड़ी राजनीतिक पार्टियां अगर एक बार सत्ता में आ गईं तो उन्हें हटाना बेहद कठिन हो जाएगा। संविधान के मुताबिक तो होना यह चाहिए कि अगर कोई सत्ताधारी पार्टी जनता का विश्वास खो दे तो छह महीने के अंदर चुनाव होने चाहिए। कुल मिलाकर ओएनओपी देश की चुनावी और संघीय संसदीय तंत्र के लिए घातक है। ■

हस्तक्षेप

वन नेशन वन इलेक्शन
सर्वसम्मति कितनी आसान!

राष्ट्रीय सहारा

hastkshep.rsahara@gmail.com

लखनऊ । शनिवार ● 28 सितम्बर ● 2024

'एक देश एक चुनाव' के प्रस्ताव को हरी झंडी

मोदी सरकार की कैबिनेट की ओर से सर्वसम्मति से 'एक देश एक चुनाव' के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी गई है। पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में बनी समिति की रिपोर्ट के आधार पर मोदी सरकार ने 'वन नेशन वन इलेक्शन' को हरी झंडी दी है। इसके बाद संसद, संविधान संशोधन और राज्यों के सहयोग के साथ सरकार आगे इस दिशा में रास्ता तय करेगी

भारत में 'एक देश एक चुनाव' पर चर्चा चल उठी है। हालांकि हमारे देश में 'एक देश एक चुनाव' कोई नई बात नहीं है, बल्कि आजादी के बाद शुरुआती कई सालों तक भारत में 'एक देश एक चुनाव' ही होता था यानी सभी राज्यों के विधानसभा और केंद्र सरकार बनाने के लिए लोक सभा चुनाव एक साथ कराए जाते थे

'एक देश एक चुनाव' क्या और क्यों?

भारत जैसे बड़े देश में हर कुछ महीनों के समय में कहीं न कहीं चुनाव होते रहते हैं, पूरे देश का ध्यान उस तरफ आकर्षित होता है, राजनीति तेज होती है, चुनाव आयोग हरकत में आता है, सुरक्षा सहित तमाम सरकारी इंतजाम करने होते हैं, आचार संहिता लागू होती है, और केंद्र व राज्य सरकार की ओर से जनता के लिए किए जाने वाले विकास कार्यों का क्रम बार-बार बाधित होता है

'एक देश एक चुनाव' की धारणा में राज्यों और केंद्र के चुनाव एक साथ होंगे ताकि आने वाले कई सालों तक निर्बाध रूप से सरकारें कार्य कर सकें। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी लंबे समय से इसके समर्थक रहे हैं, और कई बार इसका उल्लेख भी करते रहे हैं

भारत में 'एक देश एक चुनाव' का इतिहास

'एक देश एक चुनाव' का विचार कम से कम 1983 से ही चला आ रहा है, जब चुनाव आयोग ने पहली बार इस पर विचार किया था। हालांकि, 1967 तक भारत में एक साथ चुनाव कराना एक आदर्श नियम था

लोक सभा और सभी राज्य विधानसभाओं के लिए पहला आम चुनाव 1951-52 में एक साथ आयोजित किया गया था। यह प्रथा 1957, 1962 और 1967 में हुए तीन आम चुनावों में भी जारी रही। हालांकि, 1968 और 1969 में कुछ विधानसभाओं के समय से पहले भंग होने के कारण यह चक्र बाधित हो गया

1970 में लोक सभा को समय से पहले ही भंग कर दिया गया और 1971 में नये चुनाव कराए गए। इस प्रकार, पहली, दूसरी और तीसरी लोक सभा ने पूरे पांच साल का कार्यकाल पूरा किया। लोक सभा और विभिन्न राज्य विधानसभाओं के समय से पहले विघटन और कार्यकाल विस्तार के परिणामस्वरूप, लोक सभा और राज्य विधानसभाओं के लिए अलग-अलग चुनाव हुए और एक साथ चुनाव कराने का चक्र बाधित हुआ है

इंदिरा गांधी ने तोड़ा क्रम

इंदिरा गांधी गांधी ने तोड़ दिया था यह क्रम : तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने साल 1970 में लोक सभा भंग करवा दी थी और तय समय से 15 महीने पहले ही 1971 में आम चुनाव करवा दिए थे। इंदिरा गांधी अल्पमत की सरकार चला रही थी और पूर्ण सत्ता चाहती थीं। उनके इस फैसले ने राज्य विधानसभा चुनावों को आम चुनाव से अलग कर दिया था

व्यापक सहमति जरूरी : रावत

पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त ओ.पी.रावत ने वरिष्ठ पत्रकार *अजय तिवारी* से बातचीत में यह भी कहा-हमारा चुनाव दुनिया में सबसे सस्ता है

■ क्या आप वन नेशन वन इलेक्शन पर आई रिपोर्ट से संतुष्ट हैं? क्या यह एक साथ चुनाव कराने के लिए पर्याप्त होमवर्क है?

मैंने रिपोर्ट नहीं पढ़ी है, 18,600 पेज की रिपोर्ट को पढ़ना बहुत मुश्किल है। हालांकि अपनी बात रखने (एविडेंस) के लिए मैं और पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त सुशील चंद्रा समिति के समक्ष गए थे। समिति के निर्माण में अवश्य गलती हुई है, जिसको चुनाव कराना है, उस चुनाव आयोग के वर्तमान या किसी पूर्व चुनाव आयुक्त को इस समिति में नहीं रखा गया। यह अटपटा भी लगता है।

■ आपने समिति के समक्ष क्या कहा?

जहां तक एक साथ चुनाव कराने की बात है, भारत का चुनाव आयोग इसमें सक्षम है। यही बात 2015 में जब मैं चुनाव आयोग में था, तब सरकार ने पूछी थी। उस समय भी सरकार को यही कहा गया था कि चुनाव आयोग को सारे चुनाव एक साथ कराने में कोई मुश्किल नहीं आएगी। समिति के समक्ष मैंने यह बात अवश्य कही कि पहले लोक सभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ कराने का प्रयोग किया जाए। यह प्रयोग सफल हो जाने के बाद स्थानीय निकाय के चुनाव साथ (या कुछ दिनों के अंतराल पर) कराने की तरफ बढ़ा जाए। लोक सभा और विधानसभा चुनाव के साथ स्थानीय निकाय को मिला देने से चुनाव का स्वरूप बहुत बड़ा हो जाएगा। दरअसल, देश में सात लाख पंचायत हैं। संभवतः इस बात पर समिति ने भी गौर किया और निकाय चुनाव लोक सभा और विधानसभा चुनाव के 100 दिन बाद कराने की सिफारिश की है।

■ स्थानीय निकाय के चुनाव को लेकर आपकी सोच क्या है?

स्थानीय निकाय के चुनाव राज्यों के चुनाव आयुक्त चुनाव आयोग जैसी कठोरता से नहीं कराते। पंचायत के चुनाव में काफी हिंसा होती है। संविधान का पालन नहीं होता। फिर भी राज्य के चुनाव आयुक्त लाचार नजर आते हैं। दरअसल, उनकी नियुक्ति मुख्यमंत्री की कृपा से होती है, इसलिए वे सही-गलत का निर्णय करने की बजाय उन्हें खुश करने में ही लगे रहते हैं। चूंकि नियुक्ति चापलूसी की वजह से होती है, इसलिए उन पर हर समय सत्ताधारी दल को उपकृत करने का दबाव बना रहता है। हाल में न्यायिक प्रक्रिया से जुड़े व्यक्तियों के एक कार्यक्रम में मुझे बड़ी संख्या में व्यक्तियों ने कहा कि निकाय चुनाव भी चुनाव आयोग को कराने चाहिए। निष्पक्षता ही विषय नहीं है, राज्य सरकार समय पर चुनाव ही नहीं करातीं। महाराष्ट्र में पंचायत के चुनाव बार-बार टालने पर सुप्रीम कोर्ट के जज ने सरकार को कड़े शब्दों में कहा कि चुनाव में एक दिन की भी देरी नहीं होनी चाहिए। मैं एक दिलचस्प वाकया बताता हूं। जिससे यह बात समझ में आ जाएगी कि राज्यों के निर्वाचन आयुक्त किस दबाव में काम करते हैं। जब मैं देश का चुनाव आयुक्त था, मेरे ही राज्य के मुख्यमंत्री का फोन आया और उन्होंने तल्खी से कहा कि क्या आप ने हमें हराने का ठेका ले रखा है, इसीलिए हैदराबाद के अधिकारी को पर्यवेक्षक के रूप में शिवपुरी के उपचुनाव में लगाया है। इस पर मैंने उन्हें कहा कि अगर आप को उस पर्यवेक्षक की निष्पक्षता पर संदेह है, तो आयोग पर्यवेक्षक बदल देगा। इसके बाद मैंने पश्चिम बंगाल के अधिकारी को वहां पर्यवेक्षक बना कर तैनात कर दिया। उक्त चुनाव में इसके बाद भी मुख्यमंत्री की पार्टी हार गई। दरअसल, नया पर्यवेक्षक पुराने वाले से भी सख्त था। चुनाव ऐसे ही कराए जाते हैं, और चुनाव कराने वाले व्यक्ति को सिर्फ संविधान की तरफ देखना चाहिए।

■ क्या निकाय चुनाव भी चुनाव आयोग करा सकता है, उसके लिए संविधान में किस तरह के संशोधनों की जरूरत पड़ेगी?

इसके लिए राज्यों में रिजनल इलेक्शन कमिश्नर (क्षेत्रीय चुनाव आयुक्त) की नियुक्ति करनी पड़ेगी। संविधान के अनुच्छेद 243 में संशोधन करके ऐसा किया जा सकता है।

■ क्या विपक्ष के विरोध के बाद भी वन नेशन वन इलेक्शन संभव हो सकेगा?

सरकार को सभी दलों की सहमति हासिल करनी चाहिए। इसके लिए दलों के साथ खुल कर चर्चा की जाए और उनकी बातों को भी समझा जाए। यह जल्दबाजी का विषय नहीं है। देश की राजनीति में महत्व रखने वाले 15 दल वन नेशन वन इलेक्शन से असहमति रखते हैं। इन दलों की परवाह किए बिना वन नेशन वन इलेक्शन की तरफ बढ़ना अच्छे मकसद की भावना को कहीं न कहीं चोट अवश्य पहुंचाएगा। यह बात बहुत गहरी है, जो शायद अभी किसी के समझ में न आए। भारत में जनगणना शुरू होने वाली है, जिसके नतीजे आने पर सीटों का परिसीमन भी बदलेगा। उत्तर भारत में सीटों की संख्या ज्यादा बढ़ जाएगी और लेकिन दक्षिण भारत में सीटें कम संख्या में बढ़ेंगी जिसकी वजह से दक्षिण भारत के दलों में असंतोष देखने को मिल सकता है। पहले ही सरकार का नेतृत्व करने वाली भाजपा के बारे में कहा जाता है कि उसका प्रभाव सिर्फ उत्तर भारत में है। मुझे लगता है कि जनगणना के बाद सीटों का जो परिसीमन होगा (इसके हिसाब से ही 1929 के चुनाव होंगे) वह देश को काफी प्रभावित करेगा। मैं इसे देश की एकता एवं अखंडता सुरक्षित रखने के नजरिए से भी देखता हूं। सीधे शब्दों में कहूं तो आने वाला समय देश के लिए चुनौती भरा रहने वाला है। यही वजह है कि मैं वन नेशन वन इलेक्शन के लिए सभी दलों की सहमति पर जोर दे रहा हूं।

■ वन नेशन वन इलेक्शन के लिए चुनाव आयोग को क्या तैयारी करनी पड़ेगी?

अभी चुनाव में 20-22 लाख ईवीएम का इस्तेमाल किया जाता है, लोक सभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ कराने के लिए 50 लाख ईवीएम की आवश्यकता होगी। लगभग नौ हजार करोड़ रुपये का खर्च आएगा। पहले एक ईवीएम की आयु 15 साल होती थी जो 10 चुनाव कराती थी। अब वो तीन चुनाव ही करा सकेगी। चुनाव आयोग का खर्च देखें तो हमारा चुनाव दुनिया के सभी चुनावों से सस्ता होता है। हम चुनाव की सारी व्यवस्थाओं पर प्रति वोटर सिर्फ एक डॉलर खर्च करते हैं वहीं केन्या प्रति वोटर 25 डॉलर खर्च करता है। पड़ोसी देश पाकिस्तान का खर्च भी ज्यादा है।

■ वन नेशन वन इलेक्शन में वोटर के लिए कई ईवीएम भी लगानी होंगी। दलों का कहना है कि इससे मतदाता भ्रमित होगा?

दो ही ईवीएम लगानी होंगी क्योंकि निकाय चुनाव लोक सभा और विधानसभा चुनावों के साथ नहीं होने हैं। ओडिशा के चुनाव अभी भी लोक सभा चुनाव के साथ ही होते हैं, वहां दो ईवीएम लगाई जाती हैं। मतदाता बहुत जागरूक हो गया है। लोक सभा का वोट और विधानसभा का वोट अलग-अलग मुद्दे पर डालता है। 2019 के लोक सभा चुनाव में जब उसे ओडिशा की सरकार पसंद थी, तो उसने विधानसभा चुनाव की ईवीएम में बीजद को वोट दिया और लोक सभा चुनाव की ईवीएम में भाजपा को।

■ क्या आप का भी मानना है कि जब लोक सभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ होने लगेंगे तो चुनाव खर्च घट जाएगा?

चुनाव खर्च घट जाएगा, ऐसा नहीं लगता। जब बीच में चुनाव नहीं होंगे तो राजनीतिक दल एक ही चुनाव में और ज्यादा राशि खर्च करने लगेंगे। जब तक राजनीतिक दलों के चुनाव खर्च की सीमा तय नहीं होगी, चुनाव खर्च कम नहीं होगा। राजनीतिक दलों के चुनाव खर्च की सीमा तय करने के मुद्दे पर राजनीतिक दलों में इच्छाशक्ति का अभाव है। प्रमुख दलों की इसमें कोई दिलचस्पी भी नहीं दिखती। ■

लोकतंत्र के लिए वरदान या बोझ?

'एक राष्ट्र एक चुनाव' के पक्ष में जो दूसरा तर्क दिया जाता है, वह है चुनाव कराने में धन और संसाधनों की बचत। समझना होगा कि चुनाव ही वह माध्यम है जिसके जरिए विवेकशील व्यक्ति अपना प्रतिनिधि चुनता है। ऐसा प्रतिनिधि जो उसकी समस्याओं और उसके क्षेत्र के मुद्दों को लेकर आवाज उठाए और अगर जनप्रतिनिधि चुनने का मौका छीन लिया जाए तो यह गंभीर उल्लंघन होगा। भारत के संविधान की मूल संरचना का यकीनन उल्लंघन होगा। इसलिए 'एक राष्ट्र एक चुनाव' की अत्यधिक आवश्यकता हमारे देश में चुनाव कराने के लिए आदर्श और व्यवहार्य तंत्र नहीं है

■ इशान अहमद

सहायक प्रोफेसर(कानून)
हमदर्द इंस्टीट्यूट ऑफ लीगल स्टडीज एंड रिसर्च, जामिया हमदर्द, दिल्ली

सितम्बर 2023 में केंद्र सरकार ने पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद के नेतृत्व में 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' पर उच्चस्तरीय समिति का गठन किया था। समिति ने राष्ट्रीय और राज्यों के राजनीतिक दलों के साथ बातचीत की थी और राज्य चुनावों के साथ-साथ हर पांच साल में एक बार सभी लोक सभा सीटों के लिए साथ चुनाव कराने पर जनता और न्यायविद् की राय मांगी। इस प्रस्ताव को लागू करने के पीछे मुख्य उद्देश्य चुनावी प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करना और निर्धारित समय और संसाधनों के संदर्भ में चुनावों की बहुलता को कम करना था। हालांकि, एक चुनाव कराने का विचार कोई नया नहीं है, बल्कि इसे पहली बार 1983 में भारत निर्वाचन आयोग द्वारा आयोजित करने का प्रस्ताव दिया गया था। लोक सभा और सभी राज्य विधानसभाओं के लिए पहला आम चुनाव 1951-1952 में एक साथ आयोजित किया गया था, और 1957, 1962 और 1967 में हुए बाद के तीन आम चुनाव भी आयोजित किए गए। दूसरे और तीसरे चुनाव में उनका कार्यकाल पूरा हुआ लेकिन 1970 में लोक सभा समय से पहले ही भंग हो गई और 1971 में नये चुनाव हुए।

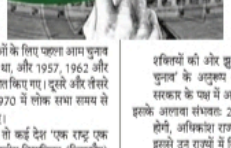

यदि अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण को देखें, तो कई देश 'एक राष्ट्र एक चुनाव' प्रारूप का पालन करते हैं। स्वीडन में राष्ट्रीय विधायिका (रिक्सडैग) और प्रांतीय विधायिका और नगर पालिका, विधानसभाओं के चुनाव निश्चित तिथि पर यानी सितम्बर में दूसरे रविवार को एक साथ आयोजित किए जाते हैं- चौथे वर्ष। इसी तरह ब्रिटेन में निश्चित अवधि में चुनाव कराने का संसद अधिनियम, 2011 में प्रावधान है। प्रावधान है कि पहला चुनाव 7 मई, 2015 को और उसके बाद हर पांचवें वर्ष मई के पहले गुरुवार को होगा। लेकिन ऐसे में इसे पूरा किए बिना उन देशों में भी सरकार की स्थिरता सुनिश्चित नहीं की जा सकती।

संघवाद के विपरीत है यह अवधारणा

'एक राष्ट्र एक चुनाव' योजना को अपनाने में कई बाधाएं हैं जैसे, यह अवधारणा संघवाद के विपरीत है अर्थात भारत के संविधान के अनुच्छेद 1 में निर्दिष्ट 'राज्यों के संघ' के रूप में भारत के विचार के विपरीत है। एक साथ चुनाव राज्य सरकारों की स्वायत्तता और स्वतंत्रता पर हमला है। इससे न केवल संघीय ढांचा कमजोर हो सकता है, बल्कि केंद्र और राज्यों के बीच हितों का टकराव भी बढ़ सकता है। जस्टिस बीएस चौहान के तहत विधि आयोग की रिपोर्ट 2018 में बताया गया कि मौजूदा संवैधानिक ढांचे के भीतर एक साथ चुनाव संभव नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय में एसआर बोम्मई बनाम भारत संघ 1994-2 एससीआर 644 मामले में शीर्ष अदालत ने यह कहते हुए राज्यों के स्वतंत्र संवैधानिक अस्तित्व पर जोर दिया कि आम चुनाव प्रक्रिया की शुरुआत संविधान की मूल संरचना का उल्लंघन कर सकती है, जैसा कि रेखांकित किया गया है।

किसी भी लोकतंत्र में राष्ट्र में संप्रभुता, धर्मनिरपेक्षता, समाजवादिता को कायम रखने में चुनाव प्रमुख भूमिका निभाता है। राज्य हो या लोक सभा, आम चुनाव के जरिए आम नागरिक को वोट के जरिए अपने मुद्दे उठाने का मौका मिलता है। भारत जैसे देश, जहां इतनी सांस्कृतिक विविधता है, में वन नेशन वन इलेक्शन जैसी योजना को लागू करना वास्तव में बहुत बड़ा काम है। भारतीय विधानमंडल जिस संरचना का अनुसरण करता है, वहां सरकार की संघीय संरचना का पालन करते हुए केंद्र सरकार की शक्तियों की ओर झुकाव होता है। इसलिए यदि चुनाव 'एक राष्ट्र एक चुनाव' के अनुरूप आयोजित किए जाते हैं, तो निश्चित रूप से केंद्र सरकार के पक्ष में अनुचित लाभ होगा।

इसके अलावा संभवतः 2029 में, जब 'एक राष्ट्र एक चुनाव' योजना लागू होगी, अधिकांश राज्य सरकारें अपने कार्यकाल के मध्य में होंगी और इससे उन राज्यों में विधायी ढांचे पर ताला लग जाएगा। 'एक राष्ट्र एक चुनाव' के पक्ष में जो दूसरा तर्क दिया जाता है, वह है चुनाव कराने में धन और संसाधनों की बचत। समझना होगा कि चुनाव ही वह माध्यम है जिसके जरिए एक विवेकशील व्यक्ति अपना प्रतिनिधि चुनता है। ऐसा प्रतिनिधि जो उसकी समस्याओं और उसके क्षेत्र के मुद्दों को लेकर आवाज उठाए और अगर जनप्रतिनिधि चुनने का मौका छीन लिया जाए तो यह गंभीर उल्लंघन होगा। भारत के संविधान की मूल संरचना का यकीनन उल्लंघन होगा। इसलिए 'एक राष्ट्र एक चुनाव' की आत्यधिक आवश्यकता हमारे देश में चुनाव कराने के लिए आदर्श और व्यवहार्य तंत्र नहीं है, बल्कि भारत में कहीं भी आम या राज्य चुनावों के मामले में अधिक कठोर दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। ■

पेज 2 विवेक वार्ष्णेय । मृणाल पन्त । पूर्व पुलिस महानिदेशक एम. डब्ल्यू. अंसारी से बातचीत
पेज 3 प्रो. लल्लन प्रसाद । विनय ठाकुर । अनिल जैन
पेज 4 डॉ. ब्रह्मदीप अलूने । डॉ. सी.पी. राय । अरविंद कुमार सिंह

हिन्दुस्तान 1936

भारत का समर्थन

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता के प्रति समर्थन का भाव फिर उभरा है। अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन, फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रां के बाद अब ब्रिटिश प्रधानमंत्री केर स्टार्मर ने भी संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिए भारत की दावेदारी का समर्थन किया है। ध्यान रहे, न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा के 70वें सत्र को संबोधित करते हुए स्टार्मर ने विस्तार का पक्ष लिया। फिलहाल सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्य हैं- अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, चीन और फ्रांस। इसके अलावा दस गैर-स्थायी सदस्य दो-दो साल के कार्यकाल के लिए चुने जाते हैं। गैर-स्थायी सदस्य कोई भी देश बन सकता है, उसकी तय प्रक्रिया है, पर किसी देश को स्थायी सदस्य बनाने की कोई तय पद्धति नहीं है। वीटो शक्ति प्राप्त देश दूसरे देशों से मजबूत स्थिति में होते हैं। हालांकि, वीटो की शक्ति ने दुनिया का फायदा कम और नुकसान ही ज्यादा किया है। आज के समय में वीटो किसी भी बड़े निर्णय में बाधक के रूप में सामने आता है। खासकर, अगर वीटो ताकत वाला कोई देश मनमानी पर उतर आए, तो वह संयुक्त राष्ट्र को पंगु बना सकता है।

आज दुनिया देख रही है कि संयुक्त राष्ट्र की कारगरता सिमटती चली जा रही है, क्योंकि वीटो प्राप्त कुछ देशों में साम्राज्यवादी मानसिकता का ज्वार आया हुआ है। ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने अपने संबोधन में उचित ही कहा है कि हम परिषद में अफ्रीका, ब्राजील, भारत, जापान और जर्मनी को स्थायी सदस्य के रूप में देखना चाहते हैं। हालांकि, यह एक बड़ा सवाल है कि ऐसा कैसे होगा? भारत की सदस्यता को वीटो शक्ति प्राप्त पांच में से चार देशों का समर्थन समय-समय पर मिला है, लेकिन यहां चीन कूटनीतिक चुप्पी साध लेता है। एशिया में अकेले उसके पास ही वीटो शक्ति है और वह नहीं चाहता कि भारत या जापान जैसे प्रतिकूल रुख रखने वाले देश बराबरी पर आ खड़े हों। वैसे भी, चीन जब पड़ोसी देशों पर साम्राज्यवादी निगाह रखे हुए है, तब उसे समझाना कठिन है। इस कठिन कार्य को अंजाम तक पहुंचाने के लिए अंततः वीटो शक्ति संपन्न देशों को ही आगे आना होगा। अगर ये देश संयुक्त राष्ट्र में सुधार के लिए पहल नहीं करेंगे, तो दुनिया की यह सिरमौर संस्था अपनी आभा खोती चली जाएगी। यह आज के समय में एक दुखद तथ्य है कि जहां चीन चुप्पी साधे हुए है, वहीं अन्य वीटोधारी देश सिर्फ जुबानी जमाखर्च की औपचारिकता निभा रहे हैं।

सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता दिलाने के लिए हमारे कूटनीतिज्ञों के पास क्या योजना है? क्या भारतीय कूटनीतिज्ञों ने कोई प्लान ए और बी तैयार किया है?

हालांकि, सवाल तो यह भी है कि भारतीय कूटनीतिज्ञों के पास अपनी क्या योजना है? क्या हमारे विद्वान कूटनीतिज्ञों ने कोई प्लान ए और प्लान बी तैयार किया है? चीन को कैसे तैयार किया जाएगा? चीन जानता है कि युद्ध के विरुद्ध समृद्ध इतिहास रखने वाला भारत शांति का संदेश देने वाले गौतम बुद्ध का देश है। हमारे प्रधानमंत्री भी अक्सर कहते हैं कि हमने दुनिया को युद्ध नहीं दिए, बुद्ध दिया। हालांकि, ध्यान रहे, शक्तिशाली देश भावना से नहीं, व्यावहारिकता से चलते हैं। अब जब भी दुनिया में किसी को वीटो की ताकत मिलेगी, तो उसके वैश्विक महत्व और जरूरत को आंका जाएगा। क्या भारत इस दिशा में शक्तिशाली देशों से कोई संवाद कर रहा है? क्या हमने खुद को पर्याप्त मजबूत बना लिया है? निस्संदेह, दुनिया की सबसे बड़ी आबादी वाले देश को स्थायी सदस्यता की थाली खुद सजानी पड़ेगी, कोई और सजाकर नहीं देगा।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 28 सितंबर, 1949

काश्मीर का भविष्य

काश्मीर को आक्रमणकारियों के विरुद्ध फरियाद किये आज पूरे २१ महीने बीत गये। किंतु इतना समय बीत जाने पर भी विश्व-शांति के कठित ठेकेदार अभी तक कोई ऐसा संकेत नहीं दे सके हैं जिससे विश्वास किया जाये कि उनमें काश्मीर की गुत्थी को सुलझाने की क्षमता या इच्छा है। इसके विपरीत "मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की" के अनुसार काश्मीर की उलझन दिन पर दिन जटिल बनती जा रही है और जो कमीशन पश्चिम के महान शक्तिशाली राष्ट्रों का प्रतिनिधि बनकर आज से १४ मास पूर्व भारत आया था, वह असफल होकर लौट गया है। यह दुःख के साथ ही साथ लज्जा की भी बात है।

भारत से प्रस्थान करने के पूर्व काश्मीर कमीशन ने अपने सवा वर्ष के प्रयत्नों पर प्रकाश डालते हुए एक विस्तृत वक्तव्य दिया है, जिसकी स्पष्ट ध्वनि यह है कि भारत और पाकिस्तान के असहयोग के कारण ही कमीशन अपने प्रयत्नों में सफल नहीं हो पाया है। सच पूछिए तो उसने यह अभियोग लगाया है कि उसके विभिन्न प्रस्तावों को कभी भारत और कभी पाकिस्तान ने अस्वीकार कर उसके कार्य में रोड़ा अटकाया। कितना अच्छा होता कि काश्मीर कमीशन, जो यहां चिकित्सक बनकर आया था, रोग के मूल कारण को समझने का प्रयत्न करता और केवल ऊपरी लक्षणों के चक्कर में पड़कर पथभ्रष्ट न होता। जैसा कि नेहरूजी ने कहा है, कमीशन ने समझौता कराने की भरसक चेष्टा अवश्य की और अब भी कर रहा है, किंतु जो बात समझ में नहीं आती, वह यह है कि क्यों नहीं कमीशन ने अपना ध्यान केवल उस प्रश्न पर केन्द्रित किया, जो भारत ने उसके समक्ष उपस्थित किया था और क्यों नहीं उसने उस प्रश्न पर अपने विचार प्रकट किये? प्रश्न बिलकुल स्पष्ट था- पाकिस्तान ने काश्मीर पर आक्रमण किया और चूंकि काश्मीर भारत का शरणागत बना, इसलिए भारत ने उसकी रक्षा के लिए शस्त्र उठाना अपना कर्तव्य समझा। ऐसी अवस्था में यह भारत नहीं, बल्कि पाकिस्तान का धर्म था कि वह काश्मीर से अपनी सेनाएं हटाता। फिर क्यों नहीं काश्मीर कमीशन ने सच्चे अपराधी की ओर इंगित किया और क्यों नहीं उसे पीछे हटने का आदेश दिया? एक शीशे जैसी साफ समस्या को संयुक्त राष्ट्र ने अन्य प्रश्नों के साथ मिलाकर धुंधला कर दिया।

इस समय जम्मू-कश्मीर में शांतिपूर्वक विधानसभा चुनाव हो रहे हैं, पर एक वक्त था, जब वहां चुनाव कराने की हिम्मत नहीं हो रही थी। राज्यसभा में 1 जून, 1995 को हुई बहस आज भी प्रासंगिक है और उससे पता चलता है कि हमने जम्मू-कश्मीर में कितना लंबा सफर तय कर लिया है।

आमने-सामने

कश्मीर में कायरता को उदारता न कहा जाए

विजय कुमार मल्होत्रा | वरिष्ठ सांसद

यहां स्कैन करें

- आप कहते हैं कि चुनाव करा लेंगे, पर स्थिति बिगड़ती चली जा रही है।
- विकास का 95 प्रतिशत हिस्सा क्या आतंकियों के हाथों में नहीं जा रहा है?
- जब तक आतंकवाद जारी है, तब तक उनसे कोई बात न कीजिए।

अभी मंत्री महोदय ने और छह महीने के लिए राष्ट्रपति शासन को जम्मू-कश्मीर में लागू करने के लिए प्रस्ताव रखा है। साल 1990 के बाद से दस बार इस तरह का प्रस्ताव आ चुका है और दसियों बार प्रस्ताव रखते हुए यही बात कही गई कि परिस्थिति में बड़ा सुधार हो रहा है,... अगली बार छह महीने के बाद हम चुनाव करा ही देंगे और वहां आतंकवाद खत्म हो रहा है, लेकिन स्थिति लगातार बिगड़ती ही जा रही है। *मर्ज बढ़ता गया, ज्यों-ज्यों दवा की* वाली कहावत चरितार्थ हो रही है, क्योंकि आप दवा गलत दे रहे हैं, दवा उल्टी दे रहे हैं और वहां पर सुधार का जो दावा करते हैं, अपने इस वक्तव्य में आपने उसके बारे में पूरी तरह से विपरीत तथ्य यहां प्रकट किए हैं। इससे एक बात और साबित हो गई है कि जम्मू-कश्मीर के बारे में सरकार की न कोई रणनीति है, न लक्ष्य है और न उस लक्ष्य को पूरा करने के लिए इस सरकार के पास कोई संकल्प है या विधेयक है। विदेशी शक्तियों के दबाव में आकर आप लगातार यह कहते जा रहे हैं कि हम चुनाव कराएंगे...।

विपक्षी पार्टियां आपसे कह रही थीं कि यहां के हालात ठीक नहीं हैं, किंतु आप मानने को तैयार नहीं थे और अंत में 100 जूते और 100 प्याज वाली जो कहावत है, चरितार्थ हुई और यहां पर भयंकर आतंकवाद, हिंसा के बाद आपको यह विधेयक लाने पर मजबूर होना पड़ा। सवाल यह पैदा होता है कि क्या जम्मू-कश्मीर में आज चुनाव कराए जा सकते हैं, जैसा आप कहते हैं? क्या आपकी अपील वहां पर चलती है?

जम्मू-कश्मीर में 15,000 से ज्यादा लोग मारे जा चुके हैं। जितने सैनिक हिन्दुस्तान-पाकिस्तान की लड़ाई में नहीं मारे गए, उससे ज्यादा हमारे सैनिक, अर्द्ध सैनिक कश्मीर में शहीद हो चुके हैं। ...कश्मीर में हिंदुओं के मंदिर नष्ट किए गए हैं और जो बच गए हैं, उनमें जल चढ़ाने वाला कोई नहीं है और सबसे बढ़कर कश्मीर के अंदर अधिकांश प्रशासन और ज्यादातर आपके कर्मचारी या तो डर से या स्वयं पूरी तरह से आपके नियंत्रण में नहीं हैं और जैसा आतंकवादी चाहते हैं, उसके मुताबिक आज वे काम कर रहे हैं। ...अभी आपने कहा कि हम विकास का बड़ा काम कर रहे हैं, जितना रुपया आप विकास के लिए दे रहे हैं, क्या उसका 95 प्रतिशत आतंकवादियों के हाथों में नहीं जा रहा है?

...कोई आदमी वहां जाने की हिम्मत तो करता नहीं और उसके बाद भी आप कहते हैं कि हम चुनाव कराएंगे और परिस्थिति बड़ी अनुकूल हो रही है।...ऐसी हालत में जब आपके गवर्नर पर बम फेंका जा सकता है, पुलिस हेड क्वार्टर के अंदर मीटिंग होती है टॉप सीक्रेट और उस पर रॉकेट फेंका जाता है। ... किसने दिया प्रधानमंत्री को जनादेश कि वह आतंकवादियों के हाथ में करीबन-करीबन आजादी दे दें। इस सदन का सर्वसम्मत संकल्प है कि कश्मीर हिन्दुस्तान का अभिन्न अंग है।... आप लगभग आजादी देने की बात कैसे कर सकते हैं? दूसरी बात जो उन्होंने कही, वह तो बहुत खतरनाक है - कि मैं किसी से भी बातचीत करने के लिए तैयार हूं। ...धिक्कार है ऐसी मनोवृत्ति पर। ...आप अपनी कायरता, अपने निकम्मेपन को उदारता का नाम न दें, ...उस पर कहें कि हम बातचीत कर रहे हैं, बड़ी भारी राजनीति कर रहे हैं। यह राजनीति नहीं है। यह देश को बरबाद करने की बात है। ...आप अपनी सेना को खुली छूट नहीं दे रहे हैं, उनको दबाकर रख रहे हैं। ऐसी हालत में मैं आपसे कहना चाहता हूं कि आप अमेरिका के दबाव में न आइए, न किसी और के दबाव में आइए। हिन्दुस्तान के हितों को ध्यान में रखते हुए एक बार फिर घोषणा कीजिए कि जब तक आतंकवाद है, ...उनसे कोई बात नहीं की जाएगी और साफ तौर पर कहिए कि ...कश्मीर की एक इंच भूमि हिन्दुस्तान से अलग नहीं हो सकती। इस बीच में अपनी अपील वहां कायम कीजिए, उसके बाद चुनाव कराइए, हमें कोई आपत्ति नहीं।

(राज्यसभा में दिए गए उद्बोधन के अंश)

हम किसी देशी-विदेशी शक्ति के दबाव में नहीं

एस बी चव्हाण | तत्कालीन केंद्रीय गृह मंत्री

यहां स्कैन करें

- केंद्र सरकार जम्मू-कश्मीर में चुनाव कराने के लिए प्रतिबद्ध है।
- हो सकता है विकास का कुछ पैसा आतंकियों के पास जा रहा हो।
- थोड़ा इंतजार कीजिए, प्रधानमंत्री के मन में क्या है, वही बताएंगे।

मैं सभी माननीयों का बहुत-बहुत धन्यवाद करता हूं। जिन सदस्यों ने बड़ी संख्या में सुझाव दिए हैं। ...मैं आश्वस्त करना चाहता हूं कि यह किसी बाहरी देश के दबाव के कारण नहीं है कि हम जम्मू-कश्मीर में चुनाव कराने जा रहे हैं। यह सच्चाई से बहुत दूर है। दरअसल, पाकिस्तान और आतंकवादी तथा कुछ अन्य लोग उस क्षेत्र में चुनाव के बिल्कुल खिलाफ हैं। कुछ अन्य लोग भी सोच रहे होंगे कि यदि हम चुनाव कराने में सफल हो गए, तो यह मुद्दा, जो वास्तव में अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में कुछ राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता था, वहां नहीं होगा।

मैं माननीय सदस्यों द्वारा की गई आलोचना को कम नहीं आंकता। मैं सभी सदस्यों और इस सदन के माध्यम से पूरे देश को आश्वस्त कर सकता हूं कि हम स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए प्रतिबद्ध हैं। कृपया, भगवान के लिए ऐसी कोई अफवाह फैलाने की कोशिश न करें कि उस क्षेत्र में फिर से धांधली होने वाली है और जम्मू-कश्मीर के लोगों पर किसी को थोपा जाएगा। दरअसल, ऐसा कुछ भी नहीं है। ...मैं माननीय सदस्यों को आश्वस्त कर सकता हूं। सदस्य गण, श्री मल्होत्रा जी, यह किसी के दबाव में नहीं है। दूसरी ओर, मैं यह भी कह सकता हूं कि कुछ निहित स्वार्थी लोग हैं, जो चुनाव नहीं चाहते। ऐसे लोग सियासी मकसद से इस मुद्दे का फायदा उठाना चाहते हैं।...

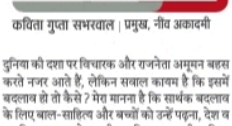

यह एक सच्चाई है और मैं इससे इनकार नहीं कर सकता कि कुछ सरकारी कर्मचारी हैं, जो वास्तव में अपना वेतन यहां से पा रहे हैं, लेकिन उन्हें कहीं और प्रशिक्षित किया गया है। मैं इससे इनकार नहीं करूंगा, लेकिन आपको शायद यह जानकर खुशी होगी कि जम्मू-कश्मीर सरकार ने उनके खिलाफ कार्रवाई की है। मुझे उन लोगों की सूची मिल गई है, जिनके खिलाफ धारा 311 के तहत कार्रवाई की गई है। ...हालांकि, मैं यह नहीं कह सकता कि हम इस मामले में इस श्रेणी के सभी लोगों के खिलाफ कार्रवाई करने में सफल रहे हैं। मैं इस बात से भी इनकार नहीं कर सकता कि विकास का जो पैसा हम जम्मू-कश्मीर को दे रहे हैं, उसका कुछ हिस्सा आतंकवादियों के हाथों में गया है...। जम्मू-कश्मीर को जो सहायता उपलब्ध कराई जाती है, वह 90 प्रतिशत अनुदान के रूप में और 10 प्रतिशत ऋण के रूप में होती है...।

मुझे पूरा विश्वास है कि हम विकास के लिए पैसा प्राप्त करने में सक्षम होंगे और यह देखेंगे कि युवा लोग, जो वास्तव में उस क्षेत्र में बेरोजगार हैं, उनको किसी प्रकार का रोजगार मिले। ...प्रवासियों के बीच यह भावना रही है कि यद्यपि अन्य सभी को सहायता दी जाती है, पर उन्हें पूरी तरह से उपेक्षित किया गया है। ...आपको विश्वास दिलाता हूं कि जो लोग शैक्षणिक संस्थानों में दाखिला नहीं ले पाए हैं, क्योंकि वे खराब तरीके से काम कर रहे हैं, उन्हें न केवल जम्मू में, बल्कि अन्य सभी क्षेत्रों में प्राथमिकता दी जाएगी और प्राथमिकता के आधार पर ऐसे सभी छात्र शामिल हो सकेंगे। सभी तकनीकी संस्थानों में प्रवेश पाएंगे। मुझे आश्चर्य हुआ, जब माननीय द्वारा आपत्ति की गई। सदस्य प्रोफेसर विजय कुमार मल्होत्रा ने प्रधानमंत्री के उस बयान पर जिस 'लगभग आजादी' शब्द का इस्तेमाल किया है, एक बहुत ही अजीब शब्द है। मुझे नहीं लगता कि आप उस पर आपत्ति उठा सकते हैं। यह समझने का प्रयास करें कि आपके मन में किसी प्रकार का दृष्टिकोण हो सकता है और उस दृष्टिकोण से आप विचार कर सकते हैं कि आप आजादी देने जा रहे हैं। क्या यह होने वाला है?

आजादी हो या नहीं, आखिरकार, प्रधानमंत्री इस सदन के सामने आने वाले हैं और मुझे यकीन है कि वह यह बताने में सक्षम होंगे कि पैकेज की सामग्री क्या है, जो उनके मन में है, और क्या यह स्थानीय लोगों की आकांक्षाओं को पूरा करता है या नहीं करता।

(राज्यसभा में दिए गए उद्बोधन के अंश)

भारतीय बाल साहित्य का भंडार इतना छोटा क्यों

कविता गुप्ता सभरवाल | प्रमुख, नींव अकादमी

यहां स्कैन करें

दुनिया की दशा पर विचारक और राजनेता अमूमन बहस करते नजर आते हैं, लेकिन सवाल कायम है कि इसमें बदलाव हो तो कैसे? मेरा मानना है कि सार्थक बदलाव के लिए बाल-साहित्य और बच्चों को उन्हें पढ़ना, देश व नागरिक समाज को अपनी प्राथमिकता बनानी चाहिए। दोनों ही देश के लिए अक्षय ऊर्जा के स्रोत हैं, क्योंकि उनमें मानव-पूंजी को बढ़ाने, लोकतंत्र को सुरक्षित रखने और सॉफ्ट पावर को बढ़ाने की क्षमता है। दुर्भाग्यवश, बाल साहित्य की गुणवत्ता और बच्चों को यह कितना पढ़ना चाहिए, मुर्गी और अंडे वाली समस्या है। ठीक सबसे पहले क्या किया जाए? कुछ अलग किए बिना इस मसले का समाधान मुश्किल है।

भारत के प्रमुख लिटफेस्ट (लिटरेचर-फेस्टिवल) में बच्चों के साहित्य की उपेक्षा बताती है कि बाल-साहित्य की आपूर्ति, गुणवत्ता और उत्साह के मामले में हम कितने विपन्न हैं। यह उपेक्षा दुखद है, जबकि संस्कृति, शिक्षा व विचारों के आदान-प्रदान के मूल में यही उत्पाद और सेवाएं हैं। भारत में बाल-साहित्य का बाजार 700 करोड़ रुपये से कुछ अधिक का है, यानी एक छोटी दवा कंपनी के बराबर। वहीं, हमसे तुलनात्मक रूप से छोटे देश स्पेन और फ्रांस का बाल साहित्य बाजार भी हमसे पांच गुना ज्यादा बड़ा है। अमेरिका, ब्रिटेन, चीन, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी और जापान तो बहुत आगे हैं। अभी सबसे ऊपर अमेरिका का बाल-साहित्य बाजार है, हालांकि इसमें भी गिरावट आई है, बावजूद इसके यह भारत से करीब 30 गुना बड़ा है। अमेरिका में स्कूली उम्र के बच्चे बाल-साहित्य पर औसतन 20,000 रुपये खर्च करते हैं, जबकि भारत में सिर्फ 20 रुपये। हां, यह कह सकते हैं कि वहां समृद्धि अधिक है और जनसंख्या कम, लेकिन इसके अलावा भी बहुत कुछ है, जिनका अपने यहां अभाव है।

भारत में बाल-साहित्य देर से आया है और प्रिंट मीडिया, किताबों की दुकानों और पुस्तकालयों के कम होने के कारण सभी प्रारूपों में इसके लिए जगह कम रही है। यहां बच्चों को कहानी सुनाने की एक समृद्ध और विविधतापूर्ण परंपरा रही है, क्योंकि साहित्य लिखित तौर पर बताने के बजाय दादी-नानी उसे सुनाना पसंद करती हैं। मुमकिन है, इससे भी बाल-साहित्य का धीमा विकास हुआ है। यहां सामग्रियों की कमी नहीं है, दिक्कत इसे ऐसे रूप में पेश करने की है, ताकि इसकी रचनात्मकता किशोरों को आकर्षित कर सके। बच्चों में पढ़ने की प्रतिस्पर्द्धा कराकर, पुरस्कार में किताबें बांटकर, फेलोशिप देकर और बच्चों पर केंद्रित साहित्य-समारोह का आयोजन करके इस तस्वीर को बदला जा सकता है।

भारत में बाल-साहित्य का बाजार 700 करोड़ रुपये से अधिक का है, जबकि हमसे तुलनात्मक रूप से छोटे देश स्पेन और फ्रांस का बाल साहित्य बाजार भारत से पांच गुना ज्यादा बड़ा है।

अपने यहां साहित्य और स्कूली पाठ्य-पुस्तकों की ब्रिकी का अनुपात 5:95 है, जो जापान की तुलना में काफी कम है, जहां दुनिया में सबसे ज्यादा अनुपात 90:10 है। अमेरिका में यह आंकड़ा 70:30 है, कोरिया व ब्रिटेन में 60:40। पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशक और वितरक मानो प्रिंटर बन गए हैं, जो लेखकों को संवारने, उनकी रचना में सुधार करने या बेहतर बनाने की दिशा में कोई काम नहीं करते। साहित्य को नजरंदाज करके सिर्फ पाठ्य-पुस्तकों पर ध्यान देने से बच्चे दुनिया के साथ रचनात्मक रूप से बहुत कम जुड़ पाते हैं। हालांकि, भारत में भाषा की राजनीति भी कोई छोटी समस्या नहीं। 20 साल के 'असर' अध्ययनों में साफ दिखता है कि पांचवीं कक्षा के 50 फीसदी बच्चे दूसरी कक्षा की पठन-सामग्रियों को भी नहीं पढ़ पाते। यहां पढ़ने की समस्या से ही समझ की समस्या उपजी है। वैश्विक स्तर पर सीखने के मानक के रूप में पीआईएसए मूल्यांकन स्थापित है और इसमें हम भाग लेने से झिझकते हैं, जो समझ में भी आता है, क्योंकि 15 साल पहले जब आखिरी बार इसमें हमने हिस्सा लिया था, तो हमारा स्थान 73 देशों में अंतिम से दूसरा था, किर्गिस्तान से ऊपर।

देखा जाए, तो रुचि और जिज्ञासा के साथ जब कोई बच्चा या किशोर पढ़ता है, तो सपने देखने, कल्पना करने और सृजन करने की उसकी क्षमता बढ़ती है, वह अपनी खिड़की से परे दुनिया को भी आत्मसात करता है। यह संचार, भाषा व रोजगार-कौशल को भी बढ़ाता है। जाहिर है, बाल साहित्य की गुणवत्ता और बच्चों का पढ़ना एक-दूसरे से जुड़ा मसला है। जब एक अच्छा करता है, तो दूसरा भी करता है और जब दोनों अच्छा करेंगे, तो भारत के कदम को रोकना नामुमकिन हो जाएगा।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

चमत्कार का वरदान

युगों पहले धरती पर एक ऐसा आदमी रहता था, जो हरेक व्यक्ति से प्यार करता और हर किसी के गुनाहों को माफ कर देता था। एक दिन ईश्वर ने उसके पास अपना दूत भेजा। देवदूत ने उससे कहा, 'तुम्हारी अच्छाइयों से प्रसन्न होकर ईश्वर तुम्हें कोई नायाब इनाम देना चाहते हैं। तुम जो भी अनुग्रह चाहते हो, वह तुम्हें प्रदान किया जाएगा। क्या तुम लोगों के उपचार की शक्ति पाना चाहोगे?'

उस व्यक्ति ने कहा, 'कदापि नहीं। मैं चाहूंगा कि ईश्वर खुद ही यह तय करें कि किसे स्वस्थ करना है।' देवदूत ने कहा, 'मगर तुम्हें कोई चमत्कारिक शक्ति दिए बिना मैं स्वर्ग लौट नहीं सकता। यदि तुम स्वयं कोई शक्ति नहीं चुनोगे, तो मैं जो भी शक्ति तुम्हें दूंगा, तुम उसको स्वीकार करने को बाध्य होगे!'

उस आदमी ने पहले कुछ सोचा और फिर बोला, 'मुझे ऐसी शक्ति दीजिए कि मेरे जरिये जो भी ठीक हो, उसे इस बात का पता न लगे, यहां तक कि खुद मुझे भी नहीं, ताकि मैं व्यर्थ में कोई पाप न करूं।'

स्वर्गदूत ने वरदान दिया कि जो भी तुम्हारी छाया में आएगा, वह स्वस्थ हो जाएगा, मगर यह चमत्कार तभी होगा, जब सूरज की किरणें तुम्हारे चेहरे पर होंगी। इस तरह, वह जहां भी गया, बीमार ठीक हो गए, धरती फिर से उपजाऊ हो गई और दुखी लोगों को फिर से खुशी मिली। अपने चमत्कारों से अनभिज्ञ उस शख्स ने वर्षों तक पृथ्वी की यात्रा की, क्योंकि जब सूर्य की किरणें उसके चेहरे पर दमकतीं, तब छाया हमेशा उस व्यक्ति के पीठ पीछे बनती थी। इस तरह वह अपनी पवित्रता से भिज्ञ हुए बिना जी सका और मर सका।

पाउलो कोएल्हो

आशुतोष राणा | अभिनेता

हिंदी मेरे सपनों की, मेरे अपनों की भाषा है; मेरे राष्ट्र की भाषा है और मेरे व्यवसाय की भाषा है, तो जब वह हमारी आवश्यकता भी है, आदत भी है और सभ्यता-संस्कृति भी है, तो उसके प्रति हमें गरिमा के भाव से भरे ही रहना चाहिए।

अनुलोम-विलोम

मेक इन इंडिया@10

दिखने लगा मेक इन इंडिया का असर

देश के युवाओं के लिए रोजगार जुटाने और स्व-रोजगार के अवसर पैदा करने के लिए ही मोदी सरकार ने दस वर्ष पूर्व 'मेक इन इंडिया' अभियान की शुरुआत की थी। इसकी पहचान अब वैश्विक स्तर पर बन चुकी है। भारत ने मैन्युफैक्चरिंग इनीशिएटिव का एक रोडमैप तैयार किया है, जो हाल के इतिहास में किसी भी देश द्वारा शुरू की गई सबसे बड़ी पहल है। यह सार्वजनिक-निजी भागीदारी की परिवर्तनकारी शक्ति को दर्शाता है। भारत के वैश्विक सहयोगियों को शामिल करने के लिए भी इस सहयोगी मॉडल का विस्तार किया गया है। इसके अलावा, केंद्र सरकार विनिर्माण में तेजी लाने और भारत को वैश्विक विनिर्माण केंद्र के रूप में तैयार करने के लिए देश भर में गलियारों का पंचकोण बना रही है। देश में सौर ऊर्जा की क्षमता साल 2014 में 2,650 मेगावाट थी, जो आज बढ़कर 60,000 मेगावाट से अधिक हो गई है। इसी तरह, पवन ऊर्जा की क्षमता भी 21,132 मेगावाट से बढ़कर 45,000 मेगावाट से अधिक हो गई है। देश में मान्यता प्राप्त स्टार्टअप की संख्या 1.33 लाख हो गई है। कुल मिलाकर, जीडीपी कल्याण मॉडल ने भारत के लिए अद्भुत काम किया है, जिसका लाभ उन लोगों को मिला है, जो लंबे समय से जीवन की मूलभूत सुविधाओं से वंचित थे। साफ है, 'मेक इन इंडिया' का लाभ हमें जीवन के हर क्षेत्र में मिल रहा है। ऐसे में, अब समय आ गया है कि भारत अपनी शक्ति से दुनिया को अवगत कराए। हम अपनी जनशक्ति को पहचानें और दुनिया के सामने कुशल भारत की छवि पेश करें। इसमें 'मेक इन इंडिया' काफी सहायक साबित हो रहा है। सरकार इसे इसी रूप में आगे बढ़ा भी रही है।

युगल किशोर राही, टिप्पणीकार

अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

मेक इन इंडिया अभियान 25 सितंबर, 2014 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा शुरू किया गया था, जिसका उद्देश्य भारत को एक वैश्विक विनिर्माण केंद्र के रूप में स्थापित करना था। इस अभियान के तहत, भारत में हर घंटे एक नया स्टार्टअप शुरू हुआ है, जिससे लगभग 15 लाख नई नौकरियां पैदा हुई हैं। इस पहल ने देश में विदेशी निवेश को आकर्षित करने और घरेलू उद्योग को बढ़ावा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मेक इन इंडिया के माध्यम से भारत ने व्यापार करने की सुगमता में सुधार किया है। बीते एक दशक में मेक इन इंडिया अभियान न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में सहायक रहा है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी इसने भारत को नई पहचान दी है।

वंदना वर्मा, राजनेता

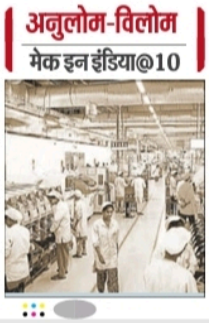

अब भी इस योजना में कई विसंगतियां

कहने वाले कह सकते हैं कि 'मेक इन इंडिया' ने बीते एक दशक में भारतीय उद्योगों को नई दिशा दी है, देश में विनिर्माण क्षेत्र को मजबूती दी है, निवेश आकर्षित किया है और आत्मनिर्भरता की भावना बढ़ाई है, लेकिन सच यही है कि जितनी उम्मीदें इस अभियान से थीं, उनमें से कई अब तक पूरी नहीं हो सकी हैं। यानी, कहना यह चाहिए कि जिस जोर-शोर से इस अभियान की शुरुआत हुई थी, उस हिसाब से यह अपने मकसद में सफल नहीं हो सका है। दावे भले ही कई किए जाते हैं, लेकिन हकीकत की जमीन पर अब भी कई मामलों में हम खाली हाथ हैं। यकीन न हो, तो स्टार्टअप का ही मामला देखें। दावा है कि लाखों स्टार्टअप शुरू हुए, लेकिन उन स्टार्टअप से हमें लाभ कितना मिला और कितने मनमाफिक परिणाम न निकल पाने के कारण बंद कर दिए गए, यह आंकड़ा सार्वजनिक ही नहीं किया जाता।

दरअसल, हम नहीं समझ सके हैं कि भारत के कुशल परंपरागत कारीगरों की उपेक्षा करना अब भी मेक इन इंडिया पर भारी पड़ रहा है। यह जानते हुए भी कि एक जमाने में भारत का परंपरागत शिल्प-कौशल इतना उन्नत था कि इसकी पहचान विश्व गुरु के रूप में होती थी, हम अपने इसी कौशल को नजरंदाज करने में लगे हुए हैं। इसी कारण आज हमारे आस-पास परंपरागत शिल्पकार नहीं है। उद्यमिता को ही यदि हम खत्म कर देंगे, तो लोग उद्यम की ओर भला कैसे उन्मुख होंगे? इससे अच्छा तो यह होता कि उनको बेहतर माहौल दिया जाता, उनकी मुश्किलों को समझने का प्रयास किया जाता और उनकी चुनौतियां खत्म की जातीं। यदि ऐसा हो सकता, तो शिल्पकारों की नई पीढ़ी भी अपने खानदानी पेशे की ओर उन्मुख होती और मेक इन इंडिया अभियान वाकई साकार हो पाता।

आज तो उद्योगों की परिकल्पना ही बदल गई है। मशीनी काम को ही अब उद्यमशीलता माना जाता है। उन विचारों को नवाचार कहा जाता है, जो किसी दूसरे देश में साकार हो चुके हैं। जबकि, सच्चाई यही है कि परंपरागत शिल्पकार प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कालजयी इबारतें लिखने में सक्षम रहे हैं, जिसका फायदा हमारे उद्योग क्षेत्र को मिला करता था। मगर हमने उनसे उनकी कुशलता ही छीन ली। बिना कुशल हाथों से ये विकास में भागीदार बनें भी तो कैसे? जाहिर है, मेक इन इंडिया को विश्व स्तर पर प्रभावशाली बनाने के लिए हमें कई रुकावटों को अब भी पार करना होगा। ऐसी नीति बनानी होगी कि निचले तबके के उद्यमियों को भी इसका फायदा मिले। तभी मेक इन इंडिया को सफल माना जाएगा।

सुष्मिता, टिप्पणीकार